आधुनिक हिन्दी रामकाव्य : दिशाएँ एवं दृष्टियाँ

(हैदराबाद विश्वविद्यालय की पी एच. डी. (हिन्दी) उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध - प्रबन्ध)

1997

प्रस्तुतकर्ता :

ए. वी. ए. पद्मनाभ राव

एम ए. (हिन्दी), एम फिल.

विभागाध्यक्ष :

प्रोफेसर वै. वेंकटरमण राव

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,

हिन्दी विभाग,

हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद–500 046.

निर्देशिका :

प्रोफेसर नूरजहाँ बेगम

एम.ए. (हिन्दी), एम.ए. (संस्कृत)

पी.एच.डी., डी. लिट.,

प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,

हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद–500 046.

Certificate

Certified that the thesis is a bonafide record of A.V.A.Padmanabha Rao in Hindi ,under my guidance and supervision in partial fulfilment of the requirements for the award of the Degree of Dr. Of Philosophy in Hindi during the Year 1994 -97 . This is an original research work entitled - " Adhunik Hindi Ramkavya : Dishayen Evam Drishtiyan " done by him and this Thesis has not formed in whole or part for award of Diploma or Degree here or else where.

Station : Hyderabad

Date :2 \11 \1997

20.11.97

Research Supervisor

This Thesis may be accepted for adjudication .

Station : Hyderabad

Date : 20 \11 \1997

Head & Dept. Of Hindi
University Of Hyderabad
Hyderabad (A.P.)

Prof. & Head, Dept. of Hindi
School of Humanities
University of Hyderabad
HYDERABAD-500 134

2/11/97

DEAN
SCHOOL OF HUMANITIES
University of Hyderabad.
Hyderabad-500 134

DECLARATION

I , A.V.A.Padmanabha Rao, do hereby declare that this Thesis entitled - "Adhunik Hindi Ramkavya : Dishayen Evam Drishtiyan " prepared by me on the basis of my own indipendent research work done under the guidance and supervision of Prof. Noorjahan Begum, Hindi Dept. , University Of Hyderabad , Hyderabad .

Station : Hyderabad *Signature Of The Candidate*

Date 20/11/1997. *(A.V.A. PADMANABHA RAO)*

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

प्राक्कथन 1-5

प्रथम अध्याय 6-40

हिन्दी साहित्य में राम काव्य परम्परा का उद्भव और विकास

1· हिन्दी साहित्य पूर्व राम काव्य परम्परा

2· वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में राम काव्य

3· पौराणिक साहित्य में राम कथा

3·1 विष्णु पुराण

3·2 वायु पुराण

3·3 कूर्म पुराण

3·4 अग्नि पुराण

3·5 लिंग पुराण

3·6 वामनपुराण

3·7 स्कंद पुराण

3·8 पद्मपुराण

3·9 ब्रह्माण्डपुराण

3·10 नृसिंह पुराण

3·11 श्रीमद्देवी भागवत पुराण

3·12 नारदपुराण

3·13 ब्रह्म पुराण

3·14 भागवत पुराण

4· संस्कृत साहित्य में राम काव्य परंपरा

4·1 वाल्मीकि रामायण

पृष्ठ संख्या

4·2 महाभारत की रामकथा
4·3 साम्प्रदायिक रामायणों में राम कथा
4·4 योग वासिष्ठ रामायण
4·5 आध्यात्म रामायण
4·6 अद्भुत रामायण
4·7 आनंद रामायण
4·8 भुशुण्डी रामायण
4·9 महा रामायण
5· वाल्मीकि परवर्ती संस्कृत साहित्य
5·1 रघुवंश
5·2 जानकी हरणम्
5·3 प्रतिमा नाटक
5·4 अभिषेक नाटकम्
5·5 महावीर चरित्र
5·6 उत्तररामचरित्र
5·7 रावणवध
5·8 रावण पाण्डवीय
5·9 अनर्घराघव
5·10 बालरामायण
5·11 आश्चर्य चूडामणि
5·12 प्रसन्न राघव
5·13 हनुमन्नाटक
6. बौद्ध धर्म में राम कथा
7· जैन रामकथा
7·1 विमलसूरि की परम्परा

पृष्ठ संख्या

7·2 गुणभद्राचार्य की परम्परा

8· संस्कृत रचनाएँ

9· अपभ्रंश रचनायें

10· हिन्दी में राम काव्य परंपरा

10·1 रामायन कथा

11· तुलसीदास का राम साहित्य

11·1 रामचरितमानस

11·2 कवितावली

11·3 गीतावली

11·4 जानकी मंगल

11·5 विनय पत्रिका

12· सूर साहित्य में राम कथा

13· रामचन्द्रिका

14· आधुनिक हिन्दी साहित्य में राम कथा

15· भारतेन्दु युग

16· द्विवेदी युग

द्वितीय अध्याय 47-64

आधुनिक राम काव्य की नवीन दृष्टियाँ और दिशाएँ : पृष्ठ भूमि

1· भौगोलिक दृष्टियाँ

1·1 देश प्रेम

2· ऐतिहासिक दृष्टियाँ

3· राजनैतिक दृष्टियाँ

4· सांस्कृतिक दृष्टियाँ

5· सामाजिक दृष्टियाँ

पृष्ठ संख्या

6• नारीपरक दृष्टियाँ
7• आर्थिक दृष्टियाँ
8• धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टियाँ
9• राष्ट्रीय एवं अंतराष्ट्रीयता की दृष्टियाँ

तृतीय अध्याय

आधुनिक राम काव्यों की कथा वस्तु का विश्लेषण 65 - 125

1• रामचरित चिन्तामणि - 1920
2• साकेत - 1932
3• राम की शक्ति पूजा - 1936
4• वैदेही वनवास - 1938
5• साकेत सन्त - 1946
6• अशोक वन - 1951
7• रावण महाकाव्य - 1952
8• कैकेयी - - 1952
9• ऊर्मिला - 1957
10• राम राज्य - 1961
11• भूमिजा - 1961
12• शबरी - 1962
13• जानकी जीवन - 1971
14• संशय की एक रात - 1975
15• प्रवादपर्व - 1975
16• अग्निलीक - 1976
17• शम्बूक - 1977
18• सीता समाधि - 1978

पृष्ठ संख्या

चतुर्थ अध्याय

26 - 185

आधुनिक राम काव्य की सामाजिक दिशाएँ और दृष्टियाँ

1· वर्ण व्यवस्था

1·1 वर्ण व्यवस्था की वस्तुस्थिति

1·2 वर्ण व्यवस्था में व्यावहारिक समानता

1·3 संस्कार की प्रधानता

1·4 वर्ण व्यवस्था का विभाजन

1·5 वर्ण व्यवस्था की अनिवार्यता

1·6 औचित्य के सम्बन्ध में

1·7 वर्ण व्यवस्था की निंदा

1·8 ऊँच-नीच का अन्तर

1·9 युगीन सत्य

1·10 सामाजिक आग्रह

1·11 अस्पृश्यता

2· पारिवारिक सम्बन्ध

2·1 दाम्पत्य जीवन का आदर्श

2·2 पति की सेवा

2·3 पति-पत्नी का विच्छेद

2·4 नारी की मुक्ति

2·5 परिवार के सदस्यों से सम्बन्ध

2·6 पति-पत्नी का सम्बन्ध

2·7 नियति का सम्बन्ध

2·8 परस्पर निर्भरता

2·9 प्रेमिका एवं पत्नी

2·10 अन्य सदस्यों से सम्बन्ध

पृष्ठ संख्या

2·11 पितृ भक्ति

2·12 माता-पिता का सम्बन्ध

2·13 भाईपन की भावना

3· नारी भावना

3·1 परंपरागत रूप

3·2 वैधव्य जीवन

3·3 शक्तिस्वरूपिणी नारी

3·4 शक्ति की पूजा

3·5 सहयोगिनी

3·6 आधुनिक रूप

3·7 समानता की भावना

3·8 स्वतन्त्र नारी

3·9 स्वच्छंद नारी

3·10 समसामयिक नारी

3·11 नारी की उदासीनता

4· मानवतावाद

4·1 व्यक्ति की प्रधानता

4·2 मानव और अतिमानव

4·3 अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता

4·4 व्यष्टि एवं समष्टि

5· समाजवाद की भावना

5·1 लोक मत

5·2 गुलामी के प्रति विद्रोह

5·3 परिवर्तन

5·4 सम्मिलित श्रम

5·5 साक्षरता

पृष्ठ संख्या

5•6 प्रजा का विश्वास

5•7 नवनिर्माण की चाह

5•8 शोषण और पोषण

5•9 गाँव और शहर

पंचम अध्याय 186 – 234

आधुनिक राम काव्य की राजनैतिक दिशाएँ एवं दृष्टियाँ

1• शासक

1•1 प्रजा का महत्व

1•2 राज्य जनता की संपत्ति

1•3 जनता का समर्थन

1•4 शासन दण्ड

2• सत्ता और शासन

2•1 शक्तिशाली राजा

2•2 उत्तराधिकार

2•3 प्रजा का सहयोग

2•4 शासन में कठिनता

2•5 महत्वाकांक्षा एवं राज्यविस्तारवादी नीति

2•6 राजतंत्र में प्रजातंत्र का समर्थन

2•7 शासन तंत्र

3• स्वतन्त्रता

3•1 परतंत्रता से मुक्ति

3•2 तंत्र में स्वेच्छा का भाव

3•3 स्वाधीनता की रक्षा

4• युद्ध एवं हिंसा

4•1 आत्म त्याग की भावना

4•2 आततायी

पृष्ठ संख्या

4·3 शोषण के प्रति युद्ध

5· रामराज्य की भावना

5·1 सुरक्षा की भावना

5·2 राजा का दायित्व

5·3 अहिंसा का मार्ग

5·4 विश्व शांति

5·5 समय के अनुसार परिवर्तन

5·6 पंचायती राज्य

5·7 सर्वोदय

छठवाँ अध्याय 235 - 286

आधुनिक राम काव्य की अन्य दिशाएं एवं दृष्टियाँ

1· धार्मिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि

1·1 धर्म की दुहाई

1·2 अद्वैतवादी दर्शन

1·3 कर्म सिद्धांत

2· आर्थिक दृष्टि

2·1 शोषण

2·2 आर्थिक विषमता

2·3 आर्थिक समानता

2·4 अर्थ प्रगति

3· ऐतिहासिक दृष्टि

3·1 पुराख्यान

3·2 इतिहास एवं पुराख्यान

3·3 राम काव्यों में प्रमुख पात्रों का ऐतिहासिकविकास

3·4 राम

3·5 सीता

3·6 लक्ष्मण

पृष्ठ संख्या

3·7 उर्मिला

3·8 भरत

3·9 माण्डवी

3·10 शबरी

3·11 शम्बूक

3·12 रावण

3·13 कैकेयी

4· भौगोलिक दृष्टि

4·1 उपदेश ग्रहण

4·2 वैज्ञानिकता

4·3 मानवीय भावना

5· राष्ट्रीयता एवं अंतरराष्ट्रीयता की दृष्टियाँ

5·1 देश प्रेम

5·2 अंतराष्ट्रीयता

उपसंहार 287 - 295

सहायक ग्रन्थ सूची 296 - 306

प्राक्कथन

हिन्दी कविता के वर्तमान रूप का बीजारोपण द्विवेदी युग से माना जाता है । आधुनिक हिन्दी काव्य द्विवेदी युग से क्रमशः विकसित होता आ रहा है । फलतः इस आधुनिक युग के अंतर्गत छायावाद, हालावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता तथा समकालीन कविता देख सकते हैं । आधुनिक कवि भी बदलते हुये समय के अनुसार अपनी कलम को चलाते रहे हैं । आधुनिक कवियों ने प्राचीन विषय - वस्तु को दृष्टि में रखकर आधुनिक स्थितियों के अनुकूल . अभिव्यक्त की है । इस में वे कहाँ तक सफल हुए हैं यह विचारणीय है । इस प्रकार के संदर्भ में राम - काव्य परम्परा का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में महत्वपूर्ण योगदान रहा है ।

राम काव्य परम्परा की अक्षुण्णता का मूल उसकी सार्वकालिक युगानुरूपता में निहित है । युगीन परिस्थितियाँ साहित्यकार की दिशा निर्धारित करती रही है । कवियों की सृजनात्मकता, युगीन चिन्तन के वैचारिक आधार से संपृक्त होकर ऐतिहासिक, पौराणिक, राजनैतिक, सामाजिक, परम्परागत कथानकों को नवीन रूप में अभिव्यक्त कर उन्हें एक नवीन अर्थवत्ता प्रदान करती है । राम काव्य की सार्वकालिक युगानुरूपता के कारण प्रत्येक युग का जीवनादर्श उसमें प्रतिध्वनित हो रहा है । आध्यात्मिक एवं सामाजिक जीवन मूल्य दोनों उसमें सम्प्रेषणीय है । वाल्मीकि से लेकर आधुनिक काल तक राम-काव्य की सुदीर्घ परम्परा में भारतीय समाज के विभिन्न

परिवर्तनों का इतिहास विद्यमान है । साहित्य की इस दीर्घतम परम्परा में राजनीतिक, सामाजिक, नैतिक, आध्यात्मिक परिवर्तनों का समावेश होना अवश्यंभावी होगा ।

वैदिक काल में यद्यपि राम कथा का कोई उल्लेख नहीं है किन्तु, कतिपय पात्रों का नामोल्लेख हुआ है । कुशीलवों की मौखिक परम्परा से होती हुई राम कथा ने वाल्मीकि रामायण में अपना एक प्रभावोत्पादक एक सुनिश्चित रूप ग्रहण किया । वाल्मीकि रामायण में राम यदि महामानव के रूप में अवतरित हुए तो मध्यकाल में आकर महामानव के रूप में अवतरित हुए तो मध्यकाल में आकर रामचरितमानस में अवतार का रूप ग्रहण किया । आधुनिक काल में राम-कथा के संदर्भों में केवल राम ही नहीं लगभग अधिकांश पात्रों का आधुनिकीकरण किया गया । राम-कथा के समग्र प्रसंगों को लेकर जितना आधुनिक काल में विचार विमर्श हुआ उतना किसी भी काल में नहीं । राम एवं राम कथा के सभी पात्र प्राचीन- आध्यात्मिकता के किंचित रूप में ही स्थापित हुए उनका अधिकांश रूप आधुनिक मानसिकता से ओत-प्रोत रहा । आधुनिक कवियों ने यद्यपि प्राचीन रामकथा के प्रसंगों के आधार पर ही रचनाएं प्रस्तुत की किन्तु उन्हें युगानुरूप परिवर्तित करके अनेक संभावनाएं उसमें जोड़ी । सीता जैसी देवी ने भी आधुनिक काल में आधुनिक नारी की पीड़ा का आह्वान किया । भरत, उर्मिला, कैकेयी आदि पात्रों का भी युगानुरूप चरित्र देखने को मिला । वस्तुत: रामकथा एक ऐसा विश्व कोश है कि युगों युगों तक उसमें नित नयी सम्भावनाएं जोड़ी जा सकती है ।

रामचरित, भारतीय चेतना का आकर्षण - केन्द्र रहा है । भारतीय जीवन का प्रत्येक क्षेत्र राम के व्यक्तित्व से अनुप्रेरित है । अत: मेरी यह अदम्य इच्छा थी कि शोध के लिए मुझे कोई ऐसा विषय मिले, जो राम-काव्य से

सम्बन्ध रखता हो । परमादरणीय स्वर्गीय डा० सी०एच० रामुलु जी ने "आधुनिक हिन्दी राम काव्य : दिशाएँ एवं दृष्टियाँ" विषय का समर्थन किया एवं विभागीय समिति ने विषय का अनुमोदन किया । इस विषय को सफलता-पूर्वक समाप्त करने में आधुनिक काव्यों में पौराणिक संदर्भों की विशेषज्ञ प्रो० नूरजहाँ बेगम जी के निर्देशन से मेरी यह इच्छा सफल हुई ।

पौराणिक कथा पर आधारित काव्यों की शोध एवं समीक्षाएँ हुई है किन्तु आधुनिक रामकाव्य की दिशाएँ और दृष्टियों पर कोई कार्य नहीं हुआ है । इस क्षेत्र में मैंने एक लघु प्रयास किया है । अध्ययन की सुविधा के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को छः अध्यायों में विभाजित किया गया है । अंत में उपसंहार एवं सहायक ग्रन्थ सूची संलग्न है ।

प्रथम अध्याय में हिन्दी साहित्य में राम काव्य परम्परा का उद्भव और विकास" प्रस्तुत किया गया है । इस अध्याय का उद्देश्य ये है कि आधुनिक राम काव्यों के सम्बन्ध में बताते समय प्राचीन राम काव्य का क्या रूप रहा है स्पष्ट करना है । इसके अंतर्गत हिन्दी साहित्य पूर्व राम काव्य परम्परा का आकलन किया गया है । वाल्मीकि परवर्ती संस्कृत साहित्य, साम्प्रदायिक रामायणों में राम कथा, हिन्दी में राम काव्य परम्परा, तुलसी का राम साहित्य, आधुनिक हिन्दी में राम कथा का परिचय भी इस अध्याय में दिया गया है । इस अध्याय के द्वारा प्राचीन राम काव्य परंपरा का एक क्रमानुगत परिचय होता है ।

द्वितीय अध्याय में आधुनिक काव्य की दृष्टियाँ और दिशाओं का सैद्धान्तिक पक्ष स्पष्ट किया गया है । इन दृष्टियों को स्रोत गत ग्रन्थों के आधार पर स्पष्ट किया गया है । इसके अन्तर्गत ऐतिहासिक, राजनैतिक,

सामाजिक (नारीपरक), सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, आर्थिक, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय दृष्टियाँ हैं। परम्परागत दृष्टियों का अध्ययन किए बिना आधुनिक दृष्टियों को समझना कठिन है अतः यह अध्याय परम्परागत दृष्टियों के परिप्रेक्ष्य को समर्पित है।

तृतीय अध्याय में आधुनिक राम काव्य के प्रतिनिधि काव्यों जैसे रामचरित चिन्तामणि, साकेत, राम की शक्तिपूजा, वैदेही वनवास, साकेत सन्त, अशोक वन, रावण - महाकाव्य, कैकेयी, ऊर्मिला, रामराज्य, शबरी, जानकी जीवन, संशय की एक रात, प्रवादपर्व, अग्निलीक, शम्बूक और सीता समाधि आदि की कथा वस्तु के नवीन संदर्भों का विश्लेषण किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में "आधुनिक राम काव्य की सामाजिक दिशाएं और दृष्टियों पर विचार किया गया है। इस के अंतर्गत वर्ण व्यवस्था, पारिवारिक सम्बन्ध, नारी भावना, मानवतावाद, समाजवाद की भावना आदि प्रसंगों का उल्लेख विश्लेषणात्मक ढंग से किया गया है।

पंचम अध्याय में "आधुनिक राम काव्य की राजनैतिक दिशाएं एवं दृष्टियों" के सम्बन्ध में अध्ययन किया गया है। राजनीति के विभिन्न पक्षों एवं सिद्धांतों के परिप्रेक्ष्य में शासक, स्वतन्त्रता, युद्ध एवं हिंसा, रामराज्य की भावना आदि संदर्भों का आकलन किया गया है।

छठवें अध्याय में "आधुनिक राम काव्य की अन्य दिशाएं एवं दृष्टियां" के अंतर्गत धार्मिक एवं आध्यात्मिक, आर्थिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीयता पर विचार किया गया है।

उपसंहार में विषय की सीमा एवं संभावनाओं को रेखांकित किया गया है । अंत में संदर्भ ग्रन्थ सूची संलग्न है ।

अनुसंधान का कार्य एक समष्टि प्रयास का फल होता है । मेरे इस कार्य को सम्पन्न करने में प्रथमतः श्रेय मेरी गुरु एवं निर्देशिका प्रो॰ श्रीमती नूरजहाँ बेगम जी को ही जाता है, जिन्होंने अपनेनिरन्तर प्रोत्साहन एवं सहायता द्वारा इस कार्य का निर्देशन भार संभाला है । मैं उनके पथ प्रदर्शन के लिए अपना आभार व्यक्त करता हूँ । इस शोध कार्य को पूरा करने में मुझे अपने परिवार के सदस्यों द्वारा जो प्रेरणा मिली है उसमें मुख्यतः मेरे भाई गोपाल राव जी की प्रेरणा सदा मेरे साथ रही है । इसके लिए मैं उनका ऋणी हूँ । इसके साथ ही मैं अपने अन्य गुरुजनों एवं विभागाध्यक्ष प्रो॰ वेंकटरमणा राव जी का भी आभारी हूँ, जिन्होंने इस शोध कार्य में मुझे समय-समय पर सलाह दी है ।

इस शोध कार्य में अनेक विद्वानों के सद् ग्रन्थों से मैंने विचार संचयन किया है, उनके विचारों से लाभान्वित हुआ, उन सभी साहित्यकारों,कवियों, सुचिन्तकों का आभार मानता हूँ ।

इसके अलावा इस शोध के टंकण कार्य को करने के लिए श्री मैलाराम जी को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ । अपने मित्रों में चित्तरंजन रोत्राय, जयचंद्र, भास्कर, अस्मिता और अन्य मित्रों को प्रेरणा एवं सौहार्द के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ ।

दिनांक :

एच॰वी॰एच॰पद्मनाभ राव

प्रथम अध्याय

हिन्दी साहित्य में राम काव्य परम्परा का उद्भव और विकास

1· हिन्दी साहित्य पूर्व राम काव्य परम्परा

2· वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में राम काव्य

3· पौराणिक साहित्य में रामकथा

3·1 विष्णु पुराण

3·2 वायु पुराण

3·3 कूर्म पुराण

3·4 अग्नि पुराण

3·5 लिंग पुराण

3·6 वामन पुराण

3·7 स्कंद पुराण

3·8 पद्मपुराण

3·9 ब्रह्माण्डपुराण

3·10 नृसिंह पुराण

3·11 श्रीमद्देवी भागवत पुराण

3·12 नारद पुराण

3·13 ब्रह्म पुराण

3·14 भागवत पुराण

4· संस्कृत साहित्य में राम काव्य परंपरा

4·1 वाल्मीकि रामायण

4·2 महाभारत की रामकथा

4·3 साम्प्रदायिक रामायणों में राम कथा

4•4 योग वासिष्ठ रामायण

4•5 अध्यात्म रामायण

4•6 अद्भुत रामायण

4•7 आनंद रामायण

4•8 भुशुण्डी रामायण

4•9 महा रामायण

5• वाल्मीकि परवर्ती संस्कृत साहित्य

5•1 रघुवंश

5•2 जानकी हरणम्

5•3 प्रतिमा नाटक

5•4 अभिषेक नाटकम्

5•5 महावीर चरित

5•6 उत्तररामचरित

5•7 रावणवध

5•8 रावण पाण्डवीय

5•9 अनर्घराघव

5•10 बालरामायण

5•11 आश्चर्य चूडामणि

5•12 प्रसन्न राघव

5•13 हनुमन्नाटक

6• बौद्ध धर्म में रामकथा

7• जैन रामकथा

7•1 विमलसूरि की परम्परा

7•2 गुणभद्राचार्य की परम्परा

8• संस्कृत रचनाएं

9• अपभ्रंश रचनायें

10· हिन्दी में राम काव्य परंपरा

10·1 रामायण कथा

11· तुलसीदास का राम साहित्य

11·1 रामचरितमानस

11·2 कवितावली

11·3 गीतावली

11·4 जानकी मंगल

11·5 विनय पत्रिका

12· सूर साहित्य में रामकथा

13· रामचन्द्रिका

14· आधुनिक हिन्दी साहित्य में रामकथा

15· भारतेन्दु युग

16· द्विवेदी युग

--

प्रथम अध्याय

हिन्दी साहित्य में राम काव्य परम्परा का उद्भव और विकास

हिन्दी में राम काव्य परम्परा को स्पष्ट करने के पूर्व भारतीय वाङ्मय में राम काव्य परम्परा पर दृष्टिपात करना अधिक समीचीन होगा । अधिकांश रामकाव्य वाल्मीकि रामायण से ही प्रभावित है । अतः राम काव्य परम्परा के उद्भव एवं विकास को हिन्दी साहित्य पूर्व राम काव्य परम्परा और हिन्दी में राम काव्य परम्परा को किन किन रूपों से गुजरना पड़ा है उस पर संक्षिप्त दृष्टिपात करना अवश्यंभावी होगा ।

1. हिन्दी साहित्य पूर्व राम काव्य परम्परा :

राम कथा का अस्तित्व बहुत-ही प्राचीन है । वेद, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद आदि जितने भी भारतीय साहित्य के प्राचीन ग्रन्थ हैं, उन सब में राम कथा की व्यापकता वर्तमान मानी जाती है । "राम" सारे जगत में रमे राम युगों से सात्विक रसिक जनों को रस - साधना का केन्द्र बने हैं । "राम" हमारे सुपरिचित हैं और राम कथा की एक स्पष्ट परम्परा हमें प्राप्त होती हैं, लेकिन उस क्रम की पहली कड़ी कब तथा कहाँ निर्मित हुई यह काफी कठिन समस्या है । इस विषय को कामिल बुल्के की ये बातें स्पष्ट करती हैं-- "वाल्मीकि के पहले वेदों में रामायण के कुछ पात्रों के नाम मिलते हैं जैसे इक्ष्वाकु दशरथ, सीता, राम आदि । उन पात्रों का न तो पारस्परिक संबंध दिखाया गया है और न जीवन की किसी घटना का वर्णन किया गया है जो रामायण की राम कथा का आधार बनती । अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि राम साहित्य का आधार वेदों में नहीं मिलता ।"[1]

वेदों में भी राम को भगवान के रूप में गाया गया है । उस पर तुलसीदास बार-बार अपने राम के सम्बन्ध में कहते हैं -- वे वेद विदित है और वेद उनका गुण-गान करते हैं । ये निम्नांकित दोहे में स्पष्ट होता है --

"यो वै श्री रामचंद्र : स भगवान यः ब्रह्मा विष्णुरीश्वर :
य : सर्व वेदात्मा भुर्भुव : स्वस्तस्मै वे नमो नमः ॥ "2

आज वेद साहित्य जो उपलब्ध है उसमें राम के जीवन से संबंधित किसी घटना का संकेत प्राप्त नहीं है । आज संपूर्ण वैदिक साहित्य उपलब्ध नहीं । शायद नष्ट हो गया होगा, नहीं तो विदेशियों के द्वारा ले जाया गया होगा । उसमें कहीं रामकथा का कोई अंश रहा होगा । "जो भी हो इतना तो निश्चित है कि तुलसीदास के अनुसार राम वेद - प्रसिद्ध थे यद्यपि उनके जीवन का कोई सूत्र हमें वेदों में आज नहीं मिलता ।"3

वैदिक साहित्य में राम-कथा के लोप के कारण को विद्वानों ने इसके स्रोत के सम्बन्ध में विभिन्न मतों को व्यक्त किया है । डा० न०चि० जोगलेकर के मत में "ऐसा माना जाता है कि राम चरित का महान आख्यान इक्ष्वाकुवंश के राजाओं से सम्बन्ध रखता है जो किसी चली आती हुई मौखिक परम्परा से प्राप्त था...... वाल्मीकि के पूर्व भार्गव महाऋषि ने उनके समान पद्यों की रचना की होगी किन्तु भार्गव ऋषि ने जिन पद्यों की रचना की, वे राम-कथा से सम्बद्ध थे या नहीं यह विषय अंधकाराच्छन्न ही है ।"4 डा० राम प्रकाश अग्रवाल की बातों में -- "वाल्मीकि ने मौखिक कथा को लिखित अथवा विरचित रूप में प्रस्तुत करते समय उस पर अपने आदर्शों की छाप लगाई थी ।"5 मैकडानल "वाल्मीकि के पूर्व राम कथा का अस्तित्व स्वीकार करते हैं ।"6 डा० वेबर का मत है कि राम - कथा का मूल रूप बौद्ध "दशरथ जातक" में सुरक्षित है । डा० वेबर कथा का परवर्ती भाग - सीता हरण

और रावण - युद्ध होमर के काव्य से प्रभावित मानते हैं, जिसमें हैलेन का हरण और यूनानी सेना द्वारा ट्राय (Troy) का अवरोध वर्णित है ।*7 लेकिन यह मत मान्य नहीं है । दिनेशचन्द्रसेन राम-कथा को दो स्वतन्त्र आख्यानों का प्रचलन स्वीकार करते हैं -- प्रथम जो "दशरथ-जातक" में मिलता है और दूसरा रावण-सम्बन्धी है, जो दक्षिण में प्रचलित था । वास्तव में रावण सम्बन्धी आख्यान का यह मत जिस पर आधारित है, उस "लंकावतार सूत्र" का रचनाकाल चौथी शताब्दी सिद्ध हो चुका है और उसमें भी प्रथम अध्याय, जिसमें रावण का प्रसंग है , प्रक्षिप्त माना गया है ।*8 लेकिन उनका मत भी डा० वेबर जैसा नहीं माना जाता है ।

इन उपर्युक्त मतों के आधार पर अब हम यह मान सकते हैं कि वाल्मीकि से पूर्व राम कथा आख्यानों के रूप में लोगों को मालूम हुई होगी । क्रमशः प्रचलित ये आख्यान वाल्मीकि को मिले जिन्होंने बिखरे सूत्रों का संयोजन किया । तुलसी ने भी अवधी भाषा में राम-कथा को एक नया रूप दिया । इस प्रकार अनेक कल्पनाओं और अनुभवों के बावजूद भी राम कथा की ऐतिहासिकता के विरुद्ध दृढ प्रमाण नहीं है । "राम कथा के जिन पात्रों के नाम वेदों में मिलते हैं, वे निश्चित रूप से राम कथा के पात्र हैं या नहीं, इस विषय में सन्देह रखते हुए भी यह मानने में कोई बाधा नहीं दिखाती कि राम-कथा ऐतिहासिक घटना पर आधारित है, अयोध्या, चित्र-कूट, पंचवटी, रामेश्वरम् अनन्त काल से राम कथा से संयुक्त माने जाते रहे हैं । क्या यह इस बात का प्रमाण नहीं है कि दाशरथि राम सचमुच जन्मे थे और उनके चरित्र पर ही वाल्मीकि ने अपनी रामायण बनायी ।*9 इसलिए कोई भी तर्क भारतीयों के इस विश्वास को हटा नहीं सकता कि राम कथा ऐतिहासिक सत्य है, लेकिन कल्पित आख्यान नहीं ।

जिन विद्वानों ने राम-कथा को कल्पित आख्यान माना है वे इस बात पर अचरज हुए कि वाल्मीकि ने अपने रामायण में राम-कथा का पूर्ण विकसित रूप कैसे दिया है । अतः इन विद्वानों ने वाल्मीकि से पूर्व प्रचलित राम-कथा की एक लम्बी परम्परा माना है । इसका समर्थन फादर कामिल बुल्के ने किया है । इस बात के आधार के लिए महाभारत के द्रोण पर्व और शान्ति पर्व के संक्षिप्त राम-चरित और बौद्ध त्रिपिटक को प्रमाण मानते हैं । इसलिए डा० बुल्के ने माना कि रामायण, महाभारत और त्रिपिटक के पूर्व की रचना है तथा राम कथा पर प्राचीनतम उपलब्ध ग्रन्थ है । यह परवर्ती आख्यानों पर रामायण का प्रत्यक्ष नहीं तो अप्रत्यक्ष प्रभाव देखा जा सकता है ।

डा० कामिल बुल्के वाल्मीकि रामायण को 500 ई॰ पू॰ की रचना मानते हैं । उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर यही कह सकते हैं कि वाल्मीकि रामायण द्वारा ही राम-कथा सम्बन्धी प्राप्त प्रथम प्रामाणिक कृति है ।

2॰ वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में राम काव्य :

भारतीय संस्कृति और साहित्य का प्रत्येक अंग वेदोद्भूत आख्यायिकाओं से प्राप्त हुआ है । इस क्रम में परवर्ती साहित्य और दर्शन भी वेदों से जुड़ा हुआ है । कुछ विद्वानों ने राम की प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिए वेदों में राम और राम-कथा को खोजने का प्रयास किये हैं । श्री नीलकण्ठ सूरि ने वेदों की ऋचाओं का एक संकलन "मन्त्र रामायण" नाम से प्रस्तुत किया है । इस में बालकाण्ड से उत्तरकाण्ड तक की रामकथा को वैदिक - मन्त्रों में देखने का प्रयास किया है । सिर्फ भारतीय ही नहीं पाश्चात्य विद्वानों को भी वेदों में "राम" और "रामाख्यान" दोनों का आभास उपलब्ध होता

है। विन्टरनित्ज महोदय का कथन है, वेद में हमें रामकाव्य का कोई चिन्ह प्राप्त नहीं है, लेकिन रामाख्यान का एक आभास तो प्राप्त है। इसके अलावा राम कथा के प्राय: समस्त गायक-कवि राम-कथा को वेद-प्रमाणित मानते हैं। वाल्मीकि स्वयं वेदों के उपबृंहण के लिए रामायण की रचना मानते हैं ---

"वेदोपबृंहणार्थाय तावग्राहयत प्रभु:"[10]

तुलसी ने कहा कि राम के स्वरूप का अभिचित्रण किसी दन्त कथा पर आधारित नहीं है, यह तो स्वयं वेद कहते हैं --

"इति वेद वदन्ति न दन्तकथा"[11]

वैदिक साहित्य में यत्र-तत्र राम कथा के पात्रों का दर्शन मिलता है लेकिन राम कथा रूप कहीं नहीं दृष्टिगोचर होती है।[12] वैदिक साहित्य में ऋग्वेद में इक्ष्वाकु, दशरथ और राम इन तीनों का उल्लेख हुआ है। इस में सीता का भी एक बार उल्लेख हुआ है। वैदिक साहित्य में राम कथा संबंधी आख्यान प्राप्त है या नहीं इस के बारे में फादर कामिल बुल्के ने कहा -- "दशरथ जातक राम कथा का विकृत रूप है और इसके पूर्व राम-कथा प्रचलित हो चुकी थी।"[13] वेदों में राम कथा के जिन पात्रों के नाम मिलते हैं उसे ऐतिहासिक मानने में कोई बाधा नहीं है। अत: कह सकते हैं कि राम-कथा-कथा ऐतिहासिक घटना पर आधारित है। वास्तव में दाशरथि राम सचमुच जन्मे थे और उनके चरित्र पर वाल्मीकि ने रामायण लिखी।[14] अत: वेदों में निर्दिष्ट राम आदि नाम, आविर्भाव और गुणों तथा परवर्ती साहित्य में

उनकी मान्यता के आधार पर यदि यह स्वीकार कर लें कि वेदों में रामकथा के बीज सुरक्षित हैं ।

3. पौराणिक साहित्य में रामकथा :

राम को अवतार मानने वालों में रमापति ने राम को विश्वव्यापक ईश्वर के रूप में वर्णित किया है । पुराण को धार्मिक और सामाजिक इतिहास कहा जा सकता है । पुराणों में रामकथा की गवेषणा करने पर वह संकेत मात्र के रूप में प्राप्त होती है । इस में हम विष्णु या राम से सम्बद्ध पुराणों को देख सकते हैं । महापुराण में अर्थात् हरिवंश पुराण में दो स्थानों पर रामायण का और एक अन्य जगह पर वाल्मीकि के काव्य का अनुदेश अनुदेश उपलब्ध है । विभिन्न पुराणों में रामकथा की प्रस्तुति इस प्रकार है --

3.1 विष्णु पुराण :

रामानुज सम्प्रदाय के प्रवर्तक रामानुजाचार्य है । अपने वेदान्तसूत्र भाष्य में इस पुराण को प्रमाण स्वरूप स्वीकार किया है । इसमें विष्णु को सर्वोच्च माना गया है । विष्णु पुराण में सीता की प्रस्तुति है और राम कथा का संक्षिप्त रूप भी चर्चित है । इसपुराण के चौथे अध्याय में राम-कथा सम्बन्धी एक आधार प्राप्त होता है । यहाँ हरिवंश की अपेक्षा अधिक विवरण है । ताड़का-वध अयोनिजा सीता और राम आदि चारों भाइयों के पुत्रों का चित्रण भी उपलब्ध है ।

3.2 वायु पुराण :

वायु-पुराण की रामकथा विष्णु-पुराण से मिलती है । इसमें राम-

चरित और सीता का चित्रण है । इसके रामकथा से सम्बन्धित अध्याय 28 और 58 में प्रस्तुत है ।

3·3 कूर्म पुराण :

इसमें राम - कथा के राक्षस - वंश - वर्णन और सूर्यवंश के अन्तर्गत रामचरित का चित्रण है । इसमें रावण युद्ध के बाद राम द्वारा शिवलिंग की स्थापना का उल्लेख है । पतिव्रतोपाख्यान में माया सीता के हरण आदि अंश भी द्रष्टव्य है ।

3·4 अग्नि पुराण :

अग्नि ने वशिष्ट मुनि को इसका उपदेश दिया है । इस पुराण में विष्णु के अवतारों का चित्रण है । राम और कृष्ण के वर्णन में इस में रामायण, महाभारत एवं हरिवंश का अनुसरण किया जाना इसकी विशेषता है । इसकी रामकथा वाल्मीकि रामायण की राम कथा का संक्षिप्त ब्यौरा है और राम का मंथरा पर अत्याचार करना वनवास का कारण बताया गया है । राम द्वारा माल्यवद् पर्वत पर वसुमति प्राप्त करने का अंश भी प्रस्तुत है । यह सब अध्याय पाँच से ग्यारह तक में प्राप्त है ।

3·5 लिंग पुराण :

इस पुराण में साकार लिंगोपासना की स्थापना की गई है । इस में इक्ष्वाकुवंश वर्णन के अन्तर्गत रामचरित्र को बहुत ही संक्षिप्त वर्णन किया गया है । यहाँ राम तथा उनके भाइयों को अवतार के रूप में स्वीकार किया गया है

3·6 वामन पुराण :

इस पुराण में विष्णु के वामनावतार और अन्य अवतारों का सामान्य-सा परिचय प्राप्त है । वामन पुराण में रावण से अपमानित वेदवती का सीता के रूप में जन्म लेना भी प्रस्तुत है ।

3·7 स्कंद पुराण :

इस पुराण में रामावतार और रावण वध का वर्णन उपलब्ध है । अयोध्या माहात्म्य में (अध्याय 6) राम के स्वधामगमन की कथा का उल्लेख है । ब्रह्म खण्ड के अन्तर्गत - सेतु माहात्म्य में एक संक्षिप्त राम-कथा है, इस कथा में सेतुबन्ध का वर्णन द्वितीय अध्याय में है । सेतु बन्ध के पूर्व राम-द्वारा शिव-लिंग की स्थापना का वर्णन सातवाँ अध्याय में सीता की अग्नि-परीक्षा और अग्नि द्वारा सीता के सतीत्व की प्रशंसा का वर्णन बाईसवाँ अध्याय में प्राप्त है । धर्मारण्य खण्ड के अंतर्गत अध्याय 60-31 में 89 श्लोकों के अन्तर्गत राम कथा दी गयी है । स्कन्द पुराण के अवन्ती खण्ड में हनुमान जी से बढ़कर जगत् में कोई भी प्राणी नहीं होने को विषय प्रस्तुत किया गया है --

"पराक्रमोत्साहमतिप्रतापैः
सौशील्यमाधुर्यनयादिकेश्च ।
गाम्भीर्य चातुर्य सुवीर्यधैर्य -
र्हनुमतः कोऽप्यधिकोऽस्ति लोके ॥"[15]

उपर्युक्त श्लोक कुछ परिवर्तनों के साथ वाल्मीकिय रामायण[16] में भी देखा जा सकता है ।

3·8 पद्म पुराण :

इस पुराण के पातालखण्ड में राम कथा की बहुत-सी सामग्री प्राप्त होती है । उत्तर खण्ड में तो राम कथा का पूरा वर्णन उपलब्ध है । श्रीराम का चरित्र करोड़ों श्लोकों में विस्तृत है, जिनकी जैसी बुद्धि है, वे उसका वर्णन करते हैं कि -

रावणारि कथायाश्च महतो माहात्म्यः किमाम ।
यत्र ब्रह्मादयो देवा मोहिता न विदन्त्यपि ॥
चरितं रघुनाथस्य शतकोटि प्रविस्तरम् ।
ये यथा वै यादृशी बुद्धिस्ते वदन्त्येव तादृशम् ॥[17]

पद्मपुराण में वर्णित राम-कथा की विशेषताएँ इस प्रकार है कि धोबी के कहने से सीता - परित्याग का वर्णन अध्याय 55-58 में, कुश एवं लव की उत्पत्ति और उनका राम की सेना से युद्ध का वर्णन अध्याय 59-66 में, राम-सीता का मिलन अध्याय 67-78 में, सृष्टि खण्ड में शम्बूक वध आदि का वर्णन उपलब्ध होता है ।

3·9 ब्रह्माण्डपुराण :

इस पुराण के उत्तर-खण्ड "अध्यात्म रामायण" में रामकथा का वर्णन द्रष्टव्य है । यह वाल्मीकि रामायण की ही भांति अत्यन्त महत्वपूर्ण है । इसी रामायण का अनुवर्तन प्रायः गोस्वामी तुलसीदास ने किया है । इस में प्रस्तुत राम कथा उमा-महेश्वर-संवाद के रूप में की गयी है । इसकी विशेषता है कि राम को परब्रह्म माना गया ।

3·10 नृसिंह पुराण :

इस पुराण में छः अध्यायों में थोड़े परिवर्तन के साथ वाल्मीकि रामायण की संक्षिप्त राम-कथा का वर्णन अध्याय 47-52 में प्राप्त होता है । इस में राम नारायण के पूर्ण अवतार एवं लक्ष्मण शेष के अवतार के रूप में स्वीकार किये गये हैं । सीता स्वयंवर के पश्चात अन्य क्षत्रिय राजाओं का राम पर आक्रमण का अंश भी वर्णित है । सीता-हरण के समय रावण के सीता को स्पर्श करने का दृश्य भी चित्रित किया गया है ।

3·11 श्रीमद्देवी भागवत पुराण :

इस के नवरात्र माहात्म्य के अन्तर्गत रामायण से मिलती हुई राम कथा का उल्लेख हुआ है । इस में राम ने शूर्पणखा को विरूप किया है । सीताहरण के बाद नारद के आदेशानुसार राम-रावण पर विजय पाने के निमित्त नवरात्रोपवास करते हैं । अन्त में "सिंहारूढ़ा देवी भगवती"राम को दर्शन देकर रावण पर विजय पाने की इच्छा प्रकट करती है । राम विजय की सिद्धि प्राप्त करते हैं ।

3·12 नारदपुराण :

रामचरित के बाद [बालकाण्ड से युद्धकांड तक] द्रविड़ा देश में ब्राह्मणों से बाँधे हुए विभीषण को रामद्वारा मुक्ति की कथा अध्याय 79 में कही गयी है । उत्तरकाण्ड में वाल्मीकि रामायण की संक्षिप्त राम कथा दी गयी है । पचहत्तरवें अध्याय में राम और लक्ष्मणादि नारायण - संकर्षणादि के अवतार को दिखाया गया है ।

3·13 ब्रह्म पुराण :

इस में राम-कथा "हरिवंश" के 41वें अध्याय की राम कथा इसके अध्याय 13वें में ज्यों-की-त्यों प्राप्त हो जाती है । रावण चरित्र का विवरण अध्याय 176 में मिलता है और रावण की तपस्या वर्णन के बाद एक संक्षिप्त रामकथा का उल्लेख प्राप्त होता है ।

3·14 भागवत पुराण :

इसमें भी राम कथा सामग्री प्राप्त होती है । इस में सीता को लक्ष्मी और राम को विष्णु का अवतार-सा दर्शाया गया है । सीता स्वयंवर और उनके त्याग की भी कथा का उल्लेख प्राप्त है । इस पुराण में राम कथा का वर्णन नौवें स्कन्द , दसवें, ग्यारहवें अध्याय में वर्णित की गई है ।

4· संस्कृत साहित्य में राम काव्य परंपरा :

संस्कृत काव्य परम्परा अति प्राचीन है । भारतीय वाङ्मय में वैदिक साहित्य को प्रमुख स्थान है । मैक्समूलर का मत है कि "वीरों और देवताओं की प्रशंसा में गाये जाने वाले गीत भारत और अन्य राष्ट्रों में बहुत प्राचीनकाल से ही प्रसिद्ध थे । इसलिए महाकाव्य के रूपानुसंधान के लिए वीर-गीतों की खोज रामायण और महाभारत में ही नहीं अपितु वेदों में करनी चाहिए । अनेक वैदिक गीतों को महाकाव्य कहा जा सकता है ।"[16] पौराणिक काव्य परंपरा के आदि ग्रन्थ रामायण का उपजीव्य काव्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है । पौराणिक वाङ्मय के विषयों की एक सुदीर्घ परम्परा संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में प्राप्त होती है ।

4·1 वाल्मीकि रामायण :

वाल्मीकि रामायण का उपलब्ध कलेवर बहुत बड़ा है । वाल्मीकि को राम का समकालीन माना जाता है । विद्वानों ने प्रचलित रामायण को पहली - दूसरी शताब्दी की रचना माना है । वाल्मीकि को आदि कवि होने का गौरव प्राप्त है । वाल्मीकि ने राम को एक महापुरुष के रूप में प्रस्तुत किया है, क्योंकि उस समय अवतारवाद की धारणा पुष्ट नहीं हुई थी । राम को अनेक प्रसंगों पर विष्णु या इन्द्र के उपमानों से अवश्य चित्रित किया है । शायद यही उस समय के इष्ट देवता होंगे ।

वाल्मीकि के राम को राज्य से विरक्ति नहीं है । वे आदर्श की रक्षा के लिए हावन जाते हैं । वाल्मीकीय रामकथा की दूसरी विशेषता यह है कि उसमें घटनाओं का प्रकृत रूप वर्तमान है । अलौकिकता उसमें कहीं भी नहीं है । सभी पात्र लौकिकता के धरातल पर ही सोचते हैं । इस में न तो राम अपनी अलौकिकता का व्याख्यान करते है और न दूसरे पात्र ही इसके प्रति सचेष्ट हैं । इस संदर्भ में मंजुला सहदेव की उक्ति उल्लेखनीय है --

"वाल्मीकि ने सब ओर से समाज को नैतिक नियमों में नियमित कर दिया है । अपने पात्रों द्वारा नैतिकता के पालन एवं भंग करने के परिणामों को भी घोषित कर दिया है ।"[19]

वाल्मीकि रामायण में महाकाव्य की व्यापकता तथा गरिमा दोनों का अद्वितीय निर्वाह हुआ है । इसमें कोई संदेह नहीं है कि कवित्व की दृष्टि से वाल्मीकि रामायण अत्यन्त श्रेष्ट रचना है । कई शताब्दियों के बाद भी रामायण भारतीय संस्कृति का मूलाधार बनी रही है ।

4·2 महाभारत की रामकथा :

विद्वानों ने महाभारत के प्राचीनतम रूप और वर्तमान महाभारत के रचनाकाल के बीच के समय को रामायण की रचना काल माना है । प्रस्तुत महाभारत से रामायण प्राचीन है । इस महाभारत में रामकथा अरण्यक पर्व, द्रोण पर्व, शान्ति पर्व और रामोपाख्यान में स्फुट रूप में मिलती है ।

महाभारत के रामोपाख्यान में मार्कण्डेय ऋषि दुःखी युधिष्ठिर को धैर्य बंधाने के लिए प्राचीन नरेशों की कथायें सुनाते हैं । इन्हीं नरेशों में राम कथा का उल्लेख है । युधिष्ठिर के पूर्ण चरित्र सुनने की जिज्ञासा पर ऋषि उनका रामोपाख्यान सुनाते हैं । ऋषि अपनी रुचि और आवश्यकता के अनुसार प्रसंगों को ही युधिष्ठिर को सुनाते हैं इसलिए अनेक प्रसंग इस आख्यान में नहीं आ सके हैं। शुरू में राम और उनके भ्राताओं का जीवन इतिहास प्रस्तुत किया गया है । वास्तविक कथा दशरथ की राम को युवराज बनाने की इच्छा से शुरू होती है । अयोध्या और अरण्य काण्डों की कथा बहुत संक्षेप में है । इस प्रकार कुछ परिवर्तनों के साथ यह कथानक राम के अयोध्या में राज्याभिषेक के साथ समाप्त होती है ।

4·3 साम्प्रदायिक रामायणों में राम कथा :

राम में अवतार भावना और राम भक्ति का विकास साम्प्रदायिक रामायणों में हुआ । राम कथा को साम्प्रदायिकता की ओर अग्रसर किया गया है । राम के नायकत्व को स्वीकार कर उनके चरित्र में अपने सम्प्रदाय के अनुसार नवक आविर्भूत की गई है । इनका महत्त्व धार्मिक दिशासे ही ज्यादा है । साम्प्रदायिक रामायणों में अनेक नाम सामने आते हैं । इसमें प्रमुख रामायणों का संक्षिप्त रूप में विवरण इस प्रकार है —

4·4 योग वासिष्ठ रामायण :

यह कृति आठवीं शताब्दी या इसके पूर्व की मानी जाती है । इसका प्रारंभ देवराज इन्द्र के द्वारा महर्षि वाल्मीकि के पास राजा अरिष्टनेमि के भेजे जाने के प्रसंग से है । इसी प्रसंग में राम का वैराग्य और राम वशिष्ठ का संवाद भी द्रष्टव्य है । इस प्रकार छः प्रकरणों को योगवासिष्ठ रामायण वाल्मीकि अरिष्टनेमि को सुनाते हैं । ये वैराग्य प्रकरण, मुमुक्षु - व्यवहार प्रकरण, उत्पत्ति प्रकरण, स्थिति प्रकरण, उपशम प्रकरण और निर्वाण प्रकरण है । इस में राम को विष्णु के अवतार के रूप में लिया गया है । अन्तिम निर्वाण प्रकरण में काग भुशुण्डि के अजन्म और उसके सुमेरु पर निवास की कथा है । लेकिन यहाँ राम तथा काग भुशुण्डि में विशेष सम्बन्ध निर्धारित नहीं है । साथ ही इस में राम कथा का सिंहावलोकन भी किया गया है । राम के महा-विष्णुत्व का प्रतिपादन करते हुए कहा कि राम ही पूर्णब्रह्म , अविनाशी, अजन्मा, शुद्ध ज्ञात रूप है --

स खलु परमयोगी विश्ववन्द्यः सुरेशो जननमरण हीनः शुद्धबोधस्वभावः ।
सकल गुणनिधानं सन्निधानं रमायाखिजगदुदरवानुग्रहाण्यमधोशः ॥[20]

4·5 अध्यात्म रामायण :

इसकी रचना प्रायः चौदहवीं - पन्द्रहवी शताब्दी की है । साम्प्रदायिक रामायणों में अध्यात्म रामायण को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है । इसमें भी राम को विष्णु का अवतार माना गया है और राम कथा वैष्णव मत के प्रतिपादन के लिए कही गई है । अध्यात्म रामायण में राम के सम्पूर्ण मानव चरित को आभास चेतन मानकर परात्पर-ब्रह्म में उसका अध्यारोप देखा जाता है । राम का मानव रूप धारण करके अविकारी और परिणामहीन परमात्मा मनुष्यों के समान व्यवहार करते हैं, लेकिन वास्तव में

वह कुछ भी नहीं करते हैं ।[21] इस के अनुसार राम का मानव चरित जब-जब उभर कर सामने आता है, कवि उसका तिरोधान राम के परात्पर-रूप में कर देता है । राम तो स्वयं अपने परब्रह्म रूप की घोषणा नहीं करते, लेकिन उनसे मिलने वाला प्रत्येक ज्ञानी व्यक्ति उनके परात्पर - रूप को दर्शाते हैं । कौशल्या तक राम के परात्पर - रूप को पहचानती है । अतः राम के तीन रूपों का चित्र अध्यात्म रामायण में देखा जाता है । ये अयोध्यावासी राजकुमार राम, वनवासी राम, वैराग्यासक्त पूर्ण - पुरूष राम है । सम्पूर्ण अध्यात्म रामायण में साध्य भी राम हैं, साधन भी राम है और साधक भी राम ही है । इसप्रकार पूर्ण शांकर- अद्वैत अध्यात्म रामायण में राम के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है ।[22]

इस में राम देवत्व से सबसे ऊँचे शिखर पर विराजमान है । आध्यात्म रामायण के लेखक के विषय में भी प्रमाण नहीं है । कुछ विद्वान इसे ब्रह्माण्ड पुराण का एक अंग मानते हैं । वे कहते हैं कि इसका रचियता कोई भी हो वह महान दार्शनिक चिंतक रहा होगा, इस में सन्देह नहीं ।

इस ग्रंथ का राम कथा की दृष्टि से महत्व नहीं है, लेकिन राम भक्ति की दृष्टि से इसका महत्व अधिक है । इस ग्रन्थ का उद्देश्य है कि वेदान्त के दर्शन के आधार पर राम भक्ति का प्रतिपादन करना ही है । कथा की दृष्टि से भी सारी कथा संवाद रूप में है । यह संवाद पार्वती - शंकर के बीच का है । शंकरको यह कथा स्वयं राम ने सुनाई है ।[23]

4·6 अद्भुत रामायण :

यह आध्यात्मिक रामायण की परवर्ती रचना है । यहाँ भी कथा संवाद रूप में चित्रित है । इसमें सीता जन्म विषयक एक नई कथा मिलती है । नारद ने स्वर्ग में अपमानित किए जाने पर लक्ष्मी को शाप दिया था । अतः

वे सीता रूप में मंदोदरी की पुत्री बनकर जन्म ली । परशुराम प्रसंग से लेकर राम के अयोध्या लौटने का वर्णन वाल्मीकि के अनुसार है । राम के विराट रूप को दर्शाने का भी वर्णन है । सीता का देवी का रूप धारण कर सहस्र स्कन्ध रावण का वध करना ।7,2। वें सर्ग में उल्लेख किया गया है ।

4·7 आनंद रामायण :

इसमें अनेक प्रसंगों में अध्यात्म रामायण के उद्धरण और कई विचित्र कथाओं का समावेश भी प्राप्त है । इसमें भी कथा संवाद रूप में वर्णित है । यह संवाद शिव और पार्वती के बीच है । इसके साथ रामदास - विष्णुदास संवाद भी मिलता है । इसमें रावण द्वारा कौशल्याहरण का भी सन्दर्भ है और हनुमान के पायस से उत्पन्न होने का उल्लेख है । सीता यहाँ अग्निजा है । विवाह काण्ड में चारों भाइयों के पुत्रों के विवाहों का भी चित्रण प्राप्त होता है । राज्य काण्ड पर कृष्ण लीला का प्रभाव है । रावण को सीता द्वारा मारा शाक्त सम्प्रदाय का बताया गया है । इस प्रकार इस रामायण में राम के उत्तरार्ध जीवन की कथा को अधिक विस्तार और महत्व प्रदान किया गया है ।

4·8 भुशुण्डी रामायण :

डा0 कामिल बुल्के ने इसे मूल रामायण और आदि रामायण से अभिन्न कहा है । इसमें चार खण्ड हैं । ये पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर है । इसका पूर्ण विवरण अप्राप्त रहा है ।

4·9 महा रामायण :

इस कृति की रचना श्री जानकी जीवनदास ने सं· 1985 वि· में की थी । इसमें राम को पूर्ण ब्रह्म माना गया है और सखी भाव से राम की

उपासना की गई है । इसके अलावा राम की रास-क्रीड़ा आदि का वर्णन द्रष्टव्य है ।

वेदान्त रामायण में परशुराम का चरित्र वर्णित प्राप्त होता है । गीतगोविंद और मेघदूत के आधार पर श्रृंगार परक रचनायें भी राम से संबंधित है, जैसे राम गीत गोविंद, गीत राघव, जानकी गीत, हंसदूत [हंस संदेश], भ्रमरदूत, कोकिल सन्देश, कपिदूत, चन्द्रदूत आदि है ।

5. वाल्मीकि परवर्ती संस्कृत साहित्य :

वाल्मीकि की रामायण के बाद राम भक्त सम्प्रदाय के कारण एक और रामकथाधार्मिक साहित्य में चली गई और दूसरी ओर राम को सामान्य नायक के समान स्वीकार किया गया जिससे लौकिक साहित्य में रामकथा ने स्थान पाया । इस प्रकार राम का महत्त्व धीरे-धीरे आगे बढ़ता गया । राम मानवीय स्तर से ऊपर उठते गये । फलतः मानव राम पहले देव फिर देवाधिदेव विष्णु के अवतार और आखिर स्वयं विष्णु का दर्जा दिया । अतः साकेतकार श्री मैथिलीशरण गुप्त जी ने कहा -- "राम तुम्हारा चरित स्वयम् ही काव्य है, कोई कवि बन जाये सहज सम्भाव्य है ।"[24] अतः हर कवि ने राम - काव्य को अपना विषय के रूप में स्वीकार किये हैं । जयदेव ने "कवीनां को दोषः" कहकर इसी ओर संकेत किया है । महादेवीवर्मा भी रामकथा की महानता को मानती है । महादेवी कहती है कि "राम की कथा हर युग में कविता का विषय बनती रही है । परन्तु युग-सत्य के साथ उसे जो रूप मिलता रहा है वह नवीन है । सम्भवतः यह चिरनूतनता ही रामकथा को आज भी आकर्षक बनाये है ।"[25]

5·1 रघुवंश :

वाल्मीकि के बाद जिस नाम को आदर दिया जाता है वह कालिदास का "रघुवंश" ही है । रघुवंश एक महाकाव्य है । संपूर्ण रघुवंश का वर्णन 19 सर्गों में वर्णन किया गया है । इस में पांच सर्गों में राम कथा को स्थान मिला है । दस से पन्द्रहवें सर्ग तक राम कथा का वर्णन मिलता है ।

कालिदास के समय तक वाल्मीकि रामायण में प्रक्षिप्त अंश प्राप्त हुए थे । अतः राम को स्पष्ट विष्णु के अवतार के रूप में दिखाया गया है । इसके साथ शिव-भक्ति का प्रचार भी बढ़ा प्रतीत होता है । क्योंकि यहाँ पर रावण शिव - भक्त है । इस कृति के ग्यारहवें सर्ग के आरम्भ में ही यज्ञ-रक्षा के लिए राम - लक्ष्मण विश्वामित्र के द्वारा राजा से मांगे जाने पर उनके साथ जाते हैं, ताड़का वध, विश्वामित्र द्वारा मंत्र सहित राम को दिव्यास्त्र देना, मारीच का दमन, सीता स्वयंवर में जाना, धनुर्भंग, चारों भाइयों का विवाह, परशुराम का गर्वभंग और अयोध्या लौटना आदि वर्णित है । बारहवें सर्ग में राम - वनवास से लेकर सीता अग्नि-परीक्षा तक की सभी घटनाओं को चित्रण मिलता है ।

तेरहवें, चौदहवें में राम अयोध्या लौटकर पुरवासियों, परिवार के व्यक्तियों और भरत से भेंट करना, राम का राज्याभिषेक, राम सीता को त्यागने का निश्चय कर उन्हें लक्ष्मण के साथ वन में भेजना, राम अश्वमेध यज्ञ करना आदि प्रसंग है । पन्द्रहवें में शत्रुघ्न लवणासुर को मारने के लिए जाते समय वाल्मीकि से भेंट करना, बाद में लवणासुर को मारना, राम शम्बूक का वध करना, राम वाल्मीकि के आश्रम में जाकर सीता को ग्रहण करने के लिए तैयार हो जाते हैं, सीता पवित्रता के प्रमाण के रूप में पृथ्वी की गोद में समा जाना आदि का वर्णन मिलता है । कालिदास ने ही राम को सर्वप्रथम मानवीय

धरातल पर सामाजिक अवरोधों और व्यक्तिगत प्रेम के द्वंद्वों में संघर्ष-रत चित्रित किया है ।

5·2 जानकी हरण :

इसके कवि कुमारदास है । इसमें 20 सर्ग हैं । इस ग्रन्थ का मध्य भाग अप्राप्य है । कुमारदास कालिदास के समकालीन थे । उन्होंने रघुवंश को प्रतिस्पर्धा में जानकी हरण की रचना की । इस का कथानक भी वाल्मीकि रामायण से साम्य रखता है । इस में भी राम विश्वामित्र के साथ जाते हैं लेकिन यहाँ विश्वामित्र राम-लक्ष्मण को दशरथ से नहीं मांगते हैं । दशरथ ही स्वयं अपने पुत्रों को विश्वामित्र के साथ भेजने का प्रस्ताव रखते हैं । दशरथ राम को क्षत्रिय धर्म का उपदेश देकर विश्वामित्र के साथ भेजते हैं । इसमें भी परशुराम मार्ग में मिलते हैं लेकिन राम की परीक्षा के लिए विष्णु धनुष को प्रस्तुत करते हैं । यह महाकाव्य राम के राज्याभिषेक के साथ समाप्त होता है । इसमें सीता निर्वासन और लव-कुश का सन्दर्भ नहीं मिलता है । शृंगार को प्रधानता दी गई है । दशरथ और उनकी पत्नियों के बीच शृंगार विवाह के पूर्व राम-सीता का पूर्वानुराग, विवाह के पश्चात राम-सीता का सम्भोग लंका में राक्षसियों की केलि आदि का वर्णन प्राप्त है ।

5·3 प्रतिमा नाटक :

रामकथा की अवतारणा सर्वप्रथम महाकवि भास ने अपने प्रतिमा नाटक में प्रस्तुत किया है । इसमें वाल्मीकि के ही जैसा राम मनुष्य अधिक है, ईश्वरावतार कम महत्त्व है । इस नाटक में राम-राज्याभिषेक की तैयारी से लेकर वनवास के बाद राम को भरत राज्य सौंपते तक का वृत्त है । राम को एक राजकुमार के ही रूप में देखा गया है । इस में भास ने राम और सीता से अधिक भरत और कैकेयी का चित्रण किया है । इसके अलावा अनेक नवीनताएं प्राप्त हैं ।

5.4 अभिषेक नाटकम् :

यह भास का राम कथासम्बन्धी दूसरा नाटक है । इसमें सीता-हरण के बाद से प्रारंभ होकर राम के राज्याभिषेक तक की कथा का विषय वस्तु है । भास ने वस्तु वर्णन को अधिक स्थान दिया है, लेकिन कोई विशिष्ठता दिखा नहीं पाया है । राम को विष्णु के प्रतीक बताया गया है ।

5.5 महावीर चरित् :

भवभूति से विरचित इस नाटक का आधार श्री वाल्मीकि रामायण है । लेकिन इस में युद्ध काण्ड तक की कथा ग्रहण की गई है । इसका प्रारंभ विश्वामित्र के आश्रम में यज्ञ की रक्षा के निमित्त राम और लक्ष्मण उपस्थित होने से है और लंका से राम के अयोध्या लौटने पर समाप्त होता है । राम के निर्दोष, उदात्त और धीर भावपूर्ण चरित्र को उपस्थित करने का प्रयास किया गया है । राजा जनक की उत्कंठा देखकर विश्वामित्र शिव के धनुष को आश्रम में मंगवा लेते हैं और वहीं राम धनुष-भंग करते हैं । रावण सीता को पाने का इच्छा प्रकट किया गया है, अतः राजा जनक के पास रावण दूत को भेजता है । यह इस कृति का बीजारोपण बन गया है ।

इस में राम का महावीर के रूप में चित्रण हुआ है । रावण सीता को पाने में विफल होने के पश्चात राम से बदला लेने का निर्णय लेता है । विश्वामित्र आश्रम में ही राम-लक्ष्मण और सीता-उर्मिला का मिलन शूर्पणखा का षड्यंत्र, बालि-वध आदि का चित्रण प्रस्तुत है ।

5.6 उत्तररामचरित् :

यह भवभूमि की कृति है । इसका मूल वाल्मीकि रामायण का उत्तर-

काण्ड है । इसमें राम राज्याभिषेक के बाद राम-राज्य, राम और सीता का वनवास, वर्णाश्रम - धर्म की रक्षा, अश्वमेध-यज्ञ और उसमें सपत्नीक के साथ करने के विधान को आदर किये जाने का वर्णन है । इस प्रकार राम के इसी जीवन का चित्रण मूल कथा के आधुनिक रूप को प्रदान कर दिया गया है । इसमें सीता परित्याग का प्रसंग बहुत ही करुणाजनक है । भवभूति राम के व्यक्तित्व के कोमल अंशों को उजागर करने में सफल हुआ है । अतः यहाँ राम राज-मर्यादा से बंधकर भी सामान्य मानव जैसी ही सुख-दुख का अनुभव करते हैं ।

5•7 रावण वध :

इसमें भट्टि रचित भट्टि काव्य का रावण वध हमारे उपर्युक्त कथन का प्रमाण है । इस प्रवृत्ति के पूर्ण रूप का निदर्शन यहाँ द्रष्टव्य है । कवि ने राक्षस -राक्षसियों की संयोग क्रीड़ाओं का भी वर्णन किया है । इस प्रकार एक नयी दिशा की ओर मुड़ते हुए साहित्य का उदाहरण हमें इस काव्य में प्राप्त होता है ।

5•8 राघव पाण्डवीय :

राघव पाण्डवीय के रचियता कविराज सूरि हैं । यह एक श्लेष काव्य है । इसमें कवि ने प्रारंभ से लेकर अन्त तक रामायण और महाभारत दोनों कथानकों का श्लेष की सहायता से एक ही शब्दावली में स्पष्ट किया है । दशरथ और पाण्डु के पुत्रों की उत्पत्ति का भी मिश्रित चित्रण हुआ है । विवाह के बाद राम की पितृ-भक्ति को युधिष्ठरादिर की पितृत्व भक्ति से मिलाकर वर्णन प्रस्तुत किया गया है । रावण के आगमन को दुर्योधन का पाण्डवों के निवास-वन के आगमन से मिलाया गया है । इन चित्र काव्यों

के कवियों के अलावा भी अन्य कवि थे जिन्होंने पाण्डित्य प्रदर्शन के लिये रचना की । इन कवियों की रचनाओं का संक्षिप्त परिचय निम्नांकित है --

5.9 अनर्घराघव :

काव्य शास्त्र के विद्वान "मुरारि" की यह कृति कवित्व की प्रौढ़ता और व्याकरण विषय की दृष्टि से महत्वपूर्ण कृति है । विश्वामित्र के आगमन से लेकर राम-राज्याभिषेक तक की कथा इसमें चित्रित की गयी है । इस पर "महावीर चरित" का प्रभाव है । इस में राम पर लगे दोष का परिहार कर दिया गया है कि वे सुग्रीव के कारण अकारण ही बालि से युद्ध एवं उसका वध करते हैं ।

5.10 बालरामायण :

इसके कवि राजशेखर हैं । राजशेखर का कथानक ज्यादातर भवभूति और मुरारि से प्राप्त है । उसमें लेखक ने कुछ परिवर्तन करके प्रस्तुत किया है । शूर्पणखा, सहयोगिनी और रावण के साथ दशरथ एवं कैकेयी की अनुपस्थिति में उनका मायामय रूप धारण कर राम को वनवास की आज्ञा देती है । राम को वनवास का आदेश देने के आरोप से दशरथ एवं उस षड्यन्त्र की रचना में कैकेयी का होना आदि प्रसंगों का सृजन कवि ने किया है । लेकिन यह सृजन असंगत लगता है । सीता स्वयंवर में रावण स्वयं हाजिर होता है लेकिन शंकर का धनुष चढ़ाने का उसे साहस नहीं होता । इसलिए राम को अनेक संकटों का भय दिखाकर अपने शत्रु के रूप में प्रकट होता है । इस में कवि ने नई भावनाओं को जागृत की है । लेकिन उनमें काव्योचित गरिमा के स्थान पर हल्कापन है ।

5·11 आश्चर्य चूड़ामणि :

इसके कवि शक्तिभद्र हैं । वे सीता-हरण के प्रसंग से लेकर सीता की अग्नि - परीक्षा तक की कथा को अपने इस नाटक में लिया है । राम-लक्ष्मण को वन भेज कर सीता को कुटी में अकेली छोड़ने का माया जाल मारीच ने रचा है । तब रावण को राम का वेष - धारण कर पर्णकुटी पर पहुँचना और सारथी लक्ष्मण के रूप में चित्रण किया गया है । सारथी कहता है कि अयोध्या में भरत शत्रुओं के कुचक्र में है वहाँ जाना अनिवार्य है कहकर राम रूपधारी रावण सीता को धोखे से ले जाता है । बाद में शूर्पणखा सीता का रूप धारण कर कुटी में बैठी रहती है, लेकिन चूड़ामणि के द्वारा शूर्पणखा का कपट प्रकट हो जाता है । अतः आश्चर्य जनक चूड़ामणि के कारण ही इस नाटक का नाम "आश्चर्य चूड़ामणि" शीर्षक दिया गया है ।

5·12 प्रसन्न राघव :

इसके कवि जयदेव हैं । इसकी रचना बारहवीं या तेरहवीं शताब्दी में हुई । इस नाटक में सात अंक हैं । इसकी कथा - सीता स्वयंवर से राम - प्रत्यागमन तक की कथा है । इसमें राम और सीता को अवतार मानकर प्रस्तुत किया गया है । कवि राम कथा लेने का कारण स्वयं स्पष्ट कर देता है -- "कविनां को दोषः १ स तु गुणगणानामवगुणः ।"
इस नाटक में राम - सीता के परम्परानुमोदित रूप से थोड़ा परिवर्तन मिल जाता है । इस में सीता राम की अनुगामिनी बनकर नहीं रहती है । इस नाटक पर "अनर्घ राघव" का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है । इनकी कविता का लक्ष्य "राधा कन्हाई" सुमिरन की कहानी है ।

5·13 हनुमन्नाटक :

इसके लेखक का निश्चित नाम अप्राप्त है और अज्ञात है । लेकिन कुछ विद्वानों ने हनुमान माना है । इसमें पूरे राम-चरित को नाटक की विषय वस्तु बनाया गया है । प्रचलित राम-कथा को अनेक परिवर्तनों के साथ इस में प्रस्तुत किया गया है । नाटककार ने कुछ स्वतन्त्र कल्पना करने की चेष्टाएँ की है । राम और लक्ष्मण मृग का आखेट करने के लिए एक ही बार दोनों जाते हैं, तो हनुमान शंकर के रूप में एवं रावण स्वयं राम का रूप धारण कर सीता के सतीत्व भंग की विफल चेष्टा करता है । ये रंगमंच पर प्रस्तुत करने लायक है । इस में संवाद नाटक को अच्छी सफलता मिली है ।

6· बौद्ध धर्म में रामकथा :

बौद्धों ने राम कथा को अपनी जातक कथाओं में प्रस्तुत किया है । प्राचीन बौद्ध साहित्य में तीन जातकों में रामकथा सुरक्षित है, ये है ---- 1· दशरथ जातक, 2· अनामक जातक, 3· दशरथ कथानकम् । इसलिए हम यह स्वीकार कर सकते हैं कि जातक कथायें और रामायण दोनों परस्पर आश्रित नहीं है । लेकिन दोनों लोक परम्परा पर आधारित हैं । विंटरनित्स ने कहा कि "बौद्ध धर्म - ग्रन्थों के लेखकों को रामायण का पता न था । पर वे उन आख्यानों को जानते थे जिनके आधार पर वाल्मीकि ने अपना काव्य रचा ।[26] रामायण प्रचलन के पूर्व राम का सामान्य महान आदर्श रूप में वर्णन किया गया है । उसी रूप में भगवान बुद्ध ने उन्हें प्रधानता दी है । लेकिन रामायण में आकर राम गृहस्थ हो गए । राम राज्य त्याग कर राज्य स्वीकार कर लेते हैं । लेकिन बौद्ध धर्म में इस त्याग का महत्व ही नहीं है । अतः परवर्ती बौद्ध साहित्य में उनकी प्रधानता कम रही ।

7· जैन राम कथा :

राम को आदर्श चरित्र के रूप में जैनियों ने भी स्वीकार किया । लेकिन जैन राम कथा बौद्ध राम कथा की तरह बिखरी हुई नहीं, यहाँ विस्तृत राम कथा - साहित्य मिलता है । राम, लक्ष्मण और रावण जैन मतावलम्बी हैं और तीनों त्रिषष्टि महापुरुषों के अन्तर्गत हैं । जैन राम कथाओं में राक्षस और वानर दोनों को विद्याधर वंश की भिन्न-भिन्न शाखाओं के रूप में स्वीकार किया गया है ।

संस्कृत की आरंभ रामकथा में दो धारायें प्राप्त हैं । एक विमलसूरि के "पउम चरियइ" रविषेण के "पद्म चरित" की और दूसरी गुण भद्र के उत्तर पुराण की है ।

7·1 विमलसूरि की परम्परा :

उन्होंने "पउम चरित्र" की रचना शुद्ध जैन महाराष्ट्री में की है । आपने पहली बार राम कथा को इसी में स्वीकार किया है । इस विमलसूरि के पद्म चरित का संस्कृत रूपान्तरण आचार्य रविषेण के द्वारा हुआ है । आपके पद्मपुराण में कथा छः विभागों में बाँटी गयी है -- 1·विद्याधर काण्ड, 2· राम-सीता का जन्म तथा विवाह, 3· वन-भ्रमण , 4· सीता-हरण और खोज, 5· युद्ध, 6· उत्तरचरित ।

7·2 गुण भद्राचार्य की परम्परा :

जैन गुण भद्र जिन सेनाचार्य के शिष्य थे । जिनसेन ने आदि पुराण की रचना की । लेकिन वह अपूर्ण ही थी । उनके शिष्य गुणभद्राचार्य ने आदि-पुराण को समाप्त किया । उसके पश्चात उत्तर पुराण की रचना की । इसकी विशेषता यह है कि सीता रावण की पुत्री है ।

8. संस्कृत रचनाएँ :

हेमचन्द्र कृत त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित के अन्तर्गत जैन रामायण, जिनदास कृत "रामायण" और "रामदेवपुराण", हेमचन्द्र कृत योगशास्त्र की टीका के अन्तर्गत "सीता रावण कथानक", पद्मसेन विजय गणिकृत रामचरित्र, सोमसेन कृत रामचरित्र, आचार्य सोमप्रभ कृत लघुत्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित, मेघ विजय गणिवर कृत लघुत्रिषष्टिशलाका पुरुष, हरिषेण कृत रामायण कथानक और सीता कथानक आदि हैं ।

9. अपभ्रंश रचनायें :

स्वयम्भु से विरचित "पउम चरिउ" रइधूकृत पद्मपुराण अथवा बल भद्रपुराण । गुणभद्र की परम्परा की रामकथा वाल्मीकि तथा विमलसूरि दोनों से भिन्न है । इस परंपरा की रचनायें हैं - कवि भट्टारक, नन्दि मुनीश्वर, कवि परमेश्वर, जिनसेन और गुण भद्र । गुणभद्र की रामकथा अन्य जैन रचनाओं में प्राप्त होती है । "कुल मिलाकर अपभ्रंश के राम काव्य की विशेषता उसके चरित्रों के यथार्थ मानवीय चित्रण, मार्मिक प्रसंगों की अनुभूति पूर्ण अभिव्यक्ति, व्यंजन, दृश्य - दर्शन, प्रभावशाली संवाद - योजना तथा कथा के आस्वादक - रस में है ।"[27] रामकथा का वर्णन जैन और बौद्ध धर्मों के अनुरूप ही हुआ है । उसका आधार वाल्मीकि रामायण ही है । इसके अलावा वाल्मीकि की रामकथा आगे एक पुष्ट परम्परा के रूप में विकास हुई । यह परम्परा संस्कृत के लौकिक साहित्य में और साम्प्रदायिक वैष्णव साहित्य में देखी जा सकती है ।

10. हिन्दी में राम काव्य परंपरा :

"हिन्दी काव्यधारा" में स्वयंभूकृत "पउम चरिउ" महाकाव्य को

हिन्दी का प्रथम काव्य माना गया है । इसका समर्थन विद्वान राहुल सांकृत्यायन ने किया है । इनके अलावा डा0 रामकुमार वर्मा ने भी हिन्दी के जैन कवियों में सबसे पहला नाम स्वयम्भूदेव का ही माना है ।[28] यह "पउम चरिउ" रामचरित पर आधारित अपभ्रंश भाषा का एक उच्चतम महाकाव्य है । यह आठवीं शती में लिखा गया है । जबकि संस्कृत महाकाव्यों और नाटकों का प्रणयन हो रहा था । राहुल सांकृत्यायन ने स्वतः इस वास्तविकता को स्वीकार किया है कि ये सारी आधुनिक भाषाएं 12वीं, 13वीं शताब्दी में अपभ्रंश से अलग होती दीख पड़ती हैं ।[29] इसलिए "पउम चरिउ" को हिन्दी का महाकाव्य स्वीकार करना उचित नहीं कहा जाएगा ।

डा0 भगीरथ मिश्र ने चन्दबरदाई - कृत पृथ्वीराज रासो के मंगलाचरण में "रामकाव्य" का प्रथम के रूप में स्वीकार किया है । इस में कवि ने "हरि-रस-लाभ" के लिए दशावतार का वर्णन किया है जिसमें राम-चरित का वर्णन केवल 38 छन्दों में वर्णन किया है । राम जन्म से लेकर पंचवटी तक की कथा चार छन्दों में कह दी गई है । लंका-दहन होना, राम का कुम्भ-करण, मेघनाथ, रावणादि से युद्ध होना और उन सबका वध सीता की प्राप्ति का कारण बना है --

जब सु राम चढ़ि लंक, तब सु मच्छोगिरि तारिय ।
जब सु राम चढ़ि लंक, तब सु पत्थर जल धारिय ।।
जब सु रामचढ़ि लंक, तब सु चक-चक्की चारिय ।
जब सु राम चढ़ि लंक, तब सु लंकापुर दारिय ।।

x x x

भिर कुंभमेघ रावन रतन, सीतावाम वरन करिय ।।[30]

10·1 रामायन कथा :

भक्त कवि विष्णुदास से विरचित और पण्डित लोकनाथ द्विवेदी सिलाकारी द्वारा सम्पादित इस काव्य को हिन्दी राम कथाश्रित प्रबन्ध काव्यों में प्रथम माना जाता है । बहुत समय तक यह काव्य अज्ञात था । इस काव्य को सागर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अन्तर्गत बुन्देली अध्ययन पीठ ने 1972 में प्रकाशित किया है । इसका महत्व हिन्दी के प्रथम कथा काव्य और राम काव्य होने में है । इसकी सम्पूर्ण कथावस्तु तीन काण्डों में विभक्त है, बालकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, और उत्तरकाण्ड । इसके अलावा वीरगाथा में चन्दबरदायी कृत पृथ्वीराजरासो के दूसरे प्रस्ताव में रामकथा का वर्णन आता है । जायसी के पद्मावत में भी राम कथा का संकेत मिल जाता है । सूरसागर का रचनाकाल भी रामचरित मानस के पहले का माना जाता है । "सूरदास ने लोक मानस में प्रतिष्ठित रामकथा के स्वरूप को ग्रहण किया । तुलसीपूर्व हिन्दी राम साहित्य के रचयिताओं में सूरदास का स्थान अग्रगण्य है । राम साहित्य में इन महात्मा का योग स्पष्टतया उल्लेखनीय है ।"31

सूर के राम भक्तवत्सल है । गुरु की सेवा, गो-ब्राह्मण प्रतिपालन, मातृदेवो भव" वाक्य में निष्ठा, प्रजापालन के प्रति राम की सहज अनुरक्ति माना गया है । अन्य जगह पर सूरदास ने राम को सहज कृपालु और अभीष्ट फलदाता कहा है । शरणागत की रक्षा और उसको अयाचित समस्त सुख देने में ही राम की मर्यादा सीमित रही है । जैसे ही विभीषण ने राम के शरणागत होकर अपना शीश झुकाया वैसे ही राम ने उसे लंकापति बनाया है --

"आए विभीषन सीस नवायो ।
देखत ही रघुबीर धीर, कहि लंकापती बुलायो ।
भक्त बछल करुनामय प्रभु को सूरदास जस गायो ।"[32]

सूर के राम परात्पर ब्रह्म ही है । उनकी लीलाओं का मुख्योद्देश्य राक्षसों का संहार और भक्तों का उद्धार करना ही है । उनके विचार में रामनाम भी अमित फल देने वाला है । उन्होंने राम शब्द के युगल अक्षरों को घुमाकर के दल, भवबन्धन काटने वाली कैंची के दो फलक और भक्ति एवं ज्ञान मार्ग के प्रकाशस्तम्भ कहा है ।[33] राम का नाम इहलौकिक और पारलौकिक दोनों का फलदाता कहा है ।

11. तुलसीदास का राम साहित्य :

हिन्दी राम काव्य की परम्परा की चर्चा तुलसीदास के बिना समाप्त नहीं की जा सकती है, क्योंकि तुलसी ने इसे गौरव के उन्नत शिखर पर बिठाया है । यह सत्य है कि "राम के चरित्र का आधार लेकर तुलसी ने मानव-जीवन की जितनी व्यापक एवं पूर्ण समीक्षा की उतनी हिन्दी के किसी कवि ने नहीं की । वास्तव में तुलसीदास ही राम-काव्य के सम्राट है ।"[34]

गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामचरितमानस के अतिरिक्त अन्य रामचरित संबंधी रचनाएं भी की है । उनकी रचनाओं का क्रमिक विकास मदनलाल गुप्त[35] के अनुसार इस प्रकार है -- राम लला नहछू (सं॰ 1614 ई॰) 25 वर्ष में, वैराग्य संदीपिनी (सं॰ 1616 में) 27 वर्ष में, रामाज्ञा प्रश्न (सं॰ 1621 में) 32 वर्ष में, जानकी मंगल (सं॰ 1626) 37 वर्ष में, रामचरित-

मानस (सं॰ 1631) 42 वर्ष में, पार्वती मंगल (सं॰ 1643) 45 वर्ष में गीतावली (सं॰ 1653 में) 69 वर्ष में, विनयपत्रिका (सं॰ 1658) 69 वर्ष में, कृष्णगीतावली (सं॰ 1658) 69 वर्ष में, बरवै रामायण (सं॰ 1660 में) 71 वर्ष में, सतसई दोहावली (सं॰ 1661 में) 72 वर्ष में, कवितावली (सं॰1662 में) 73 वर्ष में हुआ है, इनमें से प्रमुख काव्यों का संक्षिप्त परिचय निम्नांकित है --

11•1 रामचरितमानस :

तुलसी विद्वान थे, अतः वे हृदय से राम के भक्त हैं । इसलिए कवित्व और भक्ति का समानान्तर धारायें हमें यहाँ प्राप्त होती है । संवाद शैली में मानस की रचना हुई है । कथानक वाल्मीकि से ग्रहण करने पर भी आध्यात्म रामायण का प्रभाव इस पर देखा जाता है । उसमें कवि ने कुछ परिवर्तन किये हैं । संपूर्ण मानस कथानक चार संवादों में विभाजित किया गया है --

1• काक - भुशुण्डि संवाद
2• शिव - पार्वती संवाद
3• याज्ञवल्क्य भारद्वाज संवाद
4• तुलसी - द्वारा "सकल सज्जन" को सम्बोधित करना ।

उपर्युक्त चारों संवाद समानांतर चलते हैं । संवाद के बीच में प्रश्नोत्तर, शंका-समाधान भी प्राप्त होता है । तुलसी मानस तक अवतार भावना पुष्ट हो चुकी है । फलतः तुलसी के राम विष्णु को बहुत पीछे छोड़ आये हैं । तुलसी [illegible] ने मानस में राम को समस्त ब्रह्माण्ड में प्रकाशक होते हुए भी अवधपति के रूप में विराजमान होने की बात को स्पष्ट किया है । इन्हीं की सत्यता के प्रकाश से जड़ जगत सत्य-सा लगता है --

सकबर परम प्रकाशक जोई । राम अनादि अवधपति सोई ।।
जासु सत्यता मैं जड़ माया । भास सत्य इव मोह सहाया ।।[36]

संपूर्ण रचना सात काण्डों में विभाजित की गयी है -- बाल, अयोध्या, अरण्य, किष्किंधा, सुन्दर, लंका और उत्तर काण्ड है । तुलसी ने राम के व्यक्तित्व को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में प्रस्तुत करने की चेष्टा की है । इसलिए आपने सीता-परित्याग के सन्दर्भ को छोड़ दिया है । इस में राम का जन्म ही लोक-मंगल के लिए हुआ है --

सत्य संध पालक श्रुति सेतु । राम जनम जग मंगल हेतु ।।[37]

11·2 कवितावली :

कवितावली मुक्तक रचना है । रामकाव्यों में रस परिपाक की दृष्टि से इसको विशेष महत्व दिया गया है । इसकी विशेषता है कि इसमें प्रत्येक रस का सफल निर्वाह है । बाल काण्ड में बाल रूप का वर्णन मिलता है । इस कृति पर सूर का स्पष्ट प्रभाव है । बीच के सभी प्रसंग छोड़कर फिर सीता-स्वयंवर का चित्रण किया गया है । युद्ध वर्णन में कवि सफल हुआ है । लक्ष्मण - शक्ति - प्रसंग के पश्चात् एक ही छन्द में कुम्भकर्ण और रावण -वध का चित्रण है । कथा को उसी काण्ड में समाप्त किया गया है । उत्तर काण्ड में अनेक देवों की स्तुतियाँ मिलती हैं ।

11·3 गीतावली :

गीतावली भी मुक्त रचना है । इसमें गीत्यात्मक शैली में राम चरित्र का वर्णन प्रस्तुत किया गया है । सूर की छाप यहाँ स्पष्ट रूप में है । इसलिए कवि ने बाल-क्रीड़ाओं का वर्णन अत्यन्त रुचि से किया है । कौसल्या का

वात्सल्य स्थान-स्थान पर वर्णित है । तुलसीदास के ग्रन्थों में कलेवर की दृष्टि से मानस के पश्चात गीतावली का ही सर्वोपरि स्थान है । इसमें राम का रूपमाधुर्य मुख्य रूप से वर्णित है । बाललीला, भरतमिलाप, जटायु-उद्धार, शरणागति, सीता-वियोग -व्यथा आदि ललित और करुण प्रसंगों का वर्णन किया गया है ।

11·4 जानकी मंगल :

जनकपुर में सीता स्वयंवर की तैयारियों से कथा शुरू होती है । विश्वामित्र के साथ राम का जाना, ताड़का वध, धनुर्भंग और सीता विवाह का इसमें वर्णन है । यहाँ जनक वाटिका प्रसंग नहीं है । [illegible] धनुर्भंग के अवसर पर जनक का राम को धनुष दिखाने में निराशामय संकोच का आभास मिलता है । जनक के अपमान जनक शब्दों के विरोध में लक्ष्मण के क्रोध का चित्रण है । परशुराम से भेंट यहाँ अवध लौटते समय मार्ग में विवाहोपरान्त होती है ।

11·5 विनय पत्रिका :

वास्तव में ये दरबार में भेजी गया अर्जी है । अतः प्रत्येक देवी-देवता की स्तुति करता हुआ कवि राम तक पहुँचकर राम की स्तुति करता है । इसमें सीता से भी प्रार्थना की गई है । तुलसी इसमें समाज विश्लेषण की अपेक्षा आत्म-विश्लेषण में ही अधिक डूबे प्रतीत होते हैं । रामचरितमानस के बाद विनय पत्रिका तुलसी का सबसे बड़ा प्रसिद्ध ग्रन्थ माना जाता है । इस में राम को उदार और दीन-दयालु कहा गया है --

ऐसो को उदार जग माहीं ।
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर राम सरिस कोउ नाहीं ॥ [38]

12• सूर साहित्य में रामकथा :

सूर ने तुलसी की तरह रामजन्म से लेकर राज्याभिषेक तक की कथा का चित्रण किया है । राम का आगमन, भरत मिलाप और राज्याभिषेक का चित्रण है । अन्तिम पद में राज्यकार्य में व्यस्त राम की कल्पनाप्राप्त होती है । राम जन्म से ही बालकाण्ड की घटनाओं की शुरूवात होती है । अरण्यकाण्ड की घटनायें बारह छन्दों में वर्णित है । ग्यारह श्लोक में राम-रावण युद्ध का वर्णन मिलता है । अतः तुलसी की कृष्ण गीतावली एवं सूर के रामकथा विषयक पद उसके प्रमाण हैं ।

13• रामचन्द्रिका :

राम साहित्य के इतिहास में केशव दास का अपना एक विशिष्ट स्थान है । केशव हिन्दी में एक प्रकार से रीतिकाव्य के प्रारंभ कर्ता है । महाकाव्य के संपूर्ण लक्षणों को अपने आप में समेटे हैं । केशव की "रामचन्द्रिका" की कथावस्तु की योजना .. में वाल्मीकि रामायण में अध्यात्म रामायण, हनुमन्नाटक और प्रसन्न राघव आदि का प्रभाव है । विश्वामित्र के आगमन को कवि ने मार्मिक ढंग से वर्णित किया है । ऋषि की मांग पर दशरथ का असमंजस उनके पितृहृदय की सहज झलक है । वे वशिष्ट के समझाने पर ही राम को भेजते हैं । रामचन्द्रिका का वैशिष्ट्य यह है कि उसके संवाद में है । रावण अंगद का संवाद, परशुराम संवाद, लवकुश संवाद आदि में सजोक्ता है । इस में राम सीता निर्वासन के बाद भी सीता-अनुरक्ति से एक क्षण के लिए भी मुक्त नहीं होते, अश्वमेध के अवसर पर स्वर्णमयी सीता का निर्माण इसकी साबित करता है --

करिये युत भूषण रूपरयो ।
मिथिलेश सुता इक स्वर्णमयी ।।[39]

संवादों की दृष्टि से रामचन्द्रिका जैसा दूसरा ग्रन्थ हिन्दी रामकथा में नहीं है । रीतिकालीन राम कथा साहित्य पर श्रृंगार की व्यापकता और कृष्णकथा का काफी प्रभाव है ।

14• आधुनिक हिन्दी साहित्य में रामकथा :

बीसवीं शती द्विवेदी युग से प्रारंभ होती है । किन्तु साहित्य में हर एक विषय का निश्चित अवधि के पेर्व से आभास होता है । अतः भारतेन्दु युग के बारे में कुछ परिचय देना उपयुक्त होगा ।

15• भारतेन्दु युग : (सन् 1870-1900 ई•)

भारतेन्दु युग से हिन्दी साहित्य को नवीन दृष्टिकोण प्राप्त हुआ है । इस युग में काव्य के क्षेत्र में ब्रज-भाषा का प्राधान्य रहा है । साहित्य की समृद्धि के लिए नये सामाजिक विषय चुने गये और विचारों में राष्ट्र प्रेम और समाज-सुधार को प्रधानता दी गई है । ये सब नवीनताएँ काव्य के अतिरिक्त साहित्य के अन्य अंगों में अधिक है । काव्य में ब्रज भाषा के कारण विषय में भी प्राचीनता चलती रही । राम-चरित का विशेष महत्व अवधी में था , इसलिए राम काव्य की सृष्टि कम हुई और जो कुछ हुई है, उसमें नवीनता नहीं है । राम काव्य पर भारतेन्दु की रचना "दशरथ विलाप" उपलब्ध होती है । इसे खड़ीबोली की प्रथम कविता भी मानी जाती है । उन्होंने संस्कृत में "श्री सीता वल्लभस्तोत्र" लिखा है । इस युग में काव्य क्षेत्र में खड़ीबोली का सूत्र-पात हो गया था फिर भी महत्व तो ब्रजभाषा का ही था । इस काल के ब्रज भाषा काव्य में परम्परा का क्रम मिलता है । इसी के कारण राम काव्य भी परम्परा से बद्ध रही है ।

16• द्विवेदी युग : (सन् 1900-1920 ई•)

भारतेन्दु युग में जिस साहित्यिक क्रान्ति का प्रारंभ हुआ उसे वास्तविक अभिव्यक्ति द्विवेदी युग में प्राप्त हुई। भारतेन्दु युग में काव्य के क्षेत्र में ब्रज भाषा की परम्परा चल रही थी। द्विवेदी ने गद्य और पद्य के लिए खड़ीबोली का प्रबलता से समर्थन किया। द्विवेदी स्वयं गद्य और पद्य के अच्छे लेखक हैं। उन्होंने रामचरित से सम्बन्धित "रघुवंश" का हिन्दी गद्यानुवाद किया है।

इस प्रकार आधुनिक युग में राम कथा को लेकर अनेक काव्य रचे गये हैं :------

कवि	ग्रन्थ
पं• रामचरित उपाध्याय	रामचरित चिन्तामणि-1920
श्री मैथिलीशरणगुप्त	साकेत-1932
श्री सूर्यकांत त्रिपाठी "निराला"	राम की शक्ति पूजा-1936
श्री अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध"	वैदेही वनवास
पं• बलदेव प्रसाद मिश्र	साकेत सन्त
श्री गोकुलचन्द्र वर्मा	अशोक वन
श्री हरदयालु सिंह	रावण महाकाव्य - 1952
श्री केशमणि शर्मा "रायपुरी"	कैकेयी-1952
श्री बालकृष्ण शर्मा "नवीन"	उर्मिला-1957
पं• बलदेव प्रसाद मिश्र	रामराज्य - 1961
श्री रघुवीर शरण मिश्र	भूमिजा-1961

श्री नरेश मेहता	शबरी-1962
श्री राजाराम शुक्ल	जानकी जीवन-1971
श्री नरेश मेहता	संशय की एक रात-1975
श्री नरेश मेहता	प्रवादपर्व- 1975
श्री भारत भूषण अग्रवाल	अग्निलोक-1976
श्री जगदीश गुप्त	शम्बूक -1977
श्रीमती राजेश्वरी अग्रवाल	सीता समाधि-1978

राम काव्य के उपर्युक्त सिंहावलोकन से यह स्पष्ट होता है कि थोड़े बहुत अन्तर से सभी भाषाओं के राम-काव्य की मूल प्रेरणा धार्मिक है । समाज में बदलते हुए परिवेश के अनुसार राम-काव्य के विकास की प्रवृत्ति मानवतावाद की ओर रही है । आधुनिक हिन्दी के राम-काव्य में भी समान मानवतावादी विचारणा की प्रवृत्ति पाई जाती है । अतः उपर्युक्त काव्यों में राम कथा के प्रसंगों की अभिव्यक्ति की गई है । इन काव्यों का संक्षिप्त परिचय "तृतीय अध्याय" आधुनिक राम काव्यों की कथा वस्तु के परिवर्तित रूप का विवरण दिया जायेगा ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1• डा० कामिल बुल्के, राम कथा, प्रथम अध्याय, पृ० 23,24

2• तुलसीदास, विनय पत्रिका - 7। (हरितोषिणी) पद की टीका

3• श्री वावीलि सूर्यनारायण मूर्ति, हिन्दी और तेलुगु मध्यकालीन राम साहित्यों का तुलनात्मक अध्ययन, पृ०28

4• श्रीमती आशा भारती, हिन्दी रामकाव्य परम्परा विकास और प्रभाव, पृ० 10

5• डा० रामप्रकाश अग्रवाल, वाल्मीकि और तुलसी : पृ० 23

6• श्रीमती आशाभारती - हि०रा०का०प०वि० और प्रभाव, पृ० 10 से उद्धृत

7• ए० वेबर - आन दि रामायण , पृ० 11

8• रामकथा, पृ० 108,109

9• रामधारी सिंह दिनकर - संस्कृति का चार अध्याय, पृ०82

10• वाल्मीकि रामायण - 1/4/6

11• तुलसीदास - रामचरित मानस, लंका 111 दोहा 1

12• फादर कामिल बुल्के, रामकथा, प्रथम अध्याय : पृ० 23

13• ए० वेबर - आन दि रामायण : पृ० 11

14• रामायण महर्षियों की कथा - नवनीत, मार्च, 1960, पृ० 49-52

15• स्कन्दपुराण, अवंती खण्ड - 79/42/43

16• वाल्मीकि रामायण, 7/36/44,48 में

17• पद्म पुराण, पाताल खण्ड, 1/12,14

18• Max Müller, A History of Ancient Sanskrit Literature page -19 (This is not meant denial, that the real etric poetry that is to say, mass of popular songs celebrating the power of expelits of gods and heroes, existed in every periods in Indiap as well as among the other Aryan nations, but its knowns that if it is existing, it is not in the Mahabharata and Ramayana, we have to look for these old songs but rather in veda, it self. In the collection of the vedic hymns there are some which many be called epic and may we compared with the shortest hymns as cribed to Homer")

19• तुलसी मानस, भारती, शीर्षक : पा॰रा॰ राष्ट्रीय एकता की आधार शिला, सितम्बर-1993

20• योगवाशिष्ठ रामायण, निर्वाण प्रकरण, पूर्वार्ध, 127/2

21• अध्यात्म रामायण, बाल काण्ड, 3/66

22• उद्धृत, राम का स्वरूप और तत्व दर्शन - डा0 ब्रह्माकर पुरुषोत्तम व्यास, पृ॰ 73

23• अध्यात्म रामायण, बालकाण्ड, 2/41

24• - वही -

25• हिन्दी रामकाव्य - परम्परा विकास और प्रभाव - डा0 श्रीमती आशा भारती, से उद्धृत ।

25• राम कथा - फादर कामिल बुल्के, पृ॰ 52

27• अपभ्रंश का राम - साहित्य - नामवर सिंह, राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ॰ 698

28• हिन्दी साहित्य का इतिहास, डा0 रामकुमार वर्मा, पृ॰38

29• हिन्दी काव्यधारा - सं॰ राहुल सांकृत्यायन, पृ॰ 11-12

30• पृथ्वीराज रासो, 2/16

31• डा0 अमरपाल सिंह - तुलसीपूर्व राम साहित्य, पृ॰ 172 और 199

32• सूर राम चरितावली, पृ॰ 118

33• सूर सागर, पृ॰ 1/190

34• रामकुमार वर्मा, हिं॰सा॰आलोचनात्मक इतिहास, पृ॰ 337

35• तुलसी-मानस-भारती, जनवरी 1994, पृ॰ 32

36• तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड, पृ॰ 117

37• - वही - पृ॰ 254, (बालकाण्ड)

38• विनयपत्रिका, पद संख्या 162

39• रामचन्द्रिका - केशवदास, पृ॰ 4/35

द्वितीय अध्याय

आधुनिक राम काव्य की नवीन दृष्टियाँ और दिशाएं : पृष्ठभूमि

1. भौगोलिक दृष्टियाँ

   1.1 देश प्रेम

2. ऐतिहासिक दृष्टियाँ
3. राजनैतिक दृष्टियाँ
4. सांस्कृतिक दृष्टियाँ
5. सामाजिक दृष्टियाँ
6. नारीपरक दृष्टियाँ
7. आर्थिक दृष्टियाँ
8. धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टियाँ
9. राष्ट्रीय एवं अंतराष्ट्रीयता की दृष्टियाँ

द्वितीय अध्याय

आधुनिक राम काव्य की नवीन दृष्टियाँ और दिशाएँ : पृष्ठ भूमि

आधुनिक काव्य की नवीन दृष्टियाँ और दिशाओं के साथ-साथ प्राचीन काव्य की दृष्टियाँ और दिशाएँ भी इस अध्याय में चर्चा की जायेगी। आधुनिकता के बारे में स्पष्ट करते समय प्राचीन काव्यों में यह दिशाएँ और दृष्टियाँ किस प्रकार व्यक्त की गई है यह जानना अनिवार्य है।

1. भौगोलिक दृष्टियाँ :

इस में पृथ्वी के उपरी तथा उसके प्राकृतिक विभागों अर्थात् पहाड़, महादेश, देश, नगर, नदी, समुद्र, झील, वन आदि का विवेचन और वर्णन की अपेक्षा है।

भारत की समग्रता अखण्डता की रक्षा के लिए हिमालय से कन्याकुमारी तक और असाम से पंजाब तक के भू-भाग को एक राष्ट्र माना गया है। भारत के किसी भी कोने का नागरिक सातों नदियों का नाम लेते हुए संपूर्ण भारत की एकता का, अपनेपन का अनुभव करता है।

विष्णु पुराण में भारती सन्तति के राज्य की सीमाओं का स्पष्ट रूप प्रस्तुत है। जो भूमि समुद्र के उत्तर की ओर तथा हिमालय से दक्षिण की ओर फैली है, वही भारत वर्ष है एवं उसकी सन्तान भारती है --

"उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणं।
वर्षंतद् भारतं नाम भारती यत्र सन्तति: ॥"[1]

1·1 देश प्रेम :

व्यक्ति के मन में अपनी जन्म भूमि तथा निवास स्थान के प्रति भावात्मक संबन्ध और प्रेम रहना सहज है । यही भाव आगे चलकर स्वदेश प्रेम का रूप धारण कर लेता है । आचार्य नंददुलारे वाजपेयी के अनुसार "राष्ट्रीयता से मेरा मतलब स्वदेश प्रेम की व्यापक भावना से है ।"[2]

वैदिक साहित्य में ही नहीं पुराण साहित्य में भी भारत की प्रशंसा की गई है । इसमें भारत को कर्म भूमि, देव भूमि, स्वर्ग भूमि, पुण्यभूमि आदि नामों से कहा गया है । भारत में जन्म लेने से अपने को धन्य माना गया है । भारत भूमि को देवताओं से स्वर्ग से भी श्रेष्ठ मानकर स्तुति की गई है --

"नवयोजन सहस्रो विस्तारोऽस्य महामुने ।
कर्म भूमिरचय स्वर्गमापवर्गं च गच्छताम् ।।"[3]

मोक्ष प्राप्ति के लिए भारत योग्य भूमि है, अतः देवता यहाँ जन्म लेते हैं और अपने आप को धन्य मानते हैं ।

श्रीमद् भागवत् में भारत की स्तुति की गई है । ये इस प्रकार है ---- "भारत वैकुण्ठ का प्रांगण है, यहाँ जो मनुष्य जन्म धारण करता है, वह कितना भाग्यशाली है, क्योंकि यहाँ से उसे मुकुन्द की सेवा करने का सुअवसर प्राप्त हो जाता है ।"[4]

भगवान श्री रामचन्द्र उत्तर और दक्षिण को मिलाने का प्रयत्न करते हैं । इसमें महर्षि अगस्त्य के दक्षिण अभियान का सफल प्रयास रहा । रामचन्द्र लंका विजय के बाद वहाँ एक पल भी रहना नहीं चाहते तुरंत मातृभूमि को लौटना चाहते हैं --

"अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते,
जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।।"[5]

संस्कृत कवियों में कालिदास, भारवि माघ आदि कवियों की रचनाओं में देश प्रेम की भावना प्रकट हुई । उन्होंने राष्ट्रीय चेतना को अक्षुण्ण रखने का सफल प्रयास किया है । कालिदास के रघुवंश और कुमार सम्भव में हिमगिरि वर्णन राष्ट्रीय भावना को व्यक्त करता है ।

महाकवि भारवि भी हिमालय के उपासक हैं । प्राचीन कवि ने तरु, नदी, सागर, पशु-पक्षी आदि के प्रति अपनी श्रद्धा को प्रकट किया है । गंगा, यमुना, सरस्वती जैसी नदियाँ इस देश की एकता की प्रतीक है । भारत के पशु-पक्षी भी राष्ट्रीय मनोभावों को व्यक्त करते हैं । गाय तो हमारी राष्ट्रीय पशु है । इसके अलावा गज, वृषभ, सिंह, नागदेवता, मोर, गरुड़, हंस, चूहा आदि को देवी-देवताओं का पवित्र वाहन तथा पूज्य माना जाता है । प्राचीन काल से ही मातृभूमि तथा मनुष्य का संबंध माता तथापुत्र के पवित्र प्रेम के रूप में है । माता की रक्षा करना पुत्र का कर्तव्य मानते हैं । भौगोलिक एकता से राष्ट्रीयता का पारस्परिक सम्बन्ध रहता है । भौगोलिक तथा वातावरणिक भिन्नताओं के बावजूद जनता के मन में राष्ट्र के प्रति एकता तथा अखण्डता की भावना रहती है । भौगोलिक परिवेश मानव जाति के साथ असीम अनुराग के कारण अधिकतर जातियाँ देश और राष्ट्र के नाम से ही पुकारी जा सकती है । जैसे भारत-भारती, रूस - रूसी ।

इस प्रकार उपर्युक्त विचारों के आधार भौगोलिक दृष्टि के अंतर्गत काव्य में षट्ऋतुओं का वर्णन, बारहमासे का वर्णन, ग्रीष्म, वर्षा, शरद कालीन सुख-सुविधा आदि का दिल खोल कर वर्णन किया गया है ।

2. ऐतिहासिक दृष्टियाँ :

ऐतिहासिक दृष्टियाँ इतिहास सम्बन्धि दृष्टियाँ हैं । राष्ट्रीय चेतना के प्रथम चरण में अपनेपूर्वजों के इतिहास पर प्रेम रहना अनिवार्य है । वेद कालीन समाज के राष्ट्रीय नेता इन्द्र माने गये हैं । अथर्ववेद के बारहवें काण्ड में पूर्वजों के पराक्रम का वर्णन है । ऐतिहासिक दृष्टि के अन्तर्गत राष्ट्र के इतिहास को अन्तर भुत चेतना का अध्ययन रहता है । ऐतिहासिक पुरुष तथा मातृभूमि की रक्षा करने वाले महावीरों के प्रति पूज्य बुद्धि का संचार होता है । प्राचीन दुर्ग, शिलालेख, खण्डहर की रक्षा में वह रुचि लेता है क्योंकि पूर्व स्मृतियों से प्रेरणा मिलती है । प्राचीन इतिहास के आधार पर वह आधुनिक इतिहास को स्थापित करता है । संपूर्ण राष्ट्र के सुख-दुःख , जय-पराजय में संवेदना व्यक्त करता है । संपूर्ण राष्ट्र के साथ अभिन्नता का अनुभव करते हुए एकता के सूत्र में नागरिकों को संगठित करता है । राष्ट्र के उज्ज्वल इतिहास के निर्माण में योगदान देता रहता है । राष्ट्र की स्वाधीनता या उसके विकास के लिए आत्मार्पण किये हुए साधक राष्ट्र सेवियों को या वीरों के रूप में पूजने की परंपरा है । भारत के वीर जैसे सम्राट अशोक, चन्द्रगुप्त, समुद्रगुप्त से लेकर शिवाजी, सुभाष चन्द्र बोस, तिलक, भगतसिंह , चन्द्रशेखर आजाद, नेहरू और महात्मा गांधी आदि के प्रति पूज्य बुद्धि की भावना इतिहास में होती है ।

पं. नेहरू जी अपने एक भाषण में इतिहास के संदर्भ में बताते हुए कहते हैं कि हो सकता है इतिहास उन वीरगति को प्राप्त हुए लोगों का एक ब्योरा है । वे (नेहरू जी) मानते हैं कि जिन व्यक्तियों को सूली पर चढ़ाया गया है उनका आदर पुनर्जन्म संभव है । इस प्रकार से वीर गति प्राप्त करना, सूली पर चढ़ाया जाना और पुनः जीवित होना एक के बाद एक कड़ी के समान

होता है । इस प्रकार से हम इतिहास को स्वीकार कर सकते हैं कि यह मानवीय आत्मा और मानवीयता की प्रगति है । इतना सब कुछ देखने के पश्चात् हमें कभी कभी आश्चर्य होता है कि यह प्रगति अकस्मात रुक जाती है और पीछे फैंक दिया जाती है ।[6]

3. राजनैतिक दृष्टियाँ :

प्राचीन भारत की राजनैतिक चेतना राज्य विस्तार जैसे संकुचित विचार को प्रेरणा नहीं देती । भारत देश एक सांस्कृतिक राष्ट्र था, जिसमें राजनैतिक संकीर्णताओं को अवसर नहीं मिला अर्थात् भौतिकता की अपेक्षा आत्मिक मूल्यों को भारत में प्रेरणा मिली है । एक छत्र शासन में भारत को लाने के विशेष प्रयत्न नहीं हुए । इसके प्रमाण के रूप में रामायण काल का अश्वमेध, महाभारत का राजसूय आदि यज्ञ है । परम सर्वोच्चता की अवधारणा हिन्दू विचारधारा के लिए परिचित नहीं थी, यह विचार भारत में विदेश से आया है । "चक्रवर्तित्व की सिद्धि हेतु चन्द्रगुप्त, अशोक, हर्षवर्धन के प्रयास राष्ट्र की अखण्डता की रक्षा के प्रमाण हैं ।"[7]

प्राचीन काल में राजा निरंकुश था, लेकिन धर्म से वह दंडित करता था । राम का रावण को गद्दी से उतार कर विभीषण को बिठाने का तात्पर्य एक महत्वपूर्ण उदाहरण है । राम-रावण युद्ध और महाभारत युद्ध के पीछे भी धर्म संस्थापन ही मुख्य लक्ष्य है । उस समय में उनका मुख्य उद्देश्य था कि अन्यायी शासन को हटाना है । अतीत काल में जनता के विचार को बहुत महत्त्व दिया जाता था । शासन के गुण-दोषों पर जनता खुलकर विरोध करती थी, राजा भी जनता के विचारों के अनुसार अर्थात् उनके विचारों का ध्यान रखकर चलते थे । जैसे, रामायण का धोबी प्रसंग इसका प्रमाण है।

उपर्युक्त विचारों के द्वारा यह कह सकते हैं कि प्राचीन काल में राजनैतिक चेतना प्रचुर थी एवं सैद्धान्तिक थी ।

राजनैतिक दृष्टि के मूल में राजनैतिक आकांक्षा की समानता और राजनैतिक महत्वाकांक्षा की ओर, जनता की प्रगति होने की विचारधारा थी । राजनैतिक स्वतन्त्रता राष्ट्र की अखण्डता और हर क्षेत्र में स्वाधीनता को बढ़ाने के लिए राजनैतिक चेतना प्रोत्साहित करती थी । तब छोटे-छोटे राज्य होते थे फिर भी अपने मूल में प्रबल एकीकृत होते थे । जनता राष्ट्रीय विकास के लिए संगठित रहती थी ।

विदेशी विद्वानों में भी राष्ट्रीयता के विषय में विभिन्न मत हैं । जिम्मरेन के अनुसार "मेरे विचार से राष्ट्रीयता एक राजनैतिक प्रश्न बिल्कुल नहीं है । यह मुख्य रूप से तथा अनिवार्य रूप से एक आध्यात्मिक प्रश्न है । राष्ट्रीयता, धर्म की भांति ही आत्म चेतना निष्ठ है, मनोवैज्ञानिक है, एक मनोदशा है, एक आध्यात्मिक सम्पदा है और अनुभव करने, चिन्तन करने तथा जीवन-यापन करने की पद्धति है ।"[8]

अन्य सन्दर्भ में गुरुमुख निहाल सिंह के अनुसार "....... अपने में अनोखेपन और एकता की भावना रखने वाला जन समूह केवल एक राष्ट्रीयता है ।"[9]

उपर्युक्त विचारों से यह स्पष्ट हुआ कि आधुनिक राष्ट्र के विकास के लिए जनता के मन में राजनैतिक तृष्णा रहना आवश्यक है । प्राचीन कालीन राजनैतिक स्थिति से प्रोत्साहित होकर - "सर्वजन सुखाय, सर्वजन हिताय," हेतु राजनैतिक सत्ता को हासिल करना जनता की अभिलाषा होनी चाहिए ।

4. सांस्कृतिक दृष्टियां :

अतीत काल से भारत में सांस्कृतिक चेतना विद्यमान रही है । भारत की राष्ट्रीयता को वास्तव में सांस्कृतिक राष्ट्रीयता मानते है । यहां देश और सांस्कृतिक दोनों एक दूसरे के पर्यायवाची हुए हैं । वैदिक काल में वैदिक संस्कृति की प्रगति हुई । इसे आर्य संस्कृति कहते हैं । तीर्थ स्थानों का सांस्कृतिक एकता में अद्भुत स्थान रहा है । प्रत्येक राष्ट्र की अस्मिता उसकी निजी संस्कृति में रहती है । उस प्रान्त के रीति-रिवाज, व्यवहार, साहित्य शिक्षा कला, रहन-सहन, जीवनादर्श और मान्यताएं सभी मिलकर उस राष्ट्र की सामाजिक संस्कृति के अन्तर्गत आते हैं । भारत में छप्पन राज्य की विभिन्न संस्कृतियां भिन्न-भिन्न भाषाएं, वेष-भूषा में अनेकता होने पर भी सांस्कृतिक समानता है ।

उन्नीसवीं शताब्दी भारतीय संस्कृति, धर्म और दर्शन के पुनर्जागरण का काल है । हमारे इतिहास का उत्तर मध्ययुग भी धार्मिक आन्दोलनों का युग रहा है । कबीर, नानक, दादू, तुलसी आदि उपदेशक मुख्यत: धार्मिक आन्दोलनों के प्रवर्तक और प्रचारक भी थे । आधुनिक काल में हमारे राष्ट्र का जागरण धार्मिक आन्दोलनों से आरम्भ हुआ । राजाराम मोहन राय के ब्रह्म समाज, केशवचन्द्र सेन के भारतीय ब्रह्म समाज के अतिरिक्त प्रार्थना समाज, आर्य समाज और थियोसोफिकल सोसाइटी के सत्प्रयासों से भारत वर्ष में अपनी प्राचीन संस्कृति, वेद और दर्शन के प्रति गौरव का भाव उत्पन्न हुआ । रामकृष्ण परमहंस और उनके शिष्य स्वामी विवेकानन्द ने पुन: विश्व में भारत के सांस्कृतिक गौरव को स्थापित किया ।

पहले से ही भारतीय संस्कृति में अहिंसा को परमधर्म के रूप में देखा गया है । इस देश में धर्म रक्षा के लिए युद्ध करते थे । हिंसा प्रवृत्ति को जगाने

के लिए या राज्य विस्तार के लालच से कभी युद्ध आयोजित नहीं हुए हैं। भारत ने आत्मरक्षा के लिए युद्ध किया है। इतिहास के द्वारा साबित है कि भारत ने विक्रमशील होते हुए भी पराक्रमण अथवा दुराक्रमण कभी भी नहीं किया है। भारतीय संस्कृति का यह प्राण है कि राष्ट्र की बलिवेदी पर मर मिटने के लिए अपनी संतान को प्रेरणा दी जाती है। नेहरूजी के शब्दों में ---

"संस्कृति का अर्थ बुद्धि, आत्मा का विकास होना है। कभी बुद्धि की संकीर्णताओं से मानव तत्व के विकास को रोकना नहीं या देश को विकास में बाधा देना।"[10]

भारत में कई जातियों का तथा उनकी संस्कृतियों का सम्मेलन हुआ है। उसके अतिरिक्त बर्मा, श्रीलंका, गांधार, पाकिस्तान आदि प्रान्तों को मिलाकर अखण्ड भारत नाम से उल्लिखित करते हैं। भारत की एकता वास्तव में सांस्कृतिक रूपी आधार पर निर्मित हुई है।

5. सामाजिक दृष्टियाँ :

प्राचीन भारतीय समाज की वर्ण व्यवस्था का संसार में अद्वितीय स्थान है। इस वर्ण - व्यवस्था के आधार पर ही भारतीय - सामाजिक जीवन स्तर का ढाँचा बनाया गया है। यहाँ व्यवस्था भारत में वैदिक युग से शुरू हुई है। इस वर्ण - व्यवस्था को ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में स्वीकार किया गया है।

प्राचीन भारत में शुरू से ही "संयुक्त परिवार की व्यवस्था रही है। आम रूप से संयुक्त परिवार हिन्दुओं का विशेष रहा है। मेकाइवर के

अनुसार समाज का अर्थ समरूपता है । आधुनिक समाजों में सामाजिक समरूपता को अवस्थाएँ राष्ट्रीयता या विश्व के उद्देश्यों के रूप में अधिक व्याप्त बन गई है । समाज में भावों को एक रूपता रहना आवश्यक है । यह केवल लोगों की सुख सुविधा के लिए नहीं वरन् सामाजिक बन्धनों की संपूर्ण व्यवस्था के लिए अपेक्षित है । व्यक्ति, परिवार, कुल-जाति, समाज तथा राष्ट्र जिस में सर्वजनीन आत्मीयता की भावना सक्षम बनी रहती है और जिसमें व्यष्टि तथासमष्टि में परस्पर संवेदनशीलता विद्यमान होती है । इसका तात्पर्य यह है कि एक दूसरे के सुख-दुख को अपना सुख-दुख मानना है और उनमें तन, मन, धन से सहायता करने की भावना विद्यमान होती है ।

उपर्युक्त विवेचनों के द्वारा यह स्पष्ट होता है कि -- भारत की सामाजिक प्रवृत्तियों और लोक व्यवहार की यह विशेषता रही है कि ये आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक अल्प परिवर्तनों के साथ मूल रूप में रूढ़िवादी परम्पराओं पर आधारित है ।

<u>6• नारीपरक दृष्टियाँ :</u>

नारी मानव जाति की जननी है और पीढ़ियों को जोड़ने वाली एक कड़ी भी । भारतीय संस्कृति में समाज के इस वर्ग को बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है । अतः स्त्रियों के धैर्य सहनशक्ति, प्रेम, अनुराग, सहानुभूति तथा उदारता आदि कुछ आदर्शमूलक तथा अनुकरणीय गुणों को ध्यान में रखते हुए भारत को "भारत माता" का प्रतिरूप कहा गया है । सर्वनियन्ता भगवान को शक्तियों का लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा, काली आदि नारी रूपों में ही चित्रित किया गया है । इसके अलावा नारी शक्ति, धन और ज्ञान की प्रतीक मानी गयी है । इस भारत देश के चिन्तक मनीषी समाज सुधारक एवं नेता हमेशा इस बात के प्रति जागरूक रहे हैं कि नारी ही शक्ति का साकार रूप है । वही पुरुष का

साथ देती है और परिवार के द्वारा नवीन सन्तान को भविष्य में विभिन्न कर्तव्यों को पूरा करने के योग्य एवं शक्तिशाली बनाती है। वही परिवार की आधार बिन्दु है, समाज और देश का विकास उसी के सत्प्रयत्नों पर आधारित है।

वैदिक काल में भारत में स्त्रियों को गौरवपूर्ण स्थान मिला। इस युग में नारी की स्थिति न केवल अच्छी थी बल्कि अत्यन्त उन्नत थी। इस युग के साहित्य के अध्ययन से मालूम होता है कि उस समय स्त्रियों की स्थिति उनके आत्म विकास, शिक्षा, विवाह, सम्पत्ति आदि के सम्बन्ध में लगभग पुरुष के समान स्थान पर थी। ऋग्वेद में विश्पला नामक वीरांगना का रण-क्षेत्र में जाने का उल्लेख मिलता है। वैदिक काल में पितृ सत्तात्मक राज्य के होने पर भी पुरुष के जैसे शैक्षिक, सांस्कृतिक, सामाजिक अधिकार पाती थीं। पारिवारिक व्यवस्था में सभी सामाजिक व्याधियों का निवारण था। "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" उक्ति से स्पष्ट होता है कि बालिका, कन्या, पत्नी, माता की स्थिति में स्त्री पूजनीय मानी जाती है।

उत्तर वैदिक काल में वैदिक युग में स्त्रियों की जो ऊँची स्थिति थी वह अधिक समय तक स्थिर नहीं रही। धर्म सूत्रों में बाल विवाह का निर्देश दिया गया। विधवा विवाह पर निषेध एवं बहुपत्नी प्रथा का प्रचलन और बढ़ गया है। मध्यकालीन युग में स्त्रियों की स्थिति का और भी पतन हुआ। स्त्री के अस्तित्व और व्यक्तित्व को लूट कर समाज ने उसे सती बनाया। इसी समय में वेश्यावृत्ति, स्त्री जाति की बाल हत्या, बहु विवाह आदि कुरीतियाँ भी अधिक भयंकर रूप धारण कर गईं।

स्वतन्त्रता के बाद स्त्रियों की स्थिति में सुधार और उन्नति के लिए भी सभी तरह के प्रयत्न किये गये। भारतीय नारी की स्थिति में

अनेक सुधार हुआ है । वर्तमान समाज में हिन्दू नारी परम्परागत स्थिति से काफी अच्छी स्थिति में है ।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि भारत में स्त्रियों की स्थिति उत्थान पतन और पुन: उत्थान की कहानी है । लेकिन आज भी नारियाँ सामाजिक प्रतिबन्धों तथा निर्योग्यताओं में जकड़ी हुई है । स्त्रियों को आगे बढ़ने से ही परिवार आगे बढ़ेगी और उसके द्वारा गाँव, राष्ट्र का विकास भी हो सकता है । अत: नारी की शिक्षा संस्कार पर ही राष्ट्र की उन्नति निहित है ।

7. आर्थिक दृष्टियाँ :

राष्ट्रीय चेतना के अंतर्गत आर्थिक आकांक्षाएं, प्रेरणाएं एवं लक्ष्य आदि से तत्कालीन जनता की आर्थिक दृष्टियों को लिया जाता है । वैदिककाल से ही भारत एक कृषि-प्रधान देश रहा है और हमारी अधिकांश जनता ग्रामों में रहती है । पशुपालन करना उनके मुख्य पेशे थे । अनेक व्यवसाय, उद्योग धन्धे और नाना वनस्पतियों, पशु-पक्षियों का चित्रण प्राप्त होता है । उन दिनों में वर्ण विभाजन श्रम तथा आर्थिक विभाजन को दृष्टि में रखकर किया गया है ।

आज राष्ट्रीय कल्पना के मूल में आर्थिक स्वतन्त्रता प्रधान रही है । आर्थिक स्वतन्त्रता के बलावा राजनीतिक स्वतन्त्रता अधूरी रह जाती है । कई अर्थ में शास्त्रियों ने राष्ट्र के अस्तित्व पर आर्थिक चेतना पर अधिक महत्व दिया । किसी व्यक्ति तथा राष्ट्र के लिए आर्थिक स्वावलंबन होना अनिवार्य है । "शरीरमाद्यम् खलु धर्म साधनम्" उक्ति के अनुसार राष्ट्र की संस्कृति, जीवन मूल्य प्राचीन सभ्यता के रक्षण में आर्थिक उन्नति उपयोगकारी है । अर्थात् समाज

की वास्तविक उन्नति उसके आत्मिक विकास में है । अर्थ सिर्फ उसका साधन है, साध्य नहीं है । ऐसा करना भूल होता है कि जो व्यक्ति अर्थ को ही प्रगति का मानदण्ड मानकर न्याय और अन्याय सभी उपायों से उसका संचय करते हैं । प्राचीन भारत में आज के सुख - साधनों से रहित तपोवनों में ही संस्कृति की प्रगति हुई थी । वही मानवता का वास्तविक विकास कहलाता है । लेकिन कभी-कभी आर्थिक या भौतिक विकास सच्ची प्रगति का विपर्यय भी बन जाता है ।

8. धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टियाँ :

धर्म की एकता का राष्ट्र के निर्माण में महत्वपूर्ण स्थान है । भारतीय दर्शन में समन्वय की प्रक्रिया निरन्तर विकासशील रही । आदि - शंकराचार्य के भारत के चारों ओर अपने पीठ स्थापित करने के पीछे एकता की भावना है । प्रकृति की जिस विविधता में अनेक देवों का बोध हुआ था, उसी में उन्होंने एकता की अनुभूति स्वीकार की । ऋग्वेद के एक मन्त्र से इस तथ्य की पुष्टि होती है -

"पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥"[12]

अर्थात् यह सब कुछ वह पुरुष ही है, ये जो भूत और जो होने वाले हैं, वह अमृत का स्वामी तथा सर्वोपरि माना जाता है ।

सभी सम्प्रदायों के तत्व दर्शनों को खुलकर स्वीकार किया गया है और "एकम् सद् विप्रा बहुधा वदन्ति" कहकर एकता की भावना कायम की गई

है । सनातन धर्म में मूल में सभी संप्रदायों को समन्वित करने की शक्ति निहित है । "धार्मिकता इस भारत की प्राण - चेतना मानी जाती है । सनातन - धर्म को लेकर ही जन्मा है, उसी को लेकर यह चलता है और उसी को लेकर यह पनपता है । जब सनातन धर्म की हानि होती है, तभी इस राष्ट्र की अवनति होती है । ····· सनातन धर्म ही है राष्ट्रीयता ।"[13] अर्थात् सनातन धर्म के मूल में सभी सम्प्रदायों को समन्वित करने की शक्ति निहित है । सनातन धर्म भारतीय तत्व चिन्तन का सार कहा जाता है । अतः सनातन धर्म के अन्तर्गत राष्ट्रीय धार्मिकता का विकास है ।

वास्तव में भारतीय संस्कृति आध्यात्मिक संस्कृति है । इसमें मोक्ष की साधना पर विशेष बल दिया गया है । लेकिन इसका उद्देश्य यह नहीं है कि प्रत्यक्ष जगत् की उपेक्षा कर दी जाय । हमारे धर्म के लक्षण में निःश्रेयस के पूर्व अभ्युदय अर्थात् लौकिक उन्नति प्रस्तुत है --

"यतोऽभ्युदयनिः श्रेयसिद्धिः स धर्मः ।"[14]

भविष्य की आशा में वर्तमान की उपेक्षा करना बुद्धिमत्ता का काम नहीं है । हम संसार में आसक्त न हों लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि हम भगवान से वरदान स्वरूप उपलब्ध मानव जीवन को अस्वीकृत कर दें । हमारे जीवन में प्रेम और श्रेय दोनों का समन्वय होना जरुरी है । इस दृष्टि से आध्यात्मिकता का अर्थ जीवन मूल्यों के सर्जन या उपभोग के प्रति उपेक्षा नहीं है ।

महाभारत में धर्म के स्वरूप की व्याख्या करते हुये कहा गया है कि धारण करने के कारण धर्म संज्ञा है, धर्म प्रजाओं को धारणा करता है, जिससे लोक का संधारण हो, लोक की स्थिति हो, वही धर्म है --

"धारणाद्धर्ममित्याहुर्धर्मो धारयते प्रजा: ।
यस्माद्धारणसंयुक्त: स धर्म इति निश्चय: ॥"[15]

अत: धर्म वह है, जिसके आचरण से लोक का कल्याण होताहै ।

भारत में आत्मा - परमात्मा पर विश्वास करते हैं । भारत के नागरिक साम्प्रदायिक तत्वों से उठकर आध्यात्मिक भाव भूमि में रहते हैं । फलत: भारत में आध्यात्मिक एकता की भावना स्थिर है ।

9. राष्ट्रीय {जातीय} एवं अंतर्राष्ट्रीयता की दृष्टियाँ :

जातिगत एकता से राष्ट्रीयता का प्राथमिक सम्बन्ध है । वैदिक काल के वर्ण विभाजन से राष्ट्रीय एकता की पुष्टि मिल गई है । जाति भावना के निर्माणात्मक दृष्टि से वह समस्त राष्ट्र एक जाति का रूप लेता है तभी राष्ट्रीयता को जातीयता के नाम से उल्लिखित करते हैं ।

राष्ट्रीयता की अन्तर्राष्ट्रीयता से कोई विरोध नहीं होता बल्कि वह अन्तर्राष्ट्रीयता की सीढ़ी होती है । राष्ट्र-स्वार्थ और राष्ट्रीयता दोनों एक दूसरे के पर्याय नहीं । विश्व-कल्याण के लिए संकुचित राष्ट्रीयता के स्वार्थों का त्याग और अपने राष्ट्र की प्रगति का स्वस्थ चिन्तन ही राष्ट्रीयता की भावना को गौरान्वित करता है । आधुनिक राम - काव्यों में इसी प्रकार की राष्ट्रीयता की सहमति की गयी है । क्यों कि विश्व कल्याण में ही राष्ट्र का कल्याण निहित है । सभी व्यक्ति विश्व के नागरिक हैं । सीमित राष्ट्रीयता की सीता एक भ्रम है । इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को अन्तर्राष्ट्रीय धरातल पर अपने "स्व" का विस्तार करना है । राष्ट्र के लिए व्यक्ति और विश्व के लिए

राष्ट्र के स्वार्थों का त्याग करना भी अनिवार्य है । आधुनिक राम-काव्य में राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता के इसी समन्वय का लक्ष्य रखा गया है और इन सबसे परे समस्त मानवता की कल्याण-कामना की गई है ।

प्रस्तुत अध्याय में आधुनिक काव्य की नवीन दृष्टियाँ और दिशाएं क्या है ? और प्राचीन काल में ये दृष्टियाँ और दिशाएं किस अवस्था में है बताया गया है । ये दृष्टियाँ और दिशाएं आधुनिक राम काव्य में किस प्रकार है और किस विधि में है विस्तार से चर्चा चौथे, पांचवे, छठवें अध्याय में की जायेगी ।

सन्दर्भ सूची

1• विष्णु पुराण 2-3-1

2• आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, राष्ट्रीयता, पृ• 2

3• विष्णु पुराण 2-3-22

4• श्रीमद् भागवत 5-9-21

5• वाल्मीकि रामायण

6• "History as a famous writer has described it, is a record of the martyrdom of man, perhaps so. It is also a record of respected resurrections after every crucifixion, so you see this process of martyrdom and crucifixion of man, and ressurection following it, in interminable succession. You may consider history as the onward march of humanity of the human spirit and yet sometimes we are pulled back by seeing how that onward march is suddenly arrested and thrown back"

(Inagural address to the Silver Jubliee session of the Indian Historical records, conference, New Delhi, December 23, 1948).

7• राधा मुकर्जी "हिन्दू संस्कृति में राष्ट्रवाद" : पृ• 65

8• "Nati nality is not a political question at all. It is a primarily and essentially a spiritual question. Nationality like religion is subjective, psychological, a conditions of mind, a spiritual passession, a way of feeling thinking and living".

Zimmern, Nationality and government, p-59

9. "-----------The feeling sense of uniqueness and Unity------- are merely nationality."

G.N. Singh, Fundamentels of politicel science and organisation, page-45

10. "Culture is the widening of the mind and of the spirit. It is never a narrowing of the mind of a restruction of human spirit or of the country's spirit".

From the speech of the opening cermony of the fuel research Institute, Digwadil, April 22, 1950.

11. ऋग्वेद - 10/90/12

12. ऋग्वेद - 10-10-2

13. श्री अरविन्द विचार दर्शन - डा० श्यामबहादुर वर्मा, पृ० 37

14. वैदिक दर्शन (2/2/2) देखिये छायावादोत्तर हिंदी प्रबंध काव्यों का सांस्कृतिक अनुशीलन : पृ० 37

15. महाभारत, कर्ण पर्व, 69/58

--

तृतीय अध्याय

आधुनिक राम काव्यों की कथावस्तु का विश्लेषण

1• रामचरित चिन्तामणि - 1920

2• साकेत - 1932

3• राम की शक्ति पूजा - 1936

4• वैदेही वनवास - 1938

5• साकेत सन्त - 1946

6• अशोक वन - 1951

7• रावण - महाकाव्य - 1952

8• कैकेयी - 1952

9• उर्मिला - 1957

10• राम राज्य - 1961

11• भूमिजा - 1961

12• शबरी - 1962

13• जानकी जीवन - 1971

14• संशय की एक रात - 1975

15• प्रवादपर्व - 1975

16• अग्निलीक - 1976

17• शम्बूक - 1977

18• सीता समाधि - 1978

तृतीय अध्याय

आधुनिक राम काव्यों की कथावस्तु का विश्लेषण

रामायण, महाभारत ऐसे प्राचीन ग्रन्थ है जो निरंतर भारतीय साहित्य को प्रभावित करते रहे हैं । प्रस्तुत काव्य में प्राचीन ग्रन्थों का प्रभाव अधिक रहा है । प्राचीन काल एवं मध्यकाल में रामायणाख्यान से प्रभावित काव्यों का प्रमाण रहा है । लेकिन उससे भी अधिक परिमाण में आधुनिक काल में राम काव्य लिखे गये हैं । इसका मुख्य कारण यह है कि "प्राचीन संस्कृति" के माध्यम से राष्ट्रीय पुनरुत्थान करना और प्राचीन संस्कृति को पुन: स्थापित करना है ।

आज के साहित्यक विषयों में परम्परागत रूप न रहकर उसमें परिवर्तन हो गया है । भारतीय जीवन में स्वतन्त्रता प्राप्ति के आंदोलन के समय और उसके बाद अनेक समस्यायें उभरी है । प्रस्तुत काव्य में भारतीय जीवन के सांस्कृतिक उत्थान और नव जागरण के सभी सामाजिक और राजनैतिक उपादान दिखाई देते हैं । नवजागरण के परिणाम स्वरूप भारतीय जीवन की मान्यताओं में बदलाव आया है । फलत: चरित्रांकन की नीतियाँ बदल गई है । अत: कवि ने समाज की परिस्थिति को देखकर अतीत के पुनरालेखन की ओर कदम बढ़ाया । आधुनिक कवियों ने पुराख्यानों को प्रेरणास्रोत के रूप में स्वीकार किया । इस समाजिक आन्दोलन के दवारा कवियों के दो दल बने । एक दल ने प्राचीन आदर्श की यथावत् स्थापना की और दूसरे दल ने प्राचीन कथा एवं विचार में बौद्धिक दृष्टिकोण को स्वीकार

किया । कुछ काव्यों में युगानुरूप नवीन परिवर्तन किये गये हैं । और कुछ काव्यों का परम्परागत रूप में महत्व है । उन काव्यों का काल क्रमानुसार संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है --

1· रामचरित चिन्तामणि :

पं· राम चरित उपाध्यायजी ने सन् 1920 में "राम चरित-चिन्तामणि" नामक राम काव्य की रचना की है । द्विवेदी युगीन राम-काव्यों में इस कृति को प्रस्तुत किया जा सकता है । इस काव्य में द्विवेदी युगीन अन्य राम- काव्यों की अपेक्षा - भिन्नता देखा जाता है । क्योंकि इस कथा का मूल आधार वाल्मीकि रामायण विशेष रूप से रही है । इस काव्य में पूरा पच्चीस सर्ग है । इन सर्गों में राम के जन्म, विवाह, वनगमन, सीतापहरण, रावण-वध, सीता सहित - अयोध्या वापसी, सीता-परित्याग, लव-कुश जन्म, राम-द्वारा अश्वमेघ का आयोजन और लव-कुश को अपने पिता राम से भेंट आदि तक की राम - जीवन से सम्बन्धित प्राय: समस्त घटनाओं का उल्लेख मिलता है । इस काव्य को राम - काव्य परम्परा का प्रथम माना जाता है ।

इस काव्य में राम का वृत्त उपस्थित करते हुए नये युग की विचार-धारा का आकलन किया गया है । उपाध्यायजी ने कथा का आधार वाल्मीकि रामायण से लिया है । लेकिन घटनाओं में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं है ।

रामचरित - चिन्तामणि को महाकाव्य कहने के बारे में विभिन्न मत भेदों को व्यक्त किया गया है । इसमें प्रथम कारण काव्य - कथानक का सुसंगठित न होना । दूसरा - काव्य में कवि को काव्य प्रतिभा और परम्परा निर्वाह की अपेक्षा उपदेशात्मक तत्व अधिक परिलक्षित है । अत: डा० गोविन्द राम शर्मा ने इसे तथाकथित महाकाव्य शीर्षक के अन्तर्गत रखकर समीचीन दृष्टि का परिचय

दिया है ।[1] इस काव्य में राम और सीता का चरित्रांकन सर्वथा सामान्य धरातल पर होते हुए भी दृष्टि में नवीनता का अभाव स्पष्ट है । राम और सीता के आदर्श स्वरूप का जो चित्र पर्याप्त समय पूर्व से प्रतिष्ठित हो चुका है । सिर्फ उसे पूर्णत: परिवर्तित कर देने से काव्य की श्रेष्ठता नहीं मानी जाती है । परम्परागत कथानक का विरोध वहीं तक मान्य होता है कि जहाँ तक उसमें अस्वाभाविकता और असंगति की ना आना चाहिए । चरित्रांकन में कवि को औचित्य दृष्टि को आत्मसात् करना अपेक्षित रहा है । इन दृष्टियों से "राम चरित-चिन्तामणि" सामान्य कोटि का काव्य कहा गया है ।

जीवन-मूल्यों की दृष्टि से राम चरित चिन्तामणि राम-काव्य में भौतिक मूल्यों को अपेक्षाकृत अधिक प्रतिष्ठा दी गई है । लेकिन कथन में गम्भीर्य चिन्तन पर अभाव रहा है । सर्वत्र उपदेशात्मक दृष्टि का प्रभाव दिखाई देता है । इस में कहीं-कहीं वाक्विदग्धता दर्शनीय है । और लगता है कि परम्परित कथा में प्रतीकों की बौछार में चलता किया गया है । जैसे विश्वामित्र के साथ राम वन में राक्षसों का संहार करने के लिए जाते हैं । तो मार्ग में ताड़का को देखकर कवि की दृष्टि सिंहनी वा सर्पिणी पर जाती है --

"प्रबला दुष्टा जान ताड़का को तुम मारो,
स्त्री हत्या का पाप तनिक भी नहीं विचारो ।
क्यों न सिंहनी और सर्पिणी मारी जावे ?
जिसमें देश, समाज अकारण ही दुख पावे ।"[2]

इसमें अंगद - रावण - संवाद को छोड़कर शेष प्रसंगों को कवि ने सामान्य भाव को प्रतीकों द्वारा पुष्ट कर कथा का विकास किया है । "रामचरित चिन्तामणि में अंगद-रावण संवाद की चर्चा का आचार्य रामचन्द्र

शुक्ल भी प्रशंसा करते हैं ।"[3] लेकिन नवीन जीवन मूल्यों की दृष्टि से इस प्रसंग को भी हम सामान्य कोटि का मानते हैं, अंगद-रावण संवाद की निम्न पंक्तियाँ दर्शनीय है --

"कुशल से रहना है । तुम्हें दनुजा । तो फिर गर्व न कीजिए ।
शरण में गिरिए रघुनाथ के, निर्बल के बल केवल राम है ।
सुन कपे । यम इन्द्र कुबेर की न हिलती रसना मम सामने ।
तदपि आज मुझे करना पड़ा मनुज-सेवक से बकवाद भी ।
यदि कपे । मम राक्षस-राज का स्तवन है तुझ से न किया गया ।
कुछ नहीं डर है, पर क्यों वृथा निलज । मानव-मान बढ़ा रहा ।[4]

इस काव्य में सभी प्रसंगों में पारस्परिक वार्तालाप में सामान्य भाव ही प्राप्त होता है । जीवन के मर्म का स्पष्टीकरण उपाध्यायजी से इस काव्य में आंशिक रूप से वर्णित किया गया है । परम्परागत निर्वाह की दृष्टि से इस काव्य की गणना द्विवेदी युगीन राम-काव्यों में अपेक्षित माना जाता है । नवीन जीवन - मूल्यों की दृष्टि से कुछ प्रसंगों में छोड़कर शेष काव्य सामान्य श्रेणी का प्रमाणित होता है ।

कवि ने युगानुरूप नये आदर्शों की अभिव्यक्ति के लिए विचारों में परम्परा के बन्धन तोड़ा है लेकिन घटनाओं का नहीं । उपाध्याय जी का राम के विशद जीवन को विस्तृत रूप में प्रस्तुत करने में उनका प्रयास सफल हुआ । कवि ने राजा की कर्तव्यों की विस्तृत विवेचना प्रस्तुत की है । उनके विचार में राजा - व्यवस्था को चलाने वाली जनता की इच्छा है । राजा की नहीं । इस काव्य में कवि ने राजा - तंत्र का ही समर्थन किया है ।

2. साकेत :

"साकेत" श्री मैथिलीशरण गुप्त का प्रसिद्ध महाकाव्य है । गुप्त जी ने "साकेत" में अपनी प्रिय राम कथा एवं तत्सम्बन्धी अन्य प्रसंगों को ग्रहण करते हुए उर्मिला प्रसंग को विशेष रूप से वर्णन किया है । इस काव्य में कुल 12 सर्ग हैं । श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर के काव्येतर उपेक्षित नामक लेख से प्रभावित होकर गुप्त जी के मार्ग प्रदर्शक महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने "सरस्वती" नामक पत्रिका 1908 अंक में कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता के शीर्षक से एक एक निबंध लिखा । इस में द्विवेदी जी ने कहा --

"खेद की बात है कि उर्मिला का उज्वल चरित्र कवियों के द्वारा आज तक उसी तरह अछूता रह गया ।"[5]

इसलिए गुप्त जी ने इस प्रेरणासे "साकेत" के रूप में इस कमी को पूरा किया । "साकेत" का तात्पर्य "अयोध्या" से है ।

साकेत का प्रारंभ सरस्वती वंदना से होता है । इस सर्ग में गुप्तजी साकेत नगरी का वर्णन करते हुए लक्ष्मण - उर्मिला के प्रेमालाप का सुन्दर वर्णन किया है । द्वितीय एवं तृतीय सर्ग में मंथरा का कैकेयी को बहकाना और रामवन गमन का प्रसंग है । चतुर्थ सर्ग में राम माता कौशल्या से वनगमन की आज्ञा लेते हैं । सुमित्रा का लक्ष्मण को भी राम के साथ भेजने में स्वयं को गौरवान्वित मानना और उर्मिला लक्ष्मण के मार्ग की बाधा न बनकर विरह वेदना को सहने का अंश चर्चित है । पंचम सर्ग में गुरु वशिष्ठ और प्रजाजनों से विदा लेकर राम, लक्ष्मण एवं सीता वन के लिए प्रस्थान करते हैं । षष्ट सर्ग में राम-सीता-लक्ष्मण के विरह में राजा दशरथ कौशल्या, सुमित्रा, उर्मिला आदि शोकाकुल होने का दृश्य, सुमंत्र को अकेले लौटा देखकर दशरथ का प्राण

त्याग देने का प्रसंग है । सप्तम सर्ग में भरत शत्रुघ्न का ननिहाल से अयोध्या आगमन, पिता के निधन, राम-सीता-लक्ष्मण का वन गमन सुनकर हत चेत होना, कैकेयी द्वारा राजग्रहण की इच्छा को भरत का इनकार करना, पिता का दाह संस्कार करना, राम को वन से लौटाने के लिए साकेत की प्रजा के साथ चित्रकूट प्रस्थान करने का अंश है । अष्टम सर्ग में राम-सीता का आनन्द पूर्वक चित्रकूट में निवास का वर्णन, भरत साकेत वासियों सहित चित्रकूट पहुँचना कैकेयी अपने कुकृत्य पर क्षमा याचना करना, राम का अयोध्या वापस आने का तिरस्कार करना तथा भरत का राम की चरणपादुकाएं लेकर राज्य की देखभाल करने की आज्ञा को स्वीकार करने का विषय चर्चित है

दशम सर्ग में उर्मिला सरयू को अपनी सखी मानकर स्मृति रूप में अपनी बीती हुई घटनाओं, स्वजन्म रघुकुल वैभव, सीता स्वयंवर आदि का वर्णन निहित है । एकादश सर्ग में भरत और माण्डवी के तपस्वी जीवन का चित्र अंकित है । हनुमान-भरत का मिलन हनुमान का संजीवनी भरत से ही लेकर चले जाने का विषय भी है । द्वादश सर्ग में सीताहरण एवं लक्ष्मण शक्ति का समाचार सुनकर साकेतवासी रावण के विरुद्ध युद्ध के लिए सन्नद्ध होना, अन्त में श्रीराम-सीता, लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण सहित अयोध्या लौटना, भरत-राम का स्नेह मिलन एवं लक्ष्मण - उर्मिला के भावमिलन से "साकेत" की कथावस्तु समाप्त होता है ।

मैथिली शरण गुप्त जी "साकेत" की रचना में वाल्मीकि रामायण और मानस को ही रामकथा के आधार रूप में ग्रहण किया है । इस में उर्मिला-विरह प्रसंग के लिए भवभूति के उत्तर राम चरित का सहारा लिया है ।

साकेत की कथा को रामायण और पुराण के आधार पर ग्रहण करते हुए भी कवि ने उसमें मौलिकता को लेकर आधुनिक काव्यों में आधुनिक विचार-

धारा का होना ही काव्य की सफलता माना जाता है । इस दृष्टि से साकेत की कथा चिरपरिचित प्राचीन है लेकिन गुप्त जी ने उसमें बहुत कुछ परिवर्तन-परिवर्द्धन करके आधुनिक बनाया है । साकेत में लक्ष्मण-उर्मिला के प्रेममय जीवन का प्रसंग है । यह तो सर्वविदित है कि परम्परागत रामकथा में उर्मिला उपेक्षित नारी रही है । लेकिन गुप्त जी ने अपने साकेत का प्रारंभ अयोध्या वर्णन के बाद उर्मिला और लक्ष्मण के प्रेममय जीवन से करते हैं । इसी प्रसंग में रामराज्याभिषेक के वार्तालाप में उर्मिला ने राज्याभिषेक के दृश्य का एक चित्रपट दिखाया जिसे उसने स्वयं चित्रित किया था । कवि ने इस प्रसंग में व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक स्थिति का चित्रण किया है ।

पारिवारिक जीवन का प्रसंग भी साकेत में प्रारंभ से लेकर अन्त तक यह प्राचीन रामायण में अनुपलब्ध है । साकेत में स्त्री पुरूष का सम्बन्ध पिता-पुत्र, भाई-भाई, का सम्बन्ध पारिवारिक व्यवहार आदि भारतीय परिवार के सभी संसर्ग अपने आदर्श रूप में उपलब्ध है । "साकेत में एक सामान्य पारिवारिक भावना का विकास है । जो वर्तमान युग की सम्मिलित परिवार व्यवस्था का आभास लिए हुए है ।"6

रामायण में त्याग की प्रतिमूर्ति उर्मिला की राम वनवास प्रसंग में कहीं चर्चा नहीं है । गुप्त जी ने इस उपेक्षिता उर्मिला के जीवनवृत्त को दर्शाने में पूर्ण सफल हुए है । कवि ने उर्मिला सम्बन्धी सभी प्रसंगों में कल्पना के आधार पर चित्रित किया है । उर्मिला अपनी विरह अवधि को मनोवैज्ञानिक क्रिया कलापों, चेष्टाओं एवं भावनाओं के द्वारा काटने का वर्णन किया गया है । इस तरह कैकेयी मैलक निवारण, भरत माण्डवी का प्रसंग, व्यवसायियों का समाचार प्रसंग और भरत का सन्देह संजीवनी बूटी प्रसंग, हनुमान से राम-रावण युद्ध का समाचार सुनकर कैकेयी सहित साकेत समाज का रणोद्यत होना, उर्मिला का वीरत्व प्रसंग, वशिष्ट जी का योग

शक्ति द्वारा राम-रावण युद्ध दिखाना, पुनर्मिलन आदि का प्रसंग इस साकेत में नये परिप्रेक्ष्य में उपलब्ध है ।

साकेत में मूलकथा तो पुरानो हो है लेकिन उसके भाव आधुनिक विचारधारा के अनुकूल हैं । आधुनिक काल में राजनीति समाजपरिवार, मानवतावाद, विश्वबन्धुत्व को भावना का महत्वपूर्ण स्थान रहा है । साकेत को रचना में गुप्त जो को प्रथम उद्देश्य तो रवोन्द्रनाथ ठाकुर और महावोर प्रसाद द्विवेदो द्वारा आकृष्ट कराये गये उपेक्षित पात्रों का नवीन चरित्र निर्माण करना है । प्राचीन कथा को नूतन आदर्शवादो दृष्टि से व्याख्या कर नव चेतना को प्रेरणा देना है ।

3. राम को शक्ति पूजा :

राम को शक्ति पूजा श्री सूर्यकान्त त्रिपाठो "निराला" के द्वारा सन् 1936 ई. में प्रकाशित है । इसको कथा बंगलाको कृत्तिवासो रामायण से लो गयो है । लेकिन इस में अनेक परिवर्तन आवश्यकता के अनुसार कवि ने अपने ओर से किये हैं । "राम को शक्ति पूजा" काव्य सौन्दर्य को दृष्टि से आधुनिक हिन्दो साहित्य को प्रगति को सोमा कहा जाता है । कृत्तिवास में रावण कालो के कृपा पात्र के रूप में अंकित हुदय है जिससे राम चिन्तित हो उठते हैं कि उनके द्वारा रावण संहार नहीं हो सकेगा और जनकनन्दिनो सीता का उद्धार नहीं हो पायेगा ।

> असित वरणो कालो कोले दशानन
> स्पेर छटाय घन तिमिर नाशन
> आया होइते ना होइल रावण संहार
> जनक नंदीनो सोता होइल उद्धार ।[7]

राम की शक्ति पूजा की मूल कथा राम-रावण के महासमर का वह समय है । जब राम युद्ध में जय से निराश होकर वानर वाहिनी से घिरे चिन्ताकुल हो गये थे । फिर राम ने महाशक्ति की आराधना की और उनसे विजय का वरदान प्राप्त किया था । कथानक का आरम्भ होता है । जहाँ रवि अस्त हो जाता है और रावण का युद्ध अनिर्णीत रह जाता है :--

रवि हुआ अस्त, ज्योति के पत्र पर लिखा अमर
रह गया राम रावण का अपराजेय समर ॥ 6

कथानक का द्वितीय सोपान लंका की उमा निशा और राम के मनोभावों से आरम्भ होता है । भयानक अंधकार के वातावरण में राम का मन अंधेरी वीथियों में भटकने लगता है । तब राम पुष्पवाटिका, धनुष भंग, सीता मिलन, राक्षसों के वध के स्मृतिचित्रों को याद करते हैं । तीसरा सोपान हनुमान की अन्तर्कथा से शुरु होता है । वे राम की आँखों में अश्रुकण देखकर अपने क्षोभ को रोकने में विफल होते हैं । वे आकाश को समेटने उड़ते हैं । और शक्ति अंजना के रूप में उनसे छल करती है । चौथे में विभीषण और जाम्बवान की प्रेरणाएं हैं । पाँचवे में योगी राम की शक्ति उपासना है । राम हनुमान से 108 कमल मंगवा कर शक्ति की उपासना करते हैं । देवी शक्ति उनकी परीक्षा लेने के लिए अन्तिम कमल को चुपके से उठा लेती है । तब राम को स्मरण होता है कि बचपन में माता उन्हें राजीवनयन कहकर बुलाती थी । अतः राम इस कमल की पूर्ति अपने दक्षिण नेत्र से पूरा करना चाहते हैं । ज्यों ही वे ऐसा करते हैं । शक्ति प्रकट हो जाती है । और प्रसन्न होकर उन्हें विजय का वरदान प्रदान करती है ।

होगी जय, होगी जय हे पुरुषोत्तम नवीन
वह महा शक्ति राम के बदन में हुई लीन ।[9]

"राम की शक्ति पूजा" के राम निराला अधिक है । राम कम है । यह कथा भगवान राम की कथा न होकर "मानव राम" की कथा रूप में है । यहाँ जीवन निरंतर संघर्षमय दिखाई देता है । उनके जीवन में निरन्तर आशा-निराशा, सुख- दुख, मिलन बिछोह के घात - प्रतिघात उलझे हैं । बाह्य परिस्थितियाँ उनको बार-बार विचलित कर देती है । फिर भी राम अपने आत्म विश्वास को पुन: पुन: जागृत कर दृढ़ और दुर्जेय बन सम्पूर्ण बाधाओं पर विजय प्राप्त करते हैं । "वाल्मीकि के राम पुरुषोत्तम राम हैं । तुलसी के राम "भगवान राम" साकेत के राम ईश्वर-मानव दोनों हैं । विश्वास एवं बुद्धि का समन्वय लेकिन निराला के राम तो शुद्ध मानव हैं ।[10] वस्तुत: निराला ने अपने जीवन का यही संघर्ष राम के माध्यम से राम की शक्ति पूजा में व्यक्त किया है । धिक् जीवन जो पाता ही आया विरोध"[11] यह पंक्ति पूरी कविता को सूत्र जैसी है ।

डा० राम विलास शर्मा ने उचित ही कहा है -- "इस कविता की पृष्ठ भूमि पौराणिक है परन्तु उसका सत्य कवि के इसी जीवन का है ।.... वे आगे कहते हैं राम की शक्ति पूजा जैसी नाटकीयता निराला जी की और किसी भी कविता में नहीं । यहाँ उन्होंने अपने जीवन की अनुभूति, निराशा, पराजय, संघर्ष और विजय कामना को नाटकीय रूप दिया है । राम के रूप में कवि ने जीवन की परिस्थितियों को एक बार फिर चुनौती दी है ।"[12] इस काव्य की शक्ति नाम वेश और रूप बदल कर स्वयं महादेवी ही उपस्थित हुई है । शक्ति आशीर्वाद देती है फलत: राम रावण पर विजय

प्राप्त करते हैं। सीता शत्रु बन्धनों से मुक्त होती है। इस काव्य की रचना करते समय कवि की चेतना मस्तिष्क जहाँ राम-रावण के संघर्ष को उभारने के लिए प्रयत्नशील बन गयी है, वहीं उनके अचेतन मन की असंगतियाँ कुंठाएँ और आस्थाएँ भी इस कृति में उभर कर आई है।

इस काव्य के उद्देश्य के सम्बन्ध में चन्द्रकान्त वान्दिवडेकर कहते हैं कि -- "राम का मानवीय रूप कार्य के दौरान प्राप्त होने वाले निराशा, हताशा और संशय के क्षण प्रेरणादायी प्रेयसी का स्मृत्यात्मक रूप, असत्य और अन्याय की ओर शक्ति की अवस्थिति देखकर उत्पन्न होने वाली खोज और विश्व की सार्थकता, संगति एवं आदर्शोन्मुखता के ऊपर लगायी हुई प्रश्नांकित व्याकुलता की छाप, इस पर भी वह एक ओर मन से किया हुआ संकल्प और उद्देश्य को व्यापकता देने का राम का प्रयत्न, सर्वस्व दान के लिए उद्यतता इत्यादि कतिपय स्थितियाँ हैं। जो आज के पाठक को राम की शक्ति पूजा की समस्त धार्मिकता से बावजूद खींचती है।"[13]

कवि ने कविता के आशय को धार्मिक पौराणिक कथा के माध्यम से स्पष्ट किया है। इसलिए राम के मानवीय रूप के होते हुए भी कथा के साथ अनिवार्यतः जुड़ा हुआ धार्मिक मिथिकल सन्दर्भ है। जैसा कि दुर्गा का रूप महाशक्ति का युद्ध - भूमि में अवतरण, राम की शक्ति पूजा या आराधना आदि है।

4. वैदेही वनवास :

श्री अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध कृत वैदेही वनवास 1939 ई. की रचना है। वैदेही वनवास का अर्थ "सीता का परित्याग" है। कवि ने परम्परा के अनुसार "वैदेही वनवास" में सीता के परित्याग को नहीं माना है लेकिन कुछ काल के लिए सीता का स्थानांतरण किया है। राम के वन जाने

के आदेश को सीता लोक हित के लिए स्वयं स्वीकार करती है । इस काव्य में कुल अष्टादश सर्ग हैं ।

अयोध्या के उपवन में राम और सीता के वार्तालाप से काव्य शुरू होता है । एक गुप्तचर एक रजक के द्वारा कहे गये लोकापवाद की सूचना राम को देता है । इस के लिए चारों भाई लोकापवाद पर मंत्रणा गृह में विचार प्रकट करते हैं । वशिष्ट राम से इस समस्या को शांतिपूर्वक निभाने के लिए सीता को वाल्मीकि आश्रम में भेजने को कहते हैं । सीता राम को लोकापवाद से बचाने के लिए और लोक शांति के लिए राम के विचार को स्वीकार करती है । सीता कौशल्या अन्य भाइयों और बहिनों से वाल्मीकि आश्रम जाने के लिए भिन्न विदा लेती है । सीता लक्ष्मण का आश्रम प्रवेश और वाल्मीकि द्वारा उनका स्वागत है । लक्ष्मण का अयोध्या लौटना और उनका स्वगत है । लक्ष्मण का अयोध्या लौटना और राम से सीता के सभी समाचार बताने का प्रसंग है । सीता का चाँदनी से विरह वेदना प्रस्तुत है । सीता के वनवास करने पर भी लवणासुर के उत्पात के कारण राम उसे मारने के लिए शत्रुघ्न को भेजते हैं । तब शत्रुघ्न सीता से शुभाशीष लेकर जाते हैं । बाद में सीता युगल पुत्रों को जन्म देती है । सीता के पुत्रों को शिक्षा और कुलपति-निर्मित रामायण का लव-कुश द्वारा गाना, शत्रुघ्न का लवणासुर को मारकर फिर आश्रम आगमन शंबूक को खोजते हुए राम का पंचवटी के पास पहुँचना आदि है । अंत में सीता के पुनः प्रवेश राम-सीता के मिलन और सीता के अलौकिक में विलीन होने के साथ द्वारा कथा का समापन होता है ।

सीता परित्याग की कथा पुराणों में पर्याप्त रूप में है । हरिऔध ने इस काव्य में वाल्मीकि रामायण की कथा को मूल रूप में ग्रहण कर उसे पर्याप्त नया रूप दिया है । वस्तुतः कवि ने वाल्मीकि रामायण के सीता-

परित्याग के भाव को ही बदलकर सफल बनाया है । "मुकुन्ददेव शर्मा ने हरिऔध जी के "वैदेही - वनवास" के आधार पर गांधीवादी कवि माना है ।"[14] लेकिन हरिऔध जी को पूर्णतः अहिंसावादी या गांधीवादी कवि नहीं कहा जा सकता क्योंकि उन्हें अहिंसा वहीं तक मान्य है । जब तक शांति है [अर्थात्] लोकाराधन में रुकावट नहीं उत्पन्न होती । लेकिन उनकी रचनाओं के आधार पर कुछ समीक्षकों ने हरिऔध जी को समन्वयवादी कवि माना है । क्योंकि एक स्थान पर वे अहिंसा और दूसरे स्थान पर आवश्यकता के अनुसार दमन-नीति का पोषण करते हैं ।

परंपरागत राम कथा का आधार लेकर भी हरिऔध जी ने वैदेही-वनवास में बौद्धिक दृष्टि से उसमें आशा से अधिक परिवर्तन - परिवर्द्धन किया है । इस कृति के सृजन में कवि की व्यक्तिगत मानसिक स्थिति सहयोगी है । डा० मुकुन्द देव शर्मा ने इस सम्बन्ध में लिखा है -- "वे [हरिऔध] इस बात को कदापि सहन नहीं कर सकते कि राम ऐसे मर्यादा पुरुषोत्तम अपनी सती साध्वी पत्नी को निर्दोष तथा सच्ची होने पर असह्य धारणा पर वनवास दे दें । इस घटना को वे मानवता के लिए कलंक समझते थे । यही नहीं उस समय सीता गर्भवती थी इसलिए उनके साथ तो यह और भी भयंकर अन्याय था । अतः हरिऔध जी ने कालिदास और भवभूति के कथानक में परिवर्तन किया और मर्यादा पुरुषोत्तम से स्थानांतरण का प्रस्ताव राजप्रसाद में रखवाया ।"[15] इसलिए राम के इस चरित्र-दोष के प्रचालन में कवि ने मूल कथानक में जो परिवर्तन किया उसमें सफलता पायी, लेकिन तत्सम्बन्धी मार्मिक प्रसंगों और घटनाओं में अस्वाभाविकता आ गई ।

वैदेही वनवास में राम-सीता के वार्तालाप में कवि ने लोकादर्श एवं भावी घटना की सूचना दी है । वे व्यक्ति को किस प्रकार लोकहित आत्मबलि देनी

पड़ती है जिससे वह पुण्य का भागी होता है । यह प्रसंग परम्परागत राम-काव्य में नहीं है । वाल्मीकि रामायण में राम अपने मित्रों से पूछते हैं कि राज्य में उनके प्रति कोई कुधारणाएं तो नहीं व्याप्त है । इस पर उनके मित्रों में से भद्रक ने कह दिया कि --

कीदृशं हृदये तस्य सीता सम्भोगजं सुखम् ।
अंकमारोप्य तु पुरा रावणेन बलाद्धृताम् ।।
लंकामपि पुरा नीतामशोकवनिकां गताम् ।
रक्षसां वशमापन्नां कथं रामो न कुत्स्यति ।
अस्माकमपि दारेषु सहनीयं भविष्यति ।
यथा हि कुरुते राजा प्रजास्तमनुवर्तते ।।[16]

"वैदेही वनवास" में लोकापवाद और उसकी राम को सूचना बिल्कुल रामायण से भिन्न दिखाई देती है । इस काव्य में एक रजक अपनी पत्नी को द्वार पर रोककर उसके रात भर कहीं बिताने का कारण पूछते हुए कहा कि --

कर रही है तू भारी भूल ।
जो समझती है मुझको राम ।।
रही जो परगृह में षटमास ।
हुई है उनकी उन्हें प्रतीत ।
बड़ों की बड़ी बात है किन्तु,
कलंकित करती है यह नीति ।।[17]

इस प्रकार कवि ने आधुनिक राज्य के क्रियाकलापों, विश्वासों के आधार पर इस प्रसंग में बुद्धि संगत परिवर्तन किया है ।

वाल्मीकि रामायण में रामचन्द्र जी भाइयों को बुलाकर लोकापवाद के विषय में बताते हैं । इस में राम ने भाइयों की एक बात भी सुने बिना अपना निर्णय सुना दिया था । लक्ष्मण ने राम की आज्ञा स्वीकार किया । वैदेही वनवास में एकमात्र राम की आज्ञा नहीं चलने का दृश्य है । उसमें परस्पर चारों भाई लोकापवाद के विषय में मंत्रणा करते हैं । तब लक्ष्मण ने क्रोध पूर्वक लोकापवाद करने वालों को दलन करना चाहा । लेकिन राम ने हिंसा के विरोध में सामनीति को अपनाकर स्वयं को कष्टदेकर लोकहित करने का फैसला सुना दिया । परम्परागत राम कथा में रामचन्द्र जी वशिष्टाश्रम में सलाह करने नहीं जाते हैं । किन्तु वैदेही वनवास में वे वशिष्ठाश्रम में जाकर लोकापवाद और सामनीति के आधार पर सीता को वन में भेजने का विषय वशिष्ठ जी से व्यक्त करते हैं । इस प्रकार परिवर्द्धित अंश बहुत दिखाई देता है । इन में राम का सीता के सम्मुख लोकापवाद व वाल्मीकि आश्रम जाने का प्रस्ताव रखना, सीता बिदाई प्रसंग, लक्ष्मण के साथ सीता वन गमन प्रसंग, वाल्मीकि आश्रम में सीता का स्वागत, सीता को आश्रम में पहुँचाकर लक्ष्मण द्वारा राम को सीता सम्बन्धी वृतान्त सुनाना, लव-कुश एवं शत्रुघ्न आगमन प्रसंग, राम सीता मिलन प्रसंग आदि है । वैदेही वनवास में नहीं अपितु, युगानुरूप कवि की कल्पना प्रशंसनीय रही है ।

वैदेही वनवास में कवि ने भारतीय संस्कृति के पुनीत आदर्शों को युगीन परिवेश में रखकर एक सुधारवादी काम किया है । आप के काव्य में भौतिक आदर्शों के साथ सामाजिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना की गई है ।

"वैदेही वनवास" में कवि ने राम द्वारा लोकादर्श की प्रतिष्ठा की है । हरिऔध ने स्वयं भूमिका में कहा कि "महाराज रामचन्द्र मर्यादा पुरुषोत्तम, लोकोत्तर - चरित और आदर्श नरेन्द्र अथच महिपाल है, श्रीमती जनकनन्दिनी सती शिरोमणी और लोक पुज्या आर्य बाला है । इनका आदर्श-संस्कृति का सर्वस्व है । मानवता की महनीय विभूति है, और है स्वर्गीय

संपत्ती संपन्ना । इसलिए इस ग्रन्थ में इसी रूप में इसका निरूपण हुआ है । समयिकता पर दृष्टि रखकर इस ग्रन्थ की रचना हुई है, अतएव इसे बोध गम्य और बुद्धि संगत बनाने की चेष्टा की गई है ।"[18] कवि अपने उद्देश्य को व्यक्त करने में सफल हुआ है । वैदेही वनवास की कथानक की नवीनता की दृष्टि से देखा जाये तो भी एक सफल काव्य माना जायेगा ।

5. साकेत सन्त :

"साकेत सन्त" चरित्र प्रधान महाकाव्य है । इसकी रचना डा० बलदेव प्रसाद मिश्रा जी ने 1946 में की है । इस काव्य कीकथावस्तु का मुख्य आधार वाल्मीकि रामायण और साकेत है । "साकेत सन्त" भरत का पर्याय है । राम ने वनगमनोपरांत भरत ने अयोध्या में राम की चरण पादुकाओं को सिंहासन पर रखकर विरक्त होकर भी कर्मठ रूप से अयोध्या का शासन चौदह वर्षों तक संभाला । इस काव्य के शीर्षक के अनुसार साकेत के संत भरत के चरित्र का निरूपण ही इस काव्य का लक्ष्य और उद्देश्य है । कवि ने भरत के चरित्र को ही अनेक परिवर्तनों के आधार पर प्रस्तुत किया है । भरत के प्रति इस नवीन धारणा को लेकर भरत से संबंधित घटनाओं एवं पात्रों में भी कवि ने आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन किया है । इस काव्य में कुल चौदह सर्ग हैं ।

रामायण में कहीं भी भरत और माण्डवी के दाम्पत्य प्रसंग को प्रधानता नहीं दी गयी है । लेकिन इस में काव्यारम्भ ही भरत और माण्डवी के प्रेमालाप से होता है । मामा युधाजित के साथ भरत का ननिहाल जाना और ननिहाल में युधाजित द्वारा भरत को दशरथ का उत्तराधिकारी बनाने की योजना का प्रसंग है । युधाजित भरत के कैकेयी विवाह के पूर्व राजा दशरथ

द्वारा किये गये प्रण की बात बताते हैं और कैकेयी के ही पुत्र को राज्याधिकार मिलने की शर्त रखते हैं । अतः भरत के हितों की रक्षा के लिए वह अवध में मंथरा नामक दासी को भी रखे है । भरत अयोध्या में आनेवाले कुचक्र के बारे में बहुत ही चिन्तित होते हैं । भरत अयोध्या पहुँचने के पश्चात पिता के मरण और राम का वनगमन पर माता के कृत्यों पर क्रोधित होते हैं ।

इस के साथ भरत का आत्मग्लानि से माण्डवी को उर्मिला की देखरेख का भार सौंपना, भरत का पुरजन और परिजन : सैनिक गण के साथ चित्रकूट प्रस्थान करना, राम माताओं और पुरजनों से मिलन, श्रीराम भरत को 14 वर्षों तक राज्य संचालन करने का संकेत देना , भरत रामेच्छा के अनुसार राज्य संचालन का भार स्वीकार करना, भरत नन्दीग्राम में तपोमय जीवन व्यतीत करते हुए अवध के राज्य को संभालते हैं । हनुमान को राक्षस मानकर भरत बाण मारकर गिराना, बाद में हनुमान भरत का संवाद, चौदह वर्ष के पश्चात राम को लंका पर विजय हासिलकर अयोध्या आगमन, और अन्त में भरत राम को राज्य सौंपकर माण्डवी के प्रति कृतज्ञता प्रकट कर घर में ही हिमालय-सा सुख का अनुभव करते हैं । इस में कवि आधुनिक युग राजनीतिक सिद्धान्तों के भी दर्शन कराते हैं ।

"साकेत सन्त" की कथावस्तु परम्परागत रामकथा मात्र ही है । लेकिन उस में भरत राम के भक्त और कर्तव्य परायण है । साकेत सन्त में भरत को एक कर्मठ अयोध्या के राजा के रूप में दिखाया गया है । रामायण में कहीं भी भरत और माण्डवी के दाम्पत्य प्रसंग को महानता नहीं दी गयी है । साकेत संत में भरत और माण्डवी के प्रेमालाप को झलक देखी जा सकती

है । परम्परागत राम कथा में युधाजित भरत को ले जाने के लिए आते हैं लेकिन उसके पीछे उनकी कोई अन्य मनोवान्छा नहीं है । साकेत संत में युधाजित भरत को कैकेय प्रदेश ले जाकर अयोध्या का राज्य ग्रहण करने के कुचक्र की योजना बनाते हैं। युधाजित की बातों पर भरत शंकित होते हैं कि रात्रि में उन्हें अनेक दुःस्वप्न आते हैं । यह प्रसंग भी नवीन है और इस में मनोवैज्ञानिकता है । इस काव्य में कैकेयी के कलंक को निवारित करने के लिए उससे संबोधित कई स्थलों में परिवर्तन देखा जाता है । मिश्र जी की कैकेयी कलंक निवारण की यह कल्पना रामायण से नवीन होकर साकेत से भी आधुनिक रही है ।

साकेत वासियों का भरत के प्रति सन्देह और उसका निवारण चित्रकूट में भरत के आगमन की सूचना, भरत व संजीवनी बूटी प्रसंगों में प्राचीन रामायण की तुलना से आधुनिकता दिखायी है । इसके अलावा इस में वशिष्ठ जी द्वारा चित्रित प्राय लंका के युद्ध को साकेत वासियों को दिखाना परम्परा से हटने की बात है अर्थात नवीन प्रसंग है । रामायण में लंका विजय के बाद अयोध्या में राम-भरत मिलन का दृश्य है, लेकिन साकेत संत में भरत राम से मिलकर फिर तत्काल माण्डवी से मिलने चले जाते हैं -

हुआ मनोज्ञ मिलाप राम में भरत समाये,
छूटा नन्दी ग्राम अवध फिर से सब आये ।[19]

x x x

बाहर उत्सव कोलाहल थे, किन्तु भरत थे वहाँ कहाँ ।
गये अलक्षित स्वीय भवन में, तपस्विनी माण्डवी जहाँ ॥[20]

इस साकेत सन्त में जहाँ भरत के साथ माण्डवी के चरित्र में नवीन उद्भावना है वहाँ राम कथा के आश्रम भंडार का विकास भी है । इस काव्य के सम्बन्ध में श्री गोविन्दराम शर्मा की बातों को याद कर सकते हैं -- "साकेत संत का कथानक रामायण युग से सम्बन्ध रखता है, इसलिए उसमें प्राचीन युग का प्रत्यय रूप से चित्रण स्वाभाविक ही है । पर उसमें रचयिता के वर्तमान युग से प्रभावित होने के कारण "साकेत सन्त" में आज की समस्याओं का स्वर भी यत्र-तत्र मुखरित हो उठा है । आज का युग कृषकों का युग है । उनके शोषण पर पनपने वाले पूंजीवाद का आज अन्त हो रहा है ।"[21] इस काव्य में आधुनिक युग की मान्य मानवतावादी और विश्वबंधुत्व की भावना के दर्शन भी द्रष्टव्य है ।

डा० बलदेव प्रसाद गुप्त जी की इस काव्य के सृजन का उद्देश्य भरत के चरित्र की महत्ता को दिखाना है । अतः भरत के चरित्र में युगानुरूप अन्य नवीनताएं जोड़कर भरत के चरित्र को और महान बनाने के लिए सफल प्रयत्न किया है । इस तरह कवि ने साकेत संत में अपने संदेश एवं उद्देश्यों के आधार पर आधुनिक युग की परिस्थितियों का प्रतिनिधित्व करते हुए इस की रचना की है । कवि भरत में त्याग, सेवाभाव, अहिंसा, दया, क्षमा, कर्तव्य निष्ठा आदि उदात्त प्रवृत्तियाँ राजा के रूप में देखना चाहते हैं ।

6· अशोक वन :

प्रस्तुत अशोक वन काव्य गोकुलचन्द शर्मा के द्वारा 1951 में लिखा गया था । इसमें बारह सर्ग है । इस काव्य की प्रेरणा के सम्बन्ध में कवि ने कहा -- वही साहस अथवा दुस्साह इस रचना की प्रेरणा का मूल स्रोत है, जिसके उद्गम का श्रेय "रामचरित मानस" के अध्ययन को है ।[22]

राम नाम का जप करती हुई सीता का "अशोक वन" में निवास करना ही इस काव्य का सार है । इस में आधुनिकता कम है । कवि ने अपनी भूमिका में सीता को आधुनिक धरातल पर लाकर कहते हैं कि -- "तरुणि तपस्विनी सीता के इस मंजुल वेष में जो तेजोदीप्त ज्योति लक्षित होती है । वह भारतीय ही नहीं विश्वनारी का अमूल्य निधि है..... जय में विश्वविजयनी शक्ति है । और उसी में विश्व के कल्याण की कामना का निवास भी है ।"[23] कवि तुल काव्य में सीता का आधुनिक परिप्रेक्ष्य में सुन्दर चित्रण करने में सफल हुआ है ।

7. रावण महाकाव्य :

"रावण महाकाव्य" श्री हरदयाल सिंह का रचित काव्य है । इस में कवि ने रावण के जीवन-वृत्त को कथा का आधार बनाया है । "रावण" काव्य का आधार वाल्मीकि रामायण है । कवि ने स्वयं कहा है कि--

" ले वाल्मीकि मुनि सी सुकथा रसीली
औ सुधापुर मनोहर कल्पना का ।
स्वान्तः सुखाय हरिनाथ निशाचरों का,
काव्य प्रबन्ध अति मंजुल है बनाता ॥"[24]

प्रस्तुत महाकाव्य को कवि ने 17 सर्गों में विभक्त किया है । इस काव्य का आरंभ दक्षिण भारत में विंध्याचल पर्वत के वर्णन से होता है । यहाँ सुमाली केतुमती, प्रहस्त और कैकसी चारों कैकसी के लिए अनुकूल वर ढूंढ रहे हैं । बहुत विचार करने के बाद केतुमती विश्रवा से विवाह करना चाहता है । मार्ग में नारद ने कैकसी को उल्टा-सीधा समझाया, लेकिन वह अपने संकल्प से

विचलित न हुई । इसलिए वह भी विश्रवा मुनीश्वर के आश्रम के सामने समाधि लगाकर बैठी थी । विश्रवा की समाधि टूटी तो कैकसी ने चेतना लाभ करते ही मुनिवर से मनोवांछित वर मांगा है । उस वर के अनुसार विश्रवा से कैकसी राजकुमार प्रहस्त के साथ राजधानी को लौट गई । बाद में केतुमती का अनुरोध पाकर कैकसी ने तीन पुत्र और एक कन्या को जन्म दिया । वे रावण कुम्भकरण विभीषण एवं शूर्पणखा है ।

रावण का कुबेर से लंका छोड़ देने का प्रस्ताव पिता विश्रवा की आज्ञा के अनुसार कुबेर ने महीने की अवधि में लंकापुरी छोड़ दिया है । राक्षसों का बड़ी धूम-धाम से लंका में प्रवेश होना, रावण मंदोदरी का ब्याह करना, फलतः मेघनाद और धान्यमालिनी से अक्षयकुमार का जन्म होना मेघनाद का नाग-कन्या सुलोमा से गंधर्व - विवाह करना, रावण का पुलस्त्य मुनि से विष्णु ने उसके नानामाली को मार डालने की विषय से सारे देव-कुल का संहार करना और त्रैलोक्य जीता मुनियों ने शूर्पणखा को मार डालने की धमकी देना, लक्ष्मण शूर्पनखा का वध करने की प्रतिज्ञा करना , लक्ष्मण शूर्पनखा का नाक-कान काटना, फलतः प्रतिशोध के लिए रावण सीता-हरण करना, राक्षसों का वानरों और भालुओं के बीच युद्ध होना, जिसमें मेघनाद, कुम्भ-करण, रावण इत्यादि का मर जाना, विभीषण के प्रतिज्ञानुसार राज्य देकर राम सीता के साथ अयोध्या लौटना, विभीषण का मंदोदरी को अपनी पटरानी बनाने के प्रलोभन दिखाना, अरिमर्दन का लंका पर आक्रमण करना, विभीषण की मांग के अनुसार लवकुश का ससैन्य सहायता के लिए आना, विभीषण का संधि भंग करके अरिमर्दन को संग्राम के लिए ललकारना, नाग नागरी से दानव, दैत्य और नागों की सेना अरिमर्दन को सहायता देना, प्रजा के प्रतिनिधि मंगल के अनुरोध से लव कुश युद्ध बन्द करना अरिमर्दन राज्य करना और विभीषण का तप के लिए वन जाना, लव-कुश अयोध्या लौटने से रावण महाकाव्य की कथा समाप्त होती है ।

श्री हरदयालु सिंहने रामायण के प्रतिनायक रावण को रावण महाकाव्य में नायक का रूप दिया है । इस कथानक में पर्याप्त मौलिकता है । इस काव्य में कैकयी का वर अन्वेषण, मेघनाद का सुलोचना के विरह में पीड़ित और चन्द्रदूत द्वारा प्रिया संदेश भेजना, विभीषण का चारित्रिक उत्कर्षपूर्वक रावण पुत्र अरिमर्दन द्वारा लंका में स्वतन्त्र राज्य की स्थापना इत्यादि प्रसंग पूर्णतः नवीन है । कवि ने सीता का अपहरण राजनीतिक दृष्टि से समीचीन किया है । कथानक में कवि ने आधुनिकयुग की सामाजिक-राजनीतिक दशा से प्रभावित होकर नवीन घटनाओं की योजना की है । सूर्पणखा को जन्म-स्थान का गवर्नर नियुक्त करना, विभीषण की कूटनीति आधुनिक भावनाएं हैं । इस में पात्रों का चरित्र स्वाभाविक रूप में विकसित है । प्राचीन राम काव्यों में रावण को अधम, अत्याचारी , व्यभिचारी के रूप में चित्रित किया गया है । लेकिन इस में उसे समाहत धीरोदात्त नायक की भूमिका प्रदान की गयी है । यहाँ रावण एक महान भक्त एवं ईश्वर में पूर्ण निष्ठा और श्रद्धा रखने वाला पात्र है । विभीषण के चरित्र को आधुनिकता की विविध परिस्थितियों के अनुसार विकसित किया गया है ।

कवि ने अपनी प्रतिभा द्वारा काव्य कथा को युगीन परिवेश में रखा है । कवि ने आधुनिक युग की घटित होने वाली घटनाओं को पौराणिक पात्रों की जीवन घटनाओं में रखा है । कवि ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए राक्षसों के प्रति मानववादी और आदर्शवादी दृष्टिकोण को अपनाया है, इस काव्य में शूर्पणखा रामायण की भांति दुर्धर्ष राक्षसी न होकर एक प्रति-भाशाली शास्त्रीय नारी रूप में चित्रित की गई है । रावण को भी महान पंडित, कुशल राजनीतिक, राष्ट्र हितैषी के रूप में दिखाया है । शूर्पणखा के प्रशासन में आधुनिक युग के नारी जागरण की भावना द्रष्टव्य है ।

शूर्पणखा के नाक-कान का काटा जाना उसके मुनियों के प्रति विद्रोह को दमन को भावना व्यक्त है ।

हरदयाल सिंह का मूल उद्देश्य राक्षस पात्रों का चरित्रोत्कर्ष करना है, उनका विचार है कि राक्षस में भी गुण होते हैं । दुर्गुण उनमें किसी विशेष कारण से पैदा हो जाता है । कवि का लक्ष्य था कि पुरातन संस्कृतिक पात्रों द्वारा आधुनिक जन-जीवन समाज का अंकन करता इसके अलावा इसमें राजनीतिक मानववादी बुद्धिवादी आदि मूल्यों को प्रतिपादित करने के विषय भी है । रावण महाकाव्य में रावण का उत्कर्ष विभीषण का अपकर्ष नवीन दृष्टि से रेखांकित किया गया है ।

८· कैकेयी :

कैकेयी शेषमणि शर्मा मणिरायपुरी द्वारा रचित चरित-प्रधान काव्य है । इसमें सात सर्ग हैं । कवि ने कैकेयी के चरित्र को परम्परागत रूप से कुछ हेर-फेर करके प्रस्तुत किया है । इसकी रचना 1952 में की गयी है ।

कैकेयी काव्य की कथा का प्रारंभ कैकेयी के रोष से होता है । कैकेयी पति दशरथ से दोनों वरों की माँग करती है । भरत के राज्याभिषेक में देरी को देखकर सुमन्त्र अन्तःपुर में आते हैं और प्रजा की जो स्थिति है उसे कैकेयी को बताते हैं । कैकेयी प्रजा के विद्रोह करने पर उसे दमन करने का आदेश सुमन्त्र को देती है । राम वन गमन के लिए तैयार होकर कौशल्या से आशीर्वाद लेने का प्रसंग है । सीता, लक्ष्मण भी राम का अनुगामी होकर आगे बढ़ते हैं । लेकिन अयोध्या की जनता का दुखी होकर वन-पथ में सत्याग्रह करके लेटे जाने का दृश्य वर्णित है । राम जनता के सो जाने के पश्चात वन

जाते हैं । दशरथ का पुत्र वियोग से परलोक सिधारने का दृश्य , भरत एवं शत्रुघ्न के आने पर कैकेयी को भर्त्सना करना, कैकेयी का अपने कृत्यों पर पश्चाताप करते हुए कौशल्या से माफी मांगना, भरत सहित अयोध्या की पूरी प्रजा एवं अन्तःपुर का चित्रकूट आना, राम भरत का मिलन माता एवं व्यक्त होना अंत में कवि का सर्वोदय का प्रतिपादन करते हुए अहिंसा की विजय प्रतिपादन करना आदि वर्णित है ।

कैकेयी काव्य की कथा वस्तु का मुख्य आधार "वाल्मीकि रामायण" माना जाता है । कुछ प्रसंग रामचरित मानस से भी प्रभावित है । रामायण के अयोध्या कांड के अष्टम सर्ग से ११ तक की कथा से कवि ने कैकेयी काव्य में प्रभावित के रूप में ग्रहण किया है ।

महाराजा दशरथ कैकेयी के वनवास मांगने पर, राम-लक्ष्मण और सीता के असह्य वियोग की कल्पना करते हैं । दशरथ के सामने मृत्यु ही दिखाई दे रही है । दशरथ कैकेयी का उग्र और कठोर हृदय देखकर कहते हैं ।

यदि मेरे मरने से तेरा पूरा हो पहला वरदान ।
तो बस देर न कर जाने को आकुल है यह प्राण ॥
हाँ यह ले तलवार और बस कर इसको सीने के पार ।
देख न सकता मैं राघव को पर वन जाने को तैयार ॥[25]

इतना कहकर तलवार निकालकर मरने के लिए तैयार होते हैं । तभी राम आ जाते हैं । राम कहते हैं कि यह कैसा हाल पिताजी । इस प्रकार की घटना किसी राम काव्य में नहीं है । वाल्मीकि रामायण में दशरथ राम से कहते हैं कि कैकेयी ने मुझे वर के बहाने धोखा दिया है, इसलिए मेरी आज्ञा की अवहेलना करके तुम राजा बनो ।

किञ्चिमित्तमिद्र तात सलिले क्रीडितं त्वया ।
उत्कण्ठिता ते मातेयं प्रविश शिप्रमाश्रमम् ॥ [26]

बोला वत्स आ गये कैसे -
आज हुई इतनी देरी,
कब से विकल विलोक रही है
पंथ तृषित जननी तेरी ।[27]

श्रवण कुमार कथा को रामायण में दशरथ, अपने अन्तिम समय में कौशल्या को सुनाते हैं । "कैकेयी" में दशरथ श्रीराम को श्रवण कुमार की कथा सुनाते हैं । इसमें कवि ने कथा को स्थानांतरण के अलावा कुछ नहीं किया है । इसके अलावा इस काव्य में कैकेयी का प्रजा के दमन हेतु सुमन्त्र को आदेश देना, राम-वन-गमन को सुनकर अयोध्या की प्रजा का विद्रोह करना भी प्रसंग है । इस प्रसंग में स्वतन्त्रता संग्राम का प्रतिबिंब स्पष्ट होता है । कैकेयी के चरित्र में परम्परा से भी अधिक उग्रता एवं प्रचंडता का दर्शन किया गया है । लेकिन इन सबकी प्रतिक्रियास्वरूप वह अपनी भूल को स्वीकार करती है । कवि ने आगे चलकर कैकेयी के चरित्र का परिष्कार किया है किन्तु वह पूर्णतः सफल नहीं हुआ है । डा० बनवारी लाल शर्मा के शब्दों में "कवि ने कैकेयी के चरित्र का परिष्कार करना चाहा है किन्तु वह सरलतापूर्वक उसका निर्वाह नहीं कर पाया है ।"[28]

शेषमणि शर्मा को स्वतन्त्रता संग्राम की परिस्थिति ने क्रांतिकारी बना दिया है । राम के प्रेम में पगी जनता रामवन गमन के अवसर पर पथ में लेट जाती है । यहाँ पर कवि ने महात्मागांधी के सत्याग्रह को ही मूर्त रूप दिया है । अतः कृष्णनन्द्र शर्मा ने कहा -- "ब्रिटिशशासन प्रणाली का सच्चा

चित्र कवि ने तृतीय सर्ग में उरेह कर उसे त्रेता के राम के कैयी और दशरथ की कहानी में सुन्दरता से बिठा दिया है । यही कवि का कौशल है ।"[29] "राजनैतिक प्रतिबिम्ब ही इस काव्य की सफलता कहा जाता है ।"

कवि ने कैकेयी लिखने का मुख्य उद्देश्य 1942 की राजनैतिक परिस्थिति को रामायणी कथा के माध्यम से जन-जीवन में रखना है । इस के बारे में कवि ने खुद कहा कि -- "कैकेयी भी मेरे जीवन की करुणतम अनुभूतियों से प्रेरित है । इसके सभी पात्रों को मैंने राजनैतिक दृष्टिकोण से ही परखने का प्रयत्न किया है ।"[30] इस काव्य के द्वारा कवि ब्रिटिश शासन प्रणाली को चित्रित करना चाहता है । कैकेयी के चरित्र का उद्धार कर उसके पारम्परिक लांछन को छोड़ देना चाहता है । उसमें कवि ने सफलता भी हासिल की है ।

9• ऊर्मिला :

ऊर्मिला श्री बालकृष्ण शर्मा "नवीन" का महत्व पूर्ण काव्य है । इस काव्य की रचना 1957 ई• में हुई है । इस में षष्ट सर्ग है । इस काव्य की नायिका "ऊर्मिला" रामकथा की नारीपात्र है । इसलिए इस में ऊर्मिला के सन्दर्भ में राम-कथा का आकलन देखा जाता है ।

"ऊर्मिला" महाकाव्य में प्रथम सर्ग में ऊर्मिला की करुण कथा कहने का प्रोत्साहन है । इसके साथ वाल्मीकि और तुलसी की ऊर्मिला विषयकउदासीनता का भी संकेत है । इस काव्य में जनकपुरी के वैभव का विस्तृत वर्णन, सीता और ऊर्मिला का सौन्दर्य वर्णन जनक और उनकी पत्नी का पुत्रियों के भविष्य के सम्बन्ध में सोचना आदि प्रसंग है, द्वितीय सर्ग में धनुष-यज्ञ का वर्णन और राजा

जनक की चारों पुत्रियों का राजा दशरथ के चारों पुत्रों के साथ विवाह का वर्णन है ।कवि ने इस सर्ग में नव-दम्पत्ति की प्रणय क्रिडाओं के बड़े सुन्दर चित्रण किये. है । तृतीय सर्ग में सीता-राम के वनगमन के अवसर परर लक्ष्मण का ऊर्मिला से विदा मांगने का दृश्य अंकित है । उर्मिला कीवाणी का अत्यन्त ओजस्वी और आवेश पूर्ण वर्णन किया गया है । नवीन जी की ऊर्मिला रामायण की जैसी मूक उर्मिला नहीं है । ऊर्मिला आवेश में कैकेयी को यहाँ तक कहती है --

यह कैकेयी कौन, कि जो श्री रामचन्द्र को भेजे वन ?
यह कैकेयी कौन ? उजाड़े जो सीता का सुखद सदन ?
यह कैकेयी कौन उर्मिला का, उपवन जो करे वह न ?
कैकेयी लूट ले सुमित्रा, माता की गोद का धन ?[31]

अत: लक्ष्मण कई प्रकार से उर्मिला को समझाते हैं । चतुर्थ सर्ग में कवि ने उर्मिला के विरह का व्यापक वर्णन किया है । वह अपने प्रियतम के आगमन की प्रतिक्षा में लम्बी अवधि की विरह में काटती है । पंचमसर्ग में उर्मिला की मूक वेदना का वर्णन किया गया है । षष्ट सर्ग में रावण का वध राम दवारा विभीषण को लंका राज्य देना आदि का प्रसंग वर्णित है । कवि ने राम युग की राष्ट्र चेतना पर अपने युग की शब्द चेतना की विजय की सूचना दी है । इसके पश्चात उनके अयोध्या आगमन पर कवि ने लक्ष्मण और उर्मिला के मिलन की दार्शनिक प्रतिक्रिया प्रकटकी है ।

"ऊर्मिला" महाकाव्य का स्थूल आधार राम कथा है । कवि राम-कथाके स्रोत रूप वाल्मीकि रामायण से अधिक प्रभावित हुआ है । कवि ने

वाल्मीकि तथा उनकी "रामायण" का यत्र-तत्र उल्लेख भी किया है । लेकिन कवि उसके प्रस्तुतीकरण में घटनात्मक बाहुल्य न लाकर काल्पनिक कथा ग्रन्थों का नवीन सृजन की है । कहीं - कहीं कवि "उत्तर रामचरित" से भी प्रभावित हुआ है ।

नवीन जी की "उर्मिला" सर्वथा स्वतन्त्र सृजन है । इस काव्य में कवि का दृष्टिकोण मौलिक और परम्परा - निरपेक्ष माना जाता है । कवि को उर्मिला के उपेक्षित चरित्र का क्रमिक विकास और राम-कथा की प्रमुखतम घटना वन-गमन की नई सांस्कृतिक व्याख्या प्रस्तुत करने के दो अंश की प्रेरणा मिली है ।

इस काव्य में मौलिक परिवर्तन हुए हैं । कवि की अपनी कल्पना मात्र है " उर्मिला" में कवि ने जनक निवासियों, भवन, जीवन, जनक और जनक पत्नी के व्यक्तित्व पुत्रियों के प्रति प्रेम आदि का विपुल वर्णन है । अयोध्या में सीता, उर्मिला, माण्डवी, श्रुतिकीर्ति आदि बन्धुओं का हास परिहास एवं दाम्पत्य जीवन में कवि ने विशेष मौलिकता का वर्णन किया है । इसके अलावा कैकेयी दोष निवारण प्रसंग राम-वनगमन, उर्मिला-विरह वर्णन, राम-रावण का युद्ध प्रसंग विभीषण राज्याभिषेक, पुष्पक विमान में लक्ष्मण-सीता का संवाद, उर्मिला-लक्ष्मण का मिलन प्रसंग आदि का चित्रण हुआ है । यह हिन्दी प्रबन्ध काव्य परम्परा की महत्वपूर्ण कड़ी ही नहीं, समूची राम-प्रबन्धी काव्य धारा में कवि ने अपना स्वतन्त्र विचार व्यक्त किया है ।

राम परोक्ष रूप से उर्मिला काव्य में अ सहायक बने हैं । अत: डा० लक्ष्मीनारायण दुबे ने कहा कि -- "राम के चरित्र को सांस्कृतिक तथा समग्र भारतीय विचारणा की भूमिका पर रख कर अंकित करने के कारण, नवीन जी ने अपनी कला कुशलता का ही परिचय प्रदान किया है ।"[32] पुरातन संस्कृति में नव-युग की संस्कृति को भर कर कवि ने सांस्कृतिक पुनरुत्थान किया

है । कवि ने राम को प्राचीन संस्कृति के अनुसार मर्यादा पुरुषोत्तम मात्र न मानकर उन्हें आर्य धर्म एवं संस्कृति का युग प्रवर्तक कहा है ।

"उर्मिला" महाकाव्य की रचना का मुख्य उद्देश्य उपेक्षित एवं विस्मृता "उर्मिला" के चरित्र को प्रकाश में लाना ही है । राम-काव्य परम्परा में वाल्मीकि रामायण से लेकर साकेत तक उर्मिला का चरित्र उपेक्षित रहा है । अतः कवि ने इस कमी को अपने "उर्मिला" महाकाव्य में पूर्ण किया है । कवि का आर्य संस्कृति के समुन्नत जीवनादर्शों को युगानुरूप परिष्कृत कर प्रतिष्ठित करना उद्देश्य है । डा० देवी प्रसाद गुप्त के शब्दों में उर्मिला के चरित्र की विवाह योजना, आर्य संस्कृति के जीवनादर्शों की प्रतिष्ठा, युग चेतना की विराट व्यंजना के महद् उद्देश्य से प्रेरित होकर उर्मिला महाकाव्य की रचना हुई है ।[33]

10. रामराज्य :

डा० बलदेव प्रसाद मिश्र ने "रामराज्य" नामक प्रबन्ध काव्य की रचना की है । इसकाव्य में कवि ने वर्तमान युग के परिप्रेक्ष्य में राम के चरित्र का अंकन किया है । कवि ने इस में रामराज्य की स्थापना की भावना व्यक्त की है । साधारणतः व्यक्ति "रामराज्य" को एक कल्पना ही मानते हैं । इस पर स्वयं मिश्र ने कहाकि -- "रामराज्य" एक कल्पना ही सही परन्तु वह ऐसी कल्पना है जो व्यवहार में भी असीम लाभप्रद हो सकती है ।"[34]

"रामराज्य" में पूरे बारह सर्ग हैं । प्रथम सर्ग में वन के लिए निर्वासित राम सुमंत्र के रथ पर बैठकर वन की ओर बढ़ रहे हैं । श्रृंगवेरपुर में निषाद से राम-सीता-लक्ष्मण का स्वागत किया जाता है । इसी में कैकेयी

की वर याचना दशरथ की मृत्यु आदि का केवल संकेत मात्र है । दूसरे सर्ग में भरद्वाज आश्रम का, तीसरे सर्ग में वाल्मीकि से भेंट, चौथे सर्ग में चित्रकूट प्रसंग, पाँचवे में अगस्त्य परामर्श और पंचवटी प्रसंग, छटे में सूर्पणखा की घटना, सातवे में किष्किंधा काण्ड, आठवें में सुन्दरकाण्ड के आख्यान एवं नवम सर्ग में रावण-वध, दसवें में राम के राज्याभिषेक, ग्यारहवें और बारहवें में भारतीयों के मानव धर्म की घोषणा एवं रामराज्य की स्थापना है ।

डा० बलदेव प्रसाद जी रामराज्यमें सीधे वाल्मीकि रामायण से प्रभावित न होकर तुलसी के रामचरित मानस से प्रभावित है । उन्होंने अपनी भूमिका में कहा कि -- "कथा कृम का मुख्य आधार गोस्वामी जी का मानस है । कहीं-कहीं अन्य ग्रन्थों ने और कहीं कवि कल्पना ने भी अपना प्रभाव दिखाया है । .. ..कुछ स्थलों पर मैंने तुलसीकोपंक्तियों का अविरल अनुवाद कर दिया है और कहीं कुछ अन्य श्लोकों का ।"[35] फिर भी प्रत्यक्ष रूप से तो "रामराज्य" काव्य पर "मानस" का प्रभाव है किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से इस पर पौराणिक प्रभाव भी रहने की स्पष्टता है ।

कहा जाता है कि अतीत में वर्तमान का दर्शन ही कवि की सफलता है । श्री बलदेव प्रसाद उपाध्याय ने अपने काव्य में अतीत के रामराज्य को वर्तमान काल में स्थापित करने की चेष्टाकी है । अतः "रामराज्य" में कुछ परिवर्तन देख सकते हैं --

बलदेव प्रसाद जी ने राष्ट्रधर्म और मानव धर्म की घोषणा राम-राज्य की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत किया है । रामराज्य सम्बन्धी यह विचार कविकी मौलिक उदभावना और युगानुरूप परिवर्तन मानी गयी है । कवि ने इस काव्य में उत्तर दक्षिण की अभेद स्थिति का निरूपण किया है । "रामराज्य" मेंकवि

भारतीय संस्कृति की व्याख्या प्रस्तुत की है । इस काव्य की कल्पना में भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत वर्णाश्रम-धर्म, पुरुषार्थ, आचार संस्कार और आश्रमों का चित्रण किया गया है । इन विचारों को व्यक्त करने के लिए कवि ने राष्ट्र भाषा को ही समुचित माना है । ऐतिहासिक राम-राज्य की कथा में भाषा और संस्कृति का मेल कवि का युगानुरूप मौलिक विचार है ।

रामराज्य की कल्पना में प्रस्तुत समस्याओं के अनुरूप विश्वबंधुत्व की भावना भी है ।

स्व का विस्तार तो विश्वव्यापी है, राष्ट्र से बड़ा
विश्वबंधुत्व हो क्यों हो विश्वत्मैक्य प्रशस्त हो ॥[36]

यहाँ ऐतिहासिक "रामराज्य" की कल्पना के आधार पर कवि की युगानुरूप राम राज्य की कल्पना होपरिवर्द्धित रूप में हमारे सामने उपस्थित हुई है ।

राम राज्य में कवि ने युग की अनेक समस्याओं का दर्शन कराया है । मिश्र जी ने विश्व-बन्धुत्व की भावना , अहिंसा, पंचशील, वर्णव्यवस्था जैसे सिद्धान्तों पर भी नजर डाली है । कवि ने अपने इस कलियुग में उस त्रेतायुग के राम राज्य को आकार रूप से दर्शाना चाहते हैं । मिश्र जी भारत की समृद्धि के लिए रामराज्य की स्थापना करते हैं -

भारत की सीता- समृद्धि को रावणत्व से मुक्त कराकर
खिले जाये रामत्व मनुज का, ऐसा योग रचे विश्वेश्वर ।।[37]

कवि का उद्देश्य रामराज्य के प्रतीक द्वारा सुराज्य की स्थापना करना है ।

11. भूमिजा :

"भूमिजा" श्री रघुवीर शरण मिश्र का एक महत्व पूर्ण काव्य है । इस काव्य का प्रणयन 1961 में हुआ है । काव्य की नायिका सीता है । इस काव्य का प्रमुख आधार वाल्मीकि रामायण है ।

कवि ने भूमिजा में निर्वासिता सीता के प्रति संवेदना व्यक्त करते हैं । वे समाज के प्रति आक्रोश व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि सीता का भाग्य एक सामान्य स्त्री के भाग्य से भी अधिक प्रवंचनापूर्ण है । कहने के लिए तो वे राज-वधू थी लेकिन उनके विवाहित जीवन का अधिकांश भाग अरण्य में ही व्यतीत हुआ और वह भी औपचारिक है -

ततस्तां परुषैर्वाक्यैरभितर्ज्य स महास्वन ।
अंकेनादाय वैदेही रथमारोपयत्तदा ।।[38]

काम भावापन्न रावण ने सीता को बलपूर्वक उठाकर रथ में डाल दिया था । ऐसा वाल्मीकि रामायण में कहा गया है --

"तामकामां स कामार्त : पन्नगेन्द्रवधूमिव ।
विचेष्टमानामादाय उत्पपाताथ रावण: ।।[39]

सीता की अग्नि-परीक्षा लंका में हुई थी । लेकिन इस पर भी उनके चरित्र का दोष निवारण नहीं माना ।

सीता ने गंगा में डूब कर आत्म हत्या करने का विचार किया लेकिन मुनि वाल्मीकि ने प्रार्थना कर सीता को आत्महत्या नहीं करने दिया । सीता ने गर्भ के रूप में रघुवंश के तेज की रक्षा करने हेतु अपनी विचार को बदल दिया । अतः सीता में आत्म विश्वास का भाव जागरित हुआ । सीता ने अब संसार की आपत्तियों से डरकर सामना करने का साहस बटोर लिया -

आशा हार गई सीता की,
पर विश्वास न हारा ।

जीत जीत कर हारी सीता
पर अभ्यास न हारा

भाग्य बदलने को सूरज सी -
अग्नि चली हत भागी ।।[40]

सीता ने लवकुश नामधेय दो पुत्रों को जन्म दिया । भूमिजा ने अपने पुत्रों के समक्ष श्रम के प्रति आस्था का आदर्श उपस्थित किया । श्रीराम ने सम्पूर्ण राष्ट्र को एक झण्डे के नीचे लाने के उद्देश्य से अश्वमेध यज्ञ करने के लिए दीक्षित अश्व के साथ भाइयों के नेतृत्व में विजयिनी सेना भेजी । सहयोग से सेना वाल्मीकि मुनि के आश्रम में पहुँची, जहाँ उसका सामना लव-कुशों ने किया । वाल्मीकि की मध्यस्थता और अनुरोध में भयंकर युद्ध रुक गया । श्रीराम ने वास्तविकता को जानकर अपने पुत्रों और पत्नी को स्वीकार किया है । सीता करुणा से द्रवित हुई और पृथ्वी में अन्तर्निहित हो गयी । श्रीराम लवकुश को लेकर अयोध्या पहुँचे और उन्हें राज्य-सिंहासन का भार सौंप कर सीता के दुःख से चिन्तित होकर कण-कण में रम गये । यही भूमिजा की कथा वस्तु है ।

इस काव्य में सीता-वनवास लवकुश का जन्म, लव-कुश द्वारा राम की सेना का विरोध उनकी विजय और सीता का राम से अपने पुत्रों को देकर पृथ्वी में समा जाना आदि प्रसंग सम्मिलित है । यह काव्य ज्यादातर वाल्मीकि रामायण से प्रभावित होकर लिखा गया है । कथा में अधिक परिवर्तन नहीं है । और न उसे चित्रण करने में आधुनिकता है । इस काव्य के कथानक के बारे में श्री रघुवीर शरण मिश्रजी ने कहा कि "भूमिजा सीता के वनवास जीवन की रचनात्मक कहानी है । ..... वास्तव में मैं सीता के माध्यम से समाज एवं राष्ट्र का कुछ कहना चाहता हूँ । सीता कीचेतना से आधुनिक गति-विधि को उभारना चाहता हूँ न्याय और निर्माण की आवाज बुलन्द करना चाहता हूँ । सीता जनकदुलारी होने के साथ-साथ वर्तमान चेतना की प्रतीक भी है । ...... भूमिजा के माध्यम से मैं मानव के अहम को द्रवित करना चाहता हूँ ।"41

कवि ने भूमिजा पात्रधारीसीता के द्वारा आजकल की नारी की स्थिति को बताने की कोशिश की है । जिस प्रकार के लक्षण सीता में सहिष्णुता, क्षमा, पालन , भक्ति, शक्ति आदि है । आज की नारी में भी देख सकते हैं । सीता में नारी का सर्वोज्वल चरित्र था । इस में पुरातन घटनाओं को नवीन अर्थ प्रदान कियागया है । अंत में सीता में कर्म का स्वर है अर्थात् सीता कृषि है, उसकी उसी रूप में उपासना का कवि ने की है । वर्तमान में पुनः राम का आह्वाहन किया गया है ।

"राम तुम्हारी सीता का फिर धैर्य छुटा जाता है ।"42

12. शबरी :

शबरी एक खण्ड काव्य है । इस के कवि श्री नरेश मेहता है । इस काव्य की कथा को वाल्मीकि रामायण के अरण्यकाण्ड के राम द्वारा "शबरी" उद्धार प्रसंग से लिया गया है ।

तौ दृष्ठा तु तदा सिद्धा समुत्थाय कृतांजलि ।
पादौ जग्राह रामस्य लक्ष्मणस्य धीमत: ।।[43]

इस रचना के पीछे कवि के निश्चित प्रयोजन की भावना है । इस की कथा निम्नवर्ग की एक साधारण स्त्री के आत्मिक और आध्यात्मिक संघर्ष की कथा है ।

शबरी काव्य कृति त्रेता, पंपासर तपस्या, परीक्षा एवं दर्शन नामक पांच अध्यायों में विभक्त है । त्रेता में समाज धीरे-धीरे विकसित हो रहा था । आर्य संस्कृति का प्रसार दीख पड़ता था । लेकिन अन्य जातियों में आदि सभ्यता विद्यमान थी । व्यापारी के दूर-दूर तक व्यापार करने की और समाज में शांति, धर्म . नीति की स्थापना की चर्चा, जो वर्ण व्यवस्था के नियमों का पालन नहीं करता तो उसे राक्षस कहलाने की प्रथा, समस्त वर्णों में ब्राह्मण सर्वश्रेष्ठ मानने का विचार, शबर जाति में श्रमणा नामक एक शबरी अनिच्छा पूर्वक उस जंगली समाज में रहने का संदर्भ, उस घर में शबरी का जीवन मुश्किल होना और अंत में शबरी का एक दिन घर से निकल पड़ने की कथा चर्चित है ।

शबरी का जंगलों को पारकर पंपासर पहुंचना मतंग ऋषि दर्शन पाना, मतंग ऋषि से शबरी का परिचय, मंत्र ऋषि की अछूत स्त्री का आश्रम में रहने को अस्वीकार करना अंत में गोशाला के प्रबन्ध एवं गायों की सेवा का भार वहन के रूप में आश्रम में जगह पाना, शबरी का पंपासर के एक कोने में कुटिया बनाना, गुरु की आज्ञानुसार शबरी का आश्रम का जीवन कठोरता से व्यतीत करना, शबरी का तन्मय होकर कीर्तन करना, शबरी की भक्ति पर मतंग ऋषि का विश्वास कायम होना आदि अंश पंपासर, तपस्या नामक अध्याय में वर्णित है ।

परीक्षा एवं दर्शन अध्याय में शबरी की भक्ति साधना का भी बहुधा प्रवचन में उल्लेख किया जाना मतंग का शबरी को परमसती एवं भक्ति शिरोमणि समझना मतंग ऋषि के शबरी को आश्रम में प्रवेश कराने पर आश्रम-वासियों को अनुचित प्रतीत होना, आश्रमवासियों का शबरी की निंदा करना, मतंग ऋषि एवं शबरी का आश्रम को त्यागना, मतंग ऋषि के द्वारा शबरी के पति को माफ करना, राम और लक्ष्मण का पंपासर में मतंग के पास आना, शबरी का राम के आगमन से पुलकित होना और राम को शबरी . बेर चख कर मीठे बेर देना, अंत में शबरी के आकाश की ओर प्रस्थान करने के काव्य की समाप्ति होती है ।

शबरी के आख्यानक काव्य को आज के प्रगतिशील आदिवासी संस्कृति, अछूतोद्धार, अस्पृश्यता, हरिजन कल्याण, समाज सेवा और मानव विकास की दृष्टि से युगानुकूल प्रस्तुत किया गया है । श्रीनरेश मेहता "शबरी" के माध्यम से सामाजिक रूढ़ियों और परम्पराओं का विवेचन करना चाहते हैं । इस काव्य का मुख्य विषय वर्ग मुक्ति का संघर्ष रहा है । चरित्र की दृष्टि से शबरी मन्द-चरित्र लगती है । कवि द्वारा पुराख्यान कथा के माध्यम से प्रयुक्त नवीन मौलिक उद्भावनायें हैं । शबरी का घर-परिवार का त्याग मतंग ऋषि के आश्रम में जाना, तपोवासियों द्वारा उसका तिरस्कार आदि अनेक आधुनिक भावनाएं इस में प्राप्त होती है ।

"शबरी" काव्य में राम का स्वागत स्वयं मतंग करते हैं । कवि के द्वारा लोक प्रचलित प्रसंगों और विश्वासों को काव्य में प्रस्तुत किया गया है इस में शबरी द्वारा राम को जूठे बेर खिलाने का प्रसंग है --

प्रभु को देगी वह चख कर, होंगे रसाल जो मीठे,
वह प्रभु की जिह्वा बनकर चक्खेगी कड़वे-मीठे ।

वह सहज-भाव से चखती, मीठे प्रभु को दे देती,
प्रभु सहज भाव से खाते, आँखों से कृपा बरसती ।।[44]

लेकिन वाल्मीकि रामायण और रामचरित मानस में कहीं भी इस प्रकार के सन्दर्भ अप्राप्त है । वाल्मीकि रामायण में उल्लेख है कि शबरी ने राम के लिए पंपातट के फलमूल जिसका उसने संचय किया था । और पाद्य, अर्घ्य आचमनीय आदि सब से उनका स्वागत किया -

पाद्यमाचमनीयं च सर्वं प्रदाद् यथाविधि
तामुवाच ततो रामः श्रमणीं धर्म संस्थिताम् ।।[45]

इसी प्रकार रामचरितमानस में शबरी - रसीले कन्दमूल फलादि को लाकर राम को समर्पित करती है । राम उसके स्वाद की बड़ाई करते हुए खाते हैं --

कंद मूल फल सुरस अति दिए राम कहुं आनि ।
प्रेम सहित प्रभु खाए बारंबार बखानि ।[46]

"शबरी" खण्ड काव्य में भक्ति शक्ति, युग चेतना के साथ ही उसको आधुनिकता भी प्राप्त हुई है । कवि ने "शबरी" को युग धर्म के स्वर को प्रबलता का वर्चस्व प्रदान कर दिया है ।

13. जानकी जीवन :

"जानकी जीवन" राजा राम शुक्ल द्वारा लिखा गया काव्य है । इसकी रचना 1971 में हुई है । यह काव्य नव्य रामाख्यान परम्परा का महाकाव्य है । इस काव्य में लंका विजय के पश्चात अयोध्या में लौटे हुए राम के राज्याभिषेक और जानकी के परित्याग और वाल्मीकि आश्रम में लव और कुश का जन्म होने की गाथा से सम्बद्ध है । इस में जानकी त्याग की करुणा गाथा को युगानुरूप काव्य बद्ध किया है । शुल्वाद में कवि ने राम के पूर्ववर्ती जीवन को भी आवश्यकता के अनुसार स्थान दिया है । इस काव्य में इक्कीस सर्ग हैं ।

इस काव्य का आरम्भ आत्मनिवेदन में गिरिराजवंदना से हुआ है । राम के चौदह वर्ष के उपरान्त अयोध्या वापस आने की वेला में सभी अयोध्यावासी और भाई-बन्धु के बड़ी उत्सुकता से राम-सीता एवं लक्ष्मण की प्रतीक्षा करने का चित्रण प्रथम सर्ग में हुआ है । रामागमन पर हर्षोल्लास मनाया जाना, गुरु वशिष्ठ एवं अरुन्धती का भी इस शोभा को देखने के लिए उपस्थित होना राम का पुरुषों के मध्य वन-वृत्तान्त सुनाना सीता का महिलाओं के मध्य दृश्य बताना द्वितीय सर्ग में चर्चित है । तृतीय , चतुर्थ सर्ग में राम का स्वयं अपने अनुजों को पूर्ववर्ती घटनाओं को अतीत कालनी स्मृति के रूप में सुनाना, कैकेयी की ग्लानि और अन्य दशरथ रानियों की हृदयाभिव्यक्ति का वर्णन, सीता एवं उर्मिला का परस्पर एक दूसरे को महानता प्रदान करने का संवाद का भी वर्णित किया गया है ।

राम के राज्याभिषेक का हृदयहारी वर्णन राम और सीता के माध्यम से कुछ नीति वचनों का उद्घाटन करना षट्ऋतुओं की विभिन्न दशाओं को जन-

जीवन में देखना, राम दवारा वर्तमान युग-बोध का भी परिचय देना, रामराज्य की प्राचीन कल्पना को उसी रूप में स्वराज्य में देखना ऋषिश्रृंग राजा दशरथ के जामाता है, उनकी पुत्री शांता का विवाह ऋषिश्रृंग के साथ होना, गुरु विशिष्ठ सीता त्याग के भावी संकटका आभास प्राप्त करना, वाल्मीकि आश्रम में सीता के वनवास का वर्णन करना, शोक से संतप्त सौमित्रि सीता को वन में छोड़ने के लिए जाना , अयोध्या में सर्वत्र शोका-कुलता फैल जाना, राम की शोकाकुलता का वर्णन, धोबी एवं धोबी की पत्नी का पश्चाताप प्रसंग, सीता वनवास के कारण सभी माताओं के करूण कुन्दन का मर्मस्पर्शी वर्णन, इसी में शंबूक की तपस्या का उल्लेख वाल्मीकि और जनक के प्रश्नोत्तर में सीता-राम मिलन की आशा मिलना, अश्वमेघ एवं राजसूय यज्ञ का प्रसंग , राम की सेना को किसी सेना का नहीं अपने दो कुमारों का सामना करना, चन्द्रकेतु, शत्रुघ्न लक्ष्मण सहित सेना का पराजित होना, अन्त में राम का स्वयं युद्धस्थल पर जाना, राम का अपने पुत्रों को न पहचानने की आशंका सीता एवं वाल्मीकि के साथ युद्धभूमि में जाना, लव-कुश का राम के चरणों में गिर पड़ना , राम के साथ सीता का अयोध्या लौटना, सीता सहित राम के अश्वमेघ की मूर्ति आदि के साथ काव्य का समाप्त होना है ।

"जानकी जीवन" महाकाव्य मूल रूप से वाल्मीकि रामायण की कथा से प्रभावित हुई है । राजारामशुक्लजी ने खुद ही लिखा है --

सजायी भाषा में अमर कृति वाल्मीकि कवि की
बनी हिन्दी , हिन्दी जननि मुख सौभाग्य सुखदा ॥[47]

इस के अलावा कवि तुलसी के रामचरितमानस और भवभूति के उत्तर रामचरित एवं पुराणों से प्रभावित हुए हैं । श्रीराम का भाइयों के साथ लोकापवाद की चर्चा और सीता को वन में त्यागने के प्रसंग को कवि ने रामायण के उत्तर काण्ड सर्ग 45-46 से स्वीकार किया है । इस प्रकार प्रमुख रूप से यह काव्य " वाल्मीकि रामायण" के कथा प्रसंगों से प्रभावित है और गौण रूप से अन्य कृतियों से प्रभावित होते हुए भी इसमें मौलिकता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है ।

सीता परित्याग के समय अयोध्या में राज-परिवार के उपस्थिति का प्रसंग, वशिष्ठ पत्नी अरुंधती का प्रसंग नवीन रूप से चित्रित किया गया है । इक्ष्वाकुवंशी राजाओं की विशेषताओं को चित्रशाला के बहाने से अंकित कर दिया है । कवि ने परंपरा से हटकर नवीन ढंग से चित्रशाला के बहाने राजाओं का परिचय दिया है । वाल्मीकि रामायण में दूत रामचंद्र जी से सीता के विषय में राम बहुत लम्बी चौड़ी अशुभ बातें करते हैं । किन्तु "जानकी जीवन" में सीता के त्याग का दृश्य प्रकृत में ही दिखाई देता है

घोर चारों ओर हा हाकार का -
शोर मानो रुद्र का आक्रोश था ।
अंधकारच्छन्न हो आकाश भी ।
आते शोकोच्छ्वास आहों से भरा ।।[46]

सीता के द्वारा मर्म को छिपाने का प्रसंग[49] जानकी जीवन के अलावा और किसी रामायण में नहीं है । अयोध्या की प्रजा का प्रसंग धोबी के पश्चाताप का प्रसंग का वर्णन भी मौलिक है । "जानकी जीवन" में धोबी की पत्नी का भी परिवर्धित रूप दोष प्रक्षालन में हुआ है --

चिल्लाई सविषाद एक वामा वहाँ -
मैं ही हूँ वह मंद भाग्य हीनामहा ।
पाती दण्ड प्रचण्ड दण्डनीयायही
हा ! मेरा अपराध दण्ड माँ को मिला ।[50]

उर्मिला की का प्रसंग, कैकेयी पश्चाताप प्रसंग, शंबूक वध, बिठूर के मेले का प्रसंग, लव-कुश जन्म और पालन - पोषण का प्रसंग, लव-कुश द्वारा युद्ध करने का प्रसंग आदि उनके जीवन में घटनास्थल की आवश्यक परिवर्तनों द्वारा मार्मिक बनाने के लिए हुआ है । कवि ने युग-बोध, का आवश्यक उपदेशों प्राकृतिक वर्णनों, भावभूमियों की कल्पना के द्वारा विस्तृत रूप में वर्णन किया है ।

राजाराम शुक्ल जी राष्ट्रीय कवि हैं । अतः अपने काव्य के सातवें सर्ग में अपनी कल्पना के आधार पर युग-बोध का परिचय दिया है । आधुनिक युग में शोषक एवं शोषित वर्ग पर गहरा तरस दिखाया है ।

संदर्प से प्रबल, दुर्बल को न त्रास दे ।
बेगार ले न खल दुर्बल दीन हीन ।
x x x
संतुष्ट हो सफल वेतन हो स्वकोष से,
उत्कोच पोचपन नोच खसोट छोड़ के ।[51]

इस प्रकार युग की सब से ज्वलंत समस्या राजनीतिक एवं सामाजिक होती है ।

इस काव्य के रचने में कवि का उद्देश्य जानकी के विशद जीवन का वर्णन करना है । राष्ट्र के हित के लिए वह मानवात्मा में आदर्श की स्थापना करना चाहता है । अत: राष्ट्र कल्याण के उद्देश्य से लिखा गया विशद जानकी जीवन से संबंधित यह एक महत्त्वपूर्ण काव्य माना जाता है । कवि का प्राचीन संस्कृति से विशेष मोह होने के कारण उस में यथास्थान प्राचीन कथाको उसी रूप में ग्रहण किया गया है ।

<u>14. संशय की एक रात :</u>

"संशय की एक रात" श्री नरेश मेहता के द्वारा 1962 में लिखी गयी है । ये राम काव्य परम्परा में नवीन कोटि का काव्य है । इस में नरेश मेहता ने वाल्मीकि रामायण के सुतेबन्ध और युद्ध के बीच की एक रात को अपनी कथा का आधार बनाया है ।[52]

"संशय की एक रात" में राम युद्ध शांति के द्वन्द्व से चिन्तित है । जिस प्रकार साधारण मनुष्य के मन में अनेक संशय जन्म लेते हैं और वह क्या करें क्या न करें कि स्थिति में पहुँच जाता है, ठीक उसी प्रकार राम की भी स्थिति रहती है । उनके मन में यह प्रश्न बार-बार उठता है कि क्या युद्ध समस्याओं का अन्तिम हल है । काव्य के आरम्भ में राम रामेश्वरम् के सिन्धु तट पर विचार मग्न और उदास मन: स्थिति में रहते हैं । रावण से युद्ध के लिए सेतु का निर्माण हो चुका है । लेकिन इन परिस्थितियों में राम के मन में अनेक प्रश्न उठते हैं कि एक ओर वह सोचते हैं कि सीता को छुड़ाने के लिए वे रावण से युद्ध कर लें, लेकिन दुसरा विचार है कि यह युद्ध सार्वजनिक हित में न होकर व्यक्तिवादी दृष्टिकोण का बोधक है । राम की शंकाओं का निवारण दशरथ और जटायु की प्रेत छाया और मंत्री परिषद की बैठक से दूर हो जाता है ।

इस प्रकार राम परिताप से प्रारंभ के संशय से होते हुए भी निर्णय की स्थिति तक पहुंच गये हैं ।

"संशय की एक रात" के राम की विशेषता है उनका खण्डित व्यक्तित्व कवि ने राम के ऐतिहासिक आत्म मंथन एवं सामूहिक दायित्व बोध से घिरे हुए राम का वर्णन किया है । वाल्मीकि रामायण के राम का व्यक्तित्व और तुलसी के मानस के राम का व्यक्तित्व जटिल नहीं दिखाया गया है । इस प्रसंग पर डा० मदन गुलाटी ने कहा कि -- "संशय की एक रात के राम में एक उल्लेखनीय बात जरूर है वह है वे करुणा की मूर्ति है । वाल्मीकि के राम मानव हैं तुलसी के ईश्वर । तुलसी ने अपने राम को शील शक्ति और सौन्दर्य का अद्वितीय संयोग बना कर प्रस्तुत किया है । वाल्मीकि और तुलसी दोनों ने राम की वीरता, पौरुष के पीछे करुणामय स्वरूप चित्रित किया है ।"[53]

इस काव्य में राम की संपूर्ण संवेदना की विशेषता है कि राम जब एकान्तिक होते हैं तो सामूहिकता से ओत-प्रोत हो जाते हैं । जब वह सामूहिकता को स्वीकार करते हैं तो नितान्त एकान्तिक हो जाते हैं । इन दोनों परस्पर विरोधी स्थितियों का समाधान ही इस काव्य की प्रधान समस्या बन गई है । यह काव्य पूर्ण रूप से इसी केन्द्र पर आधारित है ।

आज हम जिस युग में जी रहे हैं, उसमें युद्ध का सबसे भयानक अनुभव है । क्योंकि दो विश्व युद्धों में जो भयानक नर-संहार और रक्तपात हुआ है वहमानव को एक बार फिर सोचने पर विवश कर देता है । इतिहास में युद्ध राज्य विस्तार के लिए न्याय, धर्म एवं शान्ति के लिए लड़ा गया है । अत: युद्ध पूरे संसार के इतिहास का एक घिनौना सत्य माना गया है । इतना ही

नहीं है कि युद्ध अपनी समाप्ति के पश्चात् भी समाप्त नहीं हो पाते हैं । नरेश जी ने अपने काव्य 'संशय की एक रात' में राम का युद्ध एवं शान्ति के द्वन्द्व से पीड़ित होते दिखाया है ।

"संशय की एक रात" के युद्ध के प्रति वितृष्ण होकर सीता के प्रति भी उदासीन हो जाते हैं । राम ऐसा साम्राज्य पाने के लिए इच्छुक नहीं है जिसे प्राप्त करने के लिए नर-संहार और रक्तपात करना हो राम कहते हैं --

मुझे ऐसी जय नहीं चाहिए
बाण विद्ध पाश्वों सा विकल
साम्राज्य नहीं चाहिए
मानव के रक्त पर पग धरती आती सीता भी नहीं चाहिए ।[54]

राम सीता को रावण से मुक्त कराना अपनी वैयक्तिक समस्या मानते हैं । इस वैयक्तिक समस्या के लिए रक्तपात करना राम को सही या अनुचित नहीं लगता है । फिर भी हनुमान युद्ध को राम की वैयक्तिक समस्या न स्वीकार कर उसे सार्वजनिक रूप देने की बात करते हैं । हनुमान कहते हैं --

मित्रो !
सीता माता
भले ही राम की पत्नी से
किसी की वधू
किसी की दुहिता हो
पर

हम कोटि - कोटि जनों को तो केवल
प्रतीक हैं ।
रावण अशोक वन की सीता
हम साधारण-जन की अपहृत स्वतन्त्रता ।[55]

नरेश मेहता का उद्देश्य युद्ध और शांति से संबंधित है अत: प्राचीन कथा को लेकर अपनी भावनाओं को जोड़कर कुछ कहना चाहा है । राम रावण से युद्ध के पूर्व ही संशय की स्थिति है । इस में कुछ काल्पनिक बात भी है । यथा - जटायु और दशरथ जैसे मृतकों के प्रसंग भी है । इस काव्य की भूमिका में कवि स्वयं कहते हैं -- "एक विशेष भाव एवं निवारण के लिए द्वितीय सर्ग में हेमलेट की शैली प्रयुक्त की गई है ।"[56] युद्ध से पूर्व राम का संशय इस से पूर्व किसी भी रामाख्यानक काव्य में प्राप्त नहीं है ।

इस काव्य में लक्ष्मण, नील, जाम्बवंत , हनुमान, विभीषण और सुग्रीव आदि के द्वारा राम को युद्ध का वर्णन सुनाना भी नवीन दृष्टि है । राम के अन्तरद्वन्द्वों के चित्रण में भी नयापन है । राम का रावण से युद्ध करने का प्रसंग युगीन परिवेश को दृष्टि में रखकर किया गया है । राम से रावण का युद्ध व्यक्तिगत न होकर सार्वजनिक हो गया है । इस काव्य में युद्ध और शांति ही आधुनिक नितान्त समस्या है । अंत में राम ने परिषद् के सदस्यों के विचारों के आधार पर सर्वजनकल्याण कामना से अभिप्रेरित होकर युद्ध करने का निश्चय किया ।

इस प्रकार मेहता जी ने प्रस्तुत काव्य में सीता हरण को एक राष्ट्रीय-समस्या का रूप प्रदान किया है और जिसका समाधान रावण वध के द्वारा हुआ है ।

15. प्रवाद पर्व :

"प्रवादपर्व" नामक खण्ड काव्य सन् 1977 में श्री नरेश मेहता के द्वारा लिखा गया है । इस में 1975-76 वर्षों में ज्वलंत प्रश्नों का मानवीय धरातल पर समाधान देने का प्रयत्न किया गया है । इस खण्ड काव्य का मूलाधार वाल्मीकि रामायण है । पुरवासी के द्वारा सीता के चरित्र पर निंदा करना और राज्य से सीता का निष्करषण सम्बन्धी घटनाओं को कथा स्रोत के रूप में इस काव्य में लिया गया है । वाल्मीकि रामायण में भद्र से राम के बारे में पुरवासियों के बीच की चर्चा इस प्रकार है -

कीदृशं हृदये तस्य सीतासम्भोगजं सुखम् ।
अंकमारोप्य तु पुरा रावणेन बलाद्धृताम् ॥
लंकामपि पुरा नीतामशोकवनिकां गताम् ।
रक्षसां वशमापन्नां कथं रामो न कुत्स्यति ॥
अस्माकमपि दारेषु सहनीयं भविष्यति ।
यथा हि कुरुते राजा प्रजास्तमनुवर्तते ॥

"प्रवादपर्व" सीता- निर्वासन की भूमिका में लिखा गया युगीन संदर्भों का एक वैचारिक काव्य है । "प्रवादपर्व" में पांच शीर्षक हैं इतिहास और इतिहास, प्रतिइतिहास, तन्त्र शक्ति एक सम्बन्ध - एक साक्षात प्रति-इतिहास और निर्णय एवं निवेद विदा ।

इस काव्य का आरंभ प्रश्नाकुल राम के मनुष्य नियति से सम्बद्ध विचारण से होता है । यहाँ राम एक साधारण जन की अनाम तर्जनी के उठने पर विचार करने का वर्णन है । राम इसे जन साधारण का अधिकार मानते हैं जिसे दबाया नहीं जा सकता । इतिहास निर्माता को प्रतिइतिहास से साक्षात-

कार करना ही पड़ता है । राम, भरत और लक्ष्मण मंत्री के बीच साधारण तर्जनी के औचित्य पर विचार करते हैं । भरत एवं लक्ष्मण आदि के तर्जनी को अनाधिकार चेष्टा बताने पर राम कहते हैं कि प्रजा का भी अधिकार होना चाहिए रावण की व्यक्ति निष्ठा का उदाहरण देकर कहते हैं कि ऐसी स्थिति में पीड़ित जन समन्वित होकर खड़ा हो जाता है । नर किन्नर और वानर आदि का राम को सहयोग देना व्यक्ति के प्रति समष्टि का युद्ध रहा है । इसलिए अगर साधारण प्रजा की अवहेलना की जाय तो राम और रावण में कोई अन्तर ही नहीं रहेगा ।

सीता राम की उद्विग्नावस्था को देखकर चिन्तित हो जाती है । राम से स्पष्ट कह देती है कि शब्द न्याय और सत्य से बड़ा स्वयं सीता या कोई भी नहीं हो सकता । फिर राम के राजदरबार में परिषद एक साधारण धोबी के तर्जनी उठाने और सीता की चरित्र मर्यादा से सम्बन्धित विषयों पर विचार करती है । लक्ष्मण इस आरोप को राजद्रोह कहते हैं लेकिन राम अपने तर्कों से प्रति इतिहास के पक्ष में सभासदों की सम्मति के विरुद्ध तर्क देते हैं । यथा दूसरे दिन सीता को वन का प्रस्थान करना अनिवार्य होगा जहाँ सीता ही अपने उदात्त चरित्र से इस आरोप का उत्तर दे सकेगी ।

अन्त में राम के व्यक्ति मन और न्याय हितैषी समूह मन के बीच अन्तर्द्वन्द्व है और उनका मन आसन्न मातृत्व को निर्वासित करने में चिन्तित हो रहा है, अपितु लक्ष्मण राम के आदेशानुसार सीता को वन में छोड़कर आते हैं ।

"प्रवाद पर्व" में राम और सीता प्रमुख प्रतीकात्मक पात्र है और अन्य प्रतीक में लक्ष्मण, भरत, मंत्री राष्ट्रवर्धन आदि के रूप में है । कवि आपातकालीन सामाजिक बोध में साधारण जन की अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता को रौंद कर स्वयं

को सुविधा के लिए सीमित संयम वृत्ति के विरोध रहते हैं । राम को ईश्वर मानते हैं ।

राज्य का न्याय
धर्म या नैतिक
इतिहास या पुराण
ज्ञान या दर्शन
इन सबको
दृष्टियों का गन्तव्यों का
अर्थ और प्रयोजन
क्या मनुष्यता से ऊपर (या) इतर
हो सकता है ?[56]

इस काव्य में सीता के साथ हुए राम द्वारा अन्याय की बात तो दबी रह जाती है । राम की चिन्ता यह नहीं कि अगर यही शंका किसी साधारण नारी के सम्बन्ध में प्रस्तुत होती तो राम को कोई चिन्ता होती । इस आधार पर नरेश मेहता जी ने राम कथा के इस प्रसंग को समकालीन प्रसंग से जोड़ने की सफल कोशिश किया है ।

राम के हृदय में सीता-सम्भोगजनित सुख कैसा लगता होगा । रावण ने बलपूर्वक गोद में उठाकर सीता, का अपहरण किया, और उन्हें लंका में भी ले गया उसने वहाँ अन्तःपुर में क्रीडा-कानन अशोक वाटिका में रक्खा । इस प्रकार राक्षसों के वश में होकर वे बहुत दिनों तक नहीं तो भी श्री राम सीता से विरोध क्यों नहीं करते है । अब हम लोगों को भी अपनी स्त्रियों

के प्रति ऐसी बातें सहनी पड़ेगी । यथा राजा करता है उसी का अनुकरण प्रजा भी करती है । इस में पुरवासियों का आरोप अभिव्यक्त की स्वतन्त्रता का प्रतीक है । इस में पुरवासियों की जगह एक धोबी की कल्पना की गयी है । यहाँ पर धोबी अनाम साधारण जन की अभिव्यक्ति का रूप है । "प्रवादपर्व" पौराणिक कथा के एक संक्षिप्त संकेत को लेकर आधुनिक जनवादी चेतना का प्रतीक काव्य बन गया है । कवि का उद्देश्य है कि अतीत की गाथाओं से अतीत के चरित्रों से नया प्रकाश दिखाना ।

16• अग्निलीक :

भारत भूषण अग्रवाल द्वारा रचित "अग्निलीक" 1976 ई• में प्रकाशित हुई है । यह कृति रामकथा के सीता निर्वासन की कथा पर निर्भर है । इस काव्य में कवि ने शोषण पर आधारित राजतन्त्रीय व्यवस्था के विरुद्ध जन वादी स्वर को अभिव्यक्ति की है ।

अग्निलीक की कथा तीन दृश्यों में विभक्त की गयी है । प्रथम दृश्य का आरंभ रथवान और राज-पुरुष के वार्तालाप से होता है । रथवान राम के आदेश से वन वासिनी सीता को लेने आये हैं जिससे सीता, राम द्वारा आयोजित अश्वमेध में उपस्थित सभी सभासदों के सम्मुख अपनी सफाई देकर स्वयं को निष्कलंकित घोषित करने का प्रसंग चर्चित है । सीता के वनवास के प्रसंग को लेकर रथवान और राजपुरुष में चर्चा होती है । राजपुरुष तो सरकारी नीति के अनुरूप ही राम के पक्ष का समर्थन देते हैं । दूसरा दृश्य वाल्मीकि आश्रम का है जहाँ सीता रुग्ण अवस्था में लेटी है और उनकी सखी कौशिकी देखभाल में संलग्न है । अयोध्या में किये जा रहे अश्वमेध का स्मरण कर वह व्याकुल हो जाती है । तीसरे दृश्य में रात के आखिरी प्रहर में वाल्मीकि

भी चिन्ताग्रस्त दिखाई देते हैं । सीता के वचनों में नारी जाति की मर्मान्तक पीड़ा स्पष्ट होती है । सीता के उद्गारों में राम की निर्ममता, महत्वाकांक्षी प्रवृत्ति प्रजा पराङ्मुखता, साम्राज्यवादी विजय लिप्सा, आडम्बर पूर्ण समारोह संलग्नता आदि दूषित प्रवृत्तियों के प्रति आक्रोश प्रकट करती है । सीता राम से अलग अपने आप को स्वतन्त्र घोषित करती है । लव, कुश और राम का मंच पर आगमन, वाल्मीकि, लव और कुश के रोकने पर भी सीता एक खड्डा में गिरकर प्राणांत कर लेने का चित्र अंकित है । अंत में शोक एवं प्रायश्चित के फलस्वरूप राम के मन में नये बोध की अग्नि का उदय हो जाता है । अतः राम नये बोध की अग्नि का एक नये एवं सच्चे रामराज्य की स्थापना करने की घोषणा करते हैं । सीता के गौरव का स्मारक बनाने का प्रण भी लेते हैं ।

भारतीय जन मानस का पथ प्रशस्त कराने वाली एवं शाश्वत जीवन मूल्यों का बोध कराने वाली काव्य परम्परा है तो वह सिर्फ राम-काव्य धारा है । अग्निलीक में रामकथा का वह करुण प्रसंग उठाया है जिसने भवभूति को उत्तर रामचरित लिखने के लिए प्रेरित किया था । भवभूति की सहानुभूति निष्कासित सीता के साथ है तो राम की गहरी यातना से गुजरना वर्णित है । लेकिन अग्निलीक के राम केवल एक राजा हैं और एक राजनीतिक व्यक्ति हैं । "अग्निलीक" में कवि ने राम के आदर्शवादी रेखाओं को लाँघकर उनके विचारों को खण्ड-खण्ड किया है । वाल्मीकि - रामायण में उत्तर काण्ड का सीता त्याग प्रकरण प्रक्षिप्त है । तुलसी ने उसे उठाया ही नहीं उठाते भी तो संभवतः वे राम की ही रक्षा करने का प्रयत्न करते हैं । किन्तु भारत भूषण की सहानुभूति राम को मिली या नहीं उन्होंने सीता को एक नया व्यक्तित्व प्रदान किया है । निष्कासित सीता सामान्यजन के प्रतिनिधि पात्र ...... रथवान के द्वारा राम को सन्देश भिजवाती है --

भैया, अब तुम जाओ ।
छोड़ना ही है तो यहीं पर छोड़ दो
जब मुझे अपने ही घर में ठौर न मिल सका ।
तो अब मुनि के आश्रम में जाकर क्या करूँगी,
जाओ, अयोध्या पहुँचकर अपने महाराज कह देना
वनोवास देते समय इतना तो सोचते
कि जब उन्हें वनोवास मिला था
तो मैं उनके साथ गई थी ।[59]

इस प्रकार अग्निलोक की सीता में राम-काव्य का एक नया आयाम विकसित हुआ है । इस में सीता के व्यक्तित्व का एक नया पहलू उद्घाटित है । कवि ने इस में राम सीता के रिश्तों से बहा ले जाकर उसे कुछ बड़े सामाजिक प्रश्नों से भी जोड़ने का प्रयत्न किया है । अग्निलोक की रामकथा समस्त नारी जाति की व्यथा को उद्घाटित करने वाली बन गई है । इस की सीता का व्यक्तित्व वैयक्तित्व दर्द और सामाजिक आशय के ताने - बाने से वर्णित है । एक प्रसंग पर सीता कहती है --

आज मेरी आँखों पर से झूठ का पर्दा उठ गया है ।
मुझे निर्मम सत्य दिखाई देने लग गया है ।
राम ने तो मुझे बहुत पहले ही छोड़ दिया था
आज मैं राम को छोड़ती हूँ ।
अब मैं स्वतन्त्र हूँ, मुक्त हूँ ।[60]

भारत भूषण की रामकथा में नारी व्यथा अपने पूर्ण आक्रोश के साथ व्यक्त हुई है । कवि ने आधुनिक संचेतना के अनुकूल राम के चरित्र का पुनर्मूल्यांकन

किया है । नयी दृष्टि के अनुसार राम भगवान नहीं, ना कि आदर्श सम्राट थे, वे एक महत्वाकांक्षी राजा थे । इस में कवि ने नारी को जागरूकता एवं अधिकार के प्रति सजग दिखाया है । सीता पात्र भी आधुनिक मानसिकता की प्रतीक बनकर सामने आई है । नेमिचन्द्रजैन ने अग्निलीक की भूमिका में लिखा कि -- "इस आलेख में कई दृश्य हैं जो क्रम बद्ध नहीं हैं -- प्रारंभ अन्त और बीच के कुछ प्रसंग लिख लिये गये हैं, बाकी को अलग ढंग से पूरा करने का विचार था । इस उल्लेख से वह सन्तुष्ट नहीं थे, क्योंकि उन्हें लगता था कि यह नाटक के अधिक खण्ड काव्य हो गया है ।"61

इस काव्य में खास बात ये है कि राम का सीता को छोड़ना प्राचीन है लेकिन यहाँ सीता ही राम को छोड़ने के कहती है । सीता का पति की निंदा करना आदि नवीन भावनाएँ इस काव्य में दृष्टव्य है । इस काव्य के द्वारा कवि ने आधुनिक नारी की स्थिति को ऐतिहासिक पात्र सीता के द्वारा व्यक्त करना चाहा है और उस में सफल हुआ है ।

17. शम्बूक :

श्री जगदीश गुप्त की शंबूक एक महत्वपूर्ण रचना है । इसका प्रकाशन 1977 में हुआ है । इसकी कथा रामायण से संबंधित है, लेकिन कवि ने "शम्बूक" के माध्यम से मानव के द्वन्द्व को स्थापित करने का प्रयत्न किया है । इस में बताया गया है कि मनुष्य अपने धर्म, जाति से बड़ा नहीं है, वह अपने कर्म के कारण महान बनता है । इस पर डा0 विनय ने कहा कि "प्रकृत्या धर्म सभी के लिए एक है, सम्मान और अपमान में भी सभी की बराबरी की साझेदारी है तो फिर धर्म के नाम पर मनुष्य ही मनुष्य का हंता क्यों" । यह प्रश्न उठता है जिसे व्यवस्था और विद्रोह के प्रतीक राम और शम्बूक के माध्यम से उठाया गया है । जगदीश गुप्त ने स्पष्टतः स्वार्थ सम्मत व्यवस्था से अमानवादी दृष्टिकोण का विरोध न करके वर्ग संघर्ष

तथा टकराहट को सामयिक प्रश्न के रूप में देखकर सार्वकालिक समस्या के रूप में अभिव्यंजित है ।"62 शम्बूक की प्राचीन कथा को उसी रूप में अभिव्यक्त करना कवि का उद्देश्य नहीं है । प्रस्तुत काव्य में समाज और समकालीन सन्दर्भों को व्यक्त करना जगदीशगुप्त जी का लक्ष्य रहा है ।

शम्बूक में आठ अंश (सर्ग) है । कवि ने अंश के आरंभ में राम के वैभावपूर्ण दरबार का वर्णन किया है । राम अयोध्या का लोकरक्षक साम्राट है । राम राज्य में एक बार ब्राह्मण का पुत्र साँप के काटने पर मर जाता है । गरीब ब्राह्मण राम के दरबार में रोता है कि उसके परिवार का दीप सदा के लिए बुझ गया । इसका आरोप ब्राह्मण राम पर डालता है । राज वैद्य भी मृत बालक को जिलाने में असमर्थ है । राम ब्राह्मण के दुःख से चिंतित होकर गुरु वशिष्ट को बुलाते हैं । मार्ग में नारद ने कहा कि दंडकवन में एक शूद्र स्वर्ग के सुख को लूटने की आशा से तप कर रहा है और इसका सम्बन्ध विप्र सुत की मृत्यु से है । नारद फिर कहते हैं कि अगर राम विपिन जाकर शूद्र मुनि का वध करेंगे तो विप्र सुत जीवित होगा । नारद के इस मंत्र को वशिष्ट ने राम के सम्मुख रखा । राम ने तुरंत ही गुरु की मंत्रणा को स्वीकार कर शूद्र तपस्वी का वध किया है ।

शम्बूक की प्रेरणा के अनेक अंश हैं । कवि ने प्राचीन कथाओं और पौराणिक प्रसंगों को नये अर्थ के साथ प्रस्तुत करने का संकल्प किया है । इसी तरह उन्होंने उनकी कविताएं रची है । इस क्रम में रक्ततिलक एक ऐसी कविता है जो "शम्बूक" काव्य का बीजरूप बन गया है । कवि ने "शंबूक" काव्य की प्रेरणादायक अंश को कहा है । --"वर्षों पूर्व रेल की पटरी के पास पड़ी किसी

लाश के कटे हुए सिर का रक्त रंजित बिंब जो मेरे मन पर इस अंतराल में बराबर शीश से एकात्म हो गया ।..... दुर्गापूजा के अनुष्ठान को तरह विजय पर्व के दिन यह रचना स्वत: पूर्ण हो गयी ।"[63]

कवि को तुलसीदास का निर्भीक, प्रशस्त एवं परिष्कृत राजमार्ग विशेष रूप से पसंद आया है । लेकिन तुलसीदास भक्तियुग के कवि हैं गुप्त ने भक्ति से उत्पन्न विचारों को ग्रहण नहीं किया है । "उनको (तुलसी की) व्यापक मानवीय संवेदना, दृढ नैतिक साहस, जागरूक रचनाशीलता, प्रगाढ़ समर्पण भावना तथालोकाभिमुखी गहरी जीवन-दृष्टि ने मुझे निरंतर प्रभावित किया है और हिन्दी कवियों में उन्हीं का सब से ऋणी हूं ।"[64] इनके अलावा सूर, जायसी, कबीर जैसे कवियों का सहज प्रभाव कवि पर है ।

शंबूक में पात्र बहुत कम है । इस में प्रधान पात्र शंबूक और राम है । शंबूक इस काव्य का नायक है । शंबूक कवि जगदीश गुप्त के विचारों और उद्देश्य का प्रतीक लेकिन राम के चरित्र का महत्व कम नहीं किया गया है । कवि ने राम और शम्बूक के बीच संवाद के माध्यम से तात्कालीन समाज और व्यवस्था को आज के धरातल पर चित्रित किया है । आज की राजनीतिक एवं सामाजिक व्यवस्था में उच्चवर्ग सुरक्षित स्तर पर बैठ गया है । कवि ने शम्बूक के माध्यम से मानव के द्वन्द्व को प्रकट किया है । शम्बूक एक प्रसंग पर राम से कहता है कि तुम ने सीता के व्यक्तित्व को महानता को पहचान कर उसे छोड़ दिया है । शम्बूक राम को धर्म नीति का विरोध करते हुए कहता है --

वर्ण से होगा नहीं अब त्राण
कर्म से ही मनुज का कल्याण
जन्म से ही निश्चित न होगा वर्ण

वर्ग तक सीमित न होगा स्वर्ण
कर्म से हो श्रेष्ठता अधिकार
कर्म सब के लिए सम आधार ।[65]

इस प्रकार कवि ने शम्बूक के चरित्र को प्रकाश में लाने का सफल प्रयत्न किया है । इस में शंबूक शोषित वर्ग का प्रतीक चित्रित है । वह भूमि-पुत्र और कर्म का भी प्रतीक है । रामायण की कथा में शम्बूक शूद्र [या] हरिजन के रूप में वर्णन किया गया है । लेकिन जगदीश गुप्त जी ने शंबूक को "हरिजन" की अपेक्षा "भूमिपुत्र" के रूप में वर्णित किया है । भूमिपुत्र आधुनिक विचार धारा से मिलना - जुलना है । आज समाज की व्यवस्था ऐसी है कि धर्म सभी के लिए एक नहीं रहा है और धर्म के नाम पर मनुष्य, मनुष्य पर आक्रमण करता है । कवि का उद्देश्य है कि जहाँ कहीं दुर्बल मनुष्यता के प्रति अमानववादी व्यवहार किया जाता हो, वहाँ उसका भूमि - पुत्र शंबूक के रूप में विद्रोही के रूप में तीव्र प्रतिरोध हो । वास्तव में भूमि पुत्रत्व में ही मनुष्यता की श्रेष्ठता निहित है ।"[66] कवि ने शंबूक के द्वारा स्वार्थ सम्मत व्यवस्था का विरोध करके वर्ग संघर्ष और टकराहट को सार्वकालिक समस्या के रूप में चित्रित किया है ।

18. सीता-समाधि :

सीता-समाधि की रचना श्रीमती राजेश्वरी अग्रवाल द्वारा की गई है । इसका प्रकाशन 1978 ई॰ में हुआ है । हमारी संस्कृति के प्रतीक राम और सीता से बढ़कर कोई नहीं है । इस चरित्र का आदर्श राम और सीता के चरित्र में मिलता है । "सीता के सम्बन्ध में कवि ने कहा कि सीता हमारी संस्कृति की, हमारी भूमि की स्त्री धर्म की, रूप और गुणों की देवी है । वह राम की शक्ति है ।"[67]

श्रीमती राजेश्वरी अग्रवाल ने इस कथा का आधार वर्तमान समय में राज से परित्याक्ता सीता अर्थात् संस्कृति के संदर्भ में अभिव्यक्त की है। सीता ने छिप-छिप कर वन में संस्कृति विकास किया है। हमारीसंस्कृति का नये युग एवं नये राष्ट्र का प्राचीन आधारों पर निर्माण कर रही है। इस के अन्तर्गत शूर्पणखा को पाश्चात्य सभ्यता के प्रतीक के रूप में दर्शाया है। 1857 की क्रांति का वर्णन शूर्पणखा के नाक कान काटने के सन्दर्भ में किया गया है। अंग्रेजों को भारत को अपने अधीन कर लेना हीसीता हरण के रूप में बताया गया है। इस के साथ रावण और हनुमान संवाद में भारतीय एवं सत्ताधारियों के विचारों का प्रतिपादन भी है। इस काव्य में महात्मा गांधी राम का रूप है। राम के राज्याभिषेक के बाद राम राज्य तो नहीं होता लेकिन अपनीसंस्कृति का परित्याग अवश्य होना है। वहीं है सीता वनवास। वनवास की अवधि में सीता नये युग का निर्माण लव-कुश के रूप में करती है। कवयित्री शीर्षक की प्रतीकात्मकता में कहती है -- "आज हमारीसंस्कृति की जो उपेक्षा है उसका जो अन्त हो रहा है, वही सीता समाधि है।"68

सीता वनवास में वर्तमान परिस्थिति के पात्र में प्राचीन कथामृत को रखा है। सीता को इस में संस्कृति और धर्म का प्रतीक बनाया गया है। कवयित्री ने इस काव्य में आहत हुए पत्नी के मान को सीता के द्वारा श्रेष्ठता प्रदान करने का सफल प्रयास किया है। इस में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर यहाँ की सांस्कृतिक विचारधारा का अनादि काल से वर्तमान समय तक राम और सीता की सुन्दर कथा में रसास्वादन कराने का प्रयत्न किया गया है।

रचनाकार के आधुनिक दृष्टि चाहिए जिससे श्रीमती राजेश्वरी अग्रवाल जी सर्वथा वंचित रही है। उनके इस "सीता समाधि" की प्रेरणा देवी है क्यों कि भूमिका में कवयित्री ने स्वयं संकेत किया है। कवयित्री का विश्वास है कि

आदि से अन्त तक यह कथा भगवान पर अतुल विश्वास के आधार पर अनंत प्रेरणा से सफल हुई है । वे भूमिका में कहती है -- "मैं तो समझती हूं कि मेरे परम पूज्य गुरूदेव की कृपा से ही यह सम्भव हो गया है ।"69

इस काव्य में प्राचीनता और नवीनता की झलक बराबर कथा में दिखाई देती है । राम कथा प्राचीन होते हुए भी नित्य नवीन बन गई है । विश्व की सर्वोच्च चरित्रवान सीता के गुणगान करने में राजेश्वरी अग्रवाल जी संतुष्ट हुई है । वे विश्व के सम्मुख सीता का आदर्श सदैव विश्व नारी को प्रेम का मार्ग दिखाता रहे की आशा व्यक्त करती है ।

रामायणाख्यान से प्रभावित उपर्युक्त आधुनिक राम-काव्य जिस प्रकार प्रचुर प्रमाण हे मे है उसी प्रकार राम कथा के प्रसंगों में युगानुरूप नवीन वैचारिक भूमिका प्रस्तुत करने में सफल हुए है । आगे के अध्याय में प्रस्तुत राम काव्यों में चित्रित युगीन दिशाओं एवं दृष्टियों का विस्तार से मूल्यांकन अपेक्षित है ।

--

सन्दर्भ सूची

1• हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य, डा० गोविन्द रामशर्मा : पृ• 457
2• रामचरित चिन्तामणि, रामचरित उपाध्याय, पृ• 16/43
3• हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, पृ• 619
4• रामचरित चिन्तामणि, रामचरित उपाध्याय, पृ• 19/174,175
5• सरस्वती पत्रिका, जुलाई - 1908
6• आधुनिक साहित्य, नन्ददुलारे वाजपेयी, पृ• 100
7• कृत्तिवास रामायण, कृत्तिवास , पृ• 85
8• राम की शक्ति पूजा, निराला, (राग विराग) पृ• 82
9• - वही - पृ• 104
10• हिन्दी राम काव्य विविध आयाम, डा० मदन गुलाटी, : पृ• 70
11• राम की शक्ति पूजा, निराला : पृ• 103
12• हिन्दी राम काव्य विविध, आयाम : डा० मदन गुलाटी . पृ• 72
13• निराला की कविताएं , चन्द्रकान्त बान्दिवडेकर, पृ• 83
14• हरिऔध और उनका साहित्य, मुकुन्ददेव शर्मा पृ• 64
15• हरिऔध जीवन और कृतित्व, मुकुन्ददेव शर्मा : पृ• 309
16• वाल्मीकि रामायण, उत्तरकाण्ड, अ• 43, पृ• 1568
17• वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ• 17 द्वितीय सर्ग
18• - वही - पृ• 8
19• साकेत सन्त, बलदेवप्रसाद गुप्त, पृ• 204
20• - वही - पृ• 205
21• हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य, डा० गोविंद शर्मा, पृ• 376
22• अशोक वन, गोकुलचन्द्र शर्मा, भूमिका : पृ• 6
23• - वही -
24• रावण महाकाव्य, हरदयाल सिंह, पृ• 29
25• कैकेयी - मणिरामपुरी शर्मा : पृ• 8,9

26· वाल्मीकि रामायण, कैकेयी - भूमिका से उद्धृत : पृ· 3
27· कैकेयी, मणिरायपुरी : पृ· 27 (46 छन्द)
28· स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी प्रबन्ध काव्य, डॉ· बनवारी लाल शर्मा : पृ· 186
29· कैकेयी, भूमिका, कृष्णचन्द्र शर्मा : पृ· 5
30 - वही - भूमिका : पृ·3
31· ऊर्मिला - बालकृष्ण शर्मा नवीन, तृतीय सर्ग, 135 छन्द, पृ· 237
32· बालकृष्णशर्मा नवीन - व्यक्ति एवं काव्य, डा0 लक्ष्मीनारायण दुबे,
पृष्ठ - 342
33· हिन्दी से आधुनिक पौराणिक महाकाव्य, डा0 देवीप्रसाद गुप्त : पृ·378
34· रामराज्य, बलदेवप्रसाद मिश्र, भूमिका के आधार पर
35 - वही -
36 - वही - पृ· 128
37· - वही - पृ· 148
38· वाल्मीकि रामायण, अरण्यकाण्ड : पृ· 49/20
39· - वही - : पृ· 49/22
40 भूमिका, रघुवीरशरण मिश्र, पृ· 47
41· - वही - भूमिका के आधार पर
42· भूमिजा : पृ· 117, (कल्याणदेय सर्ग)
43· वाल्मीकि रामायण , अरण्यकाण्ड, पृ· 664
44· शबरी, नरेश मेहता, पृ· 48
45· वाल्मीकि रामायण, अरण्य काण्ड, श्लोक - 7, पृ· 665
46· रामचरितमानस, तुलसीदास, अरण्यकाण्ड, श्लोक -34
47· जानकी जीवन - राजाराम शुक्ल : पृ· 19
48 - वही - : पृ· 252, सर्ग- 14
49· - वही - पृ· 243, सर्ग 13
50· - वही - पृ· 262, सर्ग - 14

51• - वही - , सर्ग-7, पृ• 128

52• वाल्मीकि रामायण, युद्ध काण्ड

53• हिन्दी राम काव्य विविध आयाम, डा0 मदन गुलाटी : पृ• 83

54• संशय की एक रात, नरेश मेहता, पृ• 32

55• - वही - पृ• 64

56• - वही - शीर्षबन्ध से उद्धृत

57• श्रीमद् वाल्मीकि रामायण, उत्तरकाण्ड, पृ• 1568, सर्ग-7। श्लोक-1-2

58• प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ• 75

59• अग्निलीक - भारतभूषण अग्रवाल, अंक-1, पृ• 14

60 - वही - पृ• 53

61• वही - भूमिका से

62• समकालीन हिन्दी कविता - संवाद, डा0 विनय, पृ• 50

63• शम्बूक, जगदीश गुप्त, पृ• 8

64• - वही - पृ• 9

65• - वही - पृ• 62

66• शम्बूक और शूद्रतपस्वी एक मूल्यांकन, डा0 टी•आर• भट्ट : पृ• 25

67• सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल, भूमिका, पृ• 8

68• - वही - : पृ• 9

69• - वही - भूमिका : पृ• 12

चतुर्थ अध्याय

आधुनिक राम काव्य की सामाजिक दिशाएं और दृष्टियाँ

1· वर्ण व्यवस्था

1·1 वर्ण व्यवस्था की वस्तुस्थिति

1·2 वर्ण व्यवस्था में व्यावहारिक समानता

1·3 संस्कार की प्रधानता

1·4 वर्ण व्यवस्था का विभाजन

1·5 वर्ण व्यवस्था की अनिवार्यता

1·6 औचित्य के सम्बन्ध में

1·7 वर्ण व्यवस्था की निंदा

1·8 ऊँच-नीच का अन्तर

1·9 युगीन सत्य

1·10 सामाजिक आग्रह

1·11 अस्पृश्यता

2· पारिवारिक सम्बन्ध

2·1 दाम्पत्य जीवन का आदर्श

2·2 पति की सेवा

2·3 पति-पत्नी का विच्छेद

2·4 नारी की मुक्ति

2·5 परिवार के सदस्यों से सम्बन्ध

2·6 पति-पत्नी का सम्बन्ध

2·7 नियति का सम्बन्ध

2·8 परस्पर निर्भरता

2·9 प्रेमिका एवं पत्नी

2·10 अन्य सदस्यों से सम्बन्ध

2·11 पितृ भक्ति
2·12 माता-पिता का सम्बन्ध
2·13 भाईपन की भावना
3· नारी भावना
3·1 परंपरागत रूप
3·2 वैधव्य जीवन
3·3 शक्तिस्वरूपिणी नारी
3·4 शक्ति की पूजा
3·5 सहयोगिनी
3·6 आधुनिक रूप
3·7 समानता की भावना
3·8 स्वतन्त्र नारी
3·9 स्वच्छन्द नारी
3·10 समसामयिक नारी
3·11 नारी की उदासीनता
4· मानवतावाद
4·1 व्यक्ति की प्रधानता
4·2 मानव और अतिमानव
4·3 अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता
4·4 व्यष्टि एवं समष्टि
5· समाजवाद की भावना
5·1 लोक मत
5·2 गुलामी के प्रति विद्रोह
5·3 परिवर्तन
5·4 सम्मिलित श्रम

5.5 साक्षरता

5.6 प्रजा का विश्वास

5.7 नवनिर्माण की चाह

5.8 शोषण और पोषण

5.9 गांव और शहर

चतुर्थ अध्याय

आधुनिक राम काव्य की सामाजिक दिशाएं और दृष्टियां

सम्पूर्ण रामकाव्य सामाजिक चेतना से परिपूर्ण है, क्योंकि राम जन-जीवन के संघर्षों और आदर्शों के प्रतीक के रूप में देखे जाते हैं । रामकथा सामाजिक धरातल के यथार्थ से जुड़ी हुई है, अत: राम काव्य के गायकों ने उसे सामाजिक चेतना से पूर्णतया आत्मसात किया । तुलसीदास राम काव्य के पर्याय बन चुके हैं क्योंकि वे मध्यकालीन चेतना की उपज है । तुलसीदास में प्रगतिशील सामाजिक चेतना की धुन सुनायी पड़ती है । आपने अपने समाज की चार प्रमुख राष्ट्रीय समस्याओं, यथा - गरीबी, शोषण, दुर्भिक्ष और महामारी को अपने काव्य में प्रस्तुत किया है ।

वास्तव में आधुनिक राम - काव्य पर समाजवाद का परोक्ष रूप से प्रभाव पड़ा है । यह प्रभाव सामाजिक और आर्थिक समानता की धारणाओं शोषण - निंदा, दलित वर्ग के प्रति सहानुभूति बीभत्सता का चित्रण आदि में देखा जाता है । आज के प्रणेताओं ने अपने आदर्शों के अनुकूल ही समाजवादी तत्वों को पाया है । इस समाजवाद में निहित भौतिकता, हिंसा, संघर्ष आदि लक्षणों को विजातीय मानकर छोड़ दिया है । लेकिन प्रगतिवाद की स्फुट रचनाओं में अवश्य राम-कथा को वर्ग - संघर्ष के प्रतीक के रूप में लिया गया है । खास बात ये है कि हिन्दी में जो प्रगतिवादी काव्य धारा चल रही है, वह बहुत कुछ अपनी सैद्धान्तिक कट्टरता छोड़कर भारतीय वातावरण के अनुकूल ढलने में संलग्न है ।

सामाजिक दृष्टियों के अंतर्गत वर्ण व्यवस्था, मानवतावाद, पारिवारिक सम्बन्ध, नारी भावना, शोषण व्यवस्था आदि को उदाहरण सहित देखा जा सकता है ।

1· वर्ण व्यवस्था :

आधुनिक कुछ कवियों ने समाज की प्राचीन वर्ण-व्यवस्था का समर्थन किया है और कुछ ने विरोध किया है । समाज व्यक्तित्व के विकास के लिए व्यक्ति को पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करता है । आधुनिकराम काव्य में वर्णाश्रम धर्म द्वारा इसी लक्ष्य की सिद्धि का आदर्श देखा जा सकता है । डा० कमलाकान्त पाठक ने गुप्तजी के सम्बन्ध में कहा -- "गुप्त जी का सामाजिक आदर्श वर्णाश्रम धर्म,है, पर उसकी मध्ययुगीन जड़ता उन्हें स्वीकार नहीं है । वे भौतिक प्रगति,प्रवृत्ति-निष्ठा, धर्माचरण, लोक-सेवा इत्यादि को वर्णाश्रम धर्म के द्वारा संभव समझते है ।"[1] अत: आधुनिक कवियों ने राम-काव्य में कुछ सांस्कृतिक निष्ठा और कुछ उपयुक्तता के आग्रह से वर्णाश्रम - व्यवस्था को स्वीकार किया है । प्रस्तुत इस वर्ण व्यवस्था को औचित्य एवं अनौचित्य के रूप में बताया गया है । कुछ आधुनिक कवि वर्ण व्यवस्था का समर्थन करते हैं तो कुछ आधुनिक कवि वर्ण व्यवस्था का खण्डन करते हैं ।

1·1 वर्णव्यवस्था की वस्तुस्थिति :

भारतीय सामाजिक संरचना के अन्तर्गत जातियों के विकास में व्यवसायों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है । खासकर पूर्व मध्यकाल में जातियों का गठन,विकास और विस्तार का आधार विशेषकर व्यवसाय ही था । मनु के अनुसार जातियों का उद्भव वर्णों के पारस्परिक मिश्रण, अवैध विवाह सम्बन्ध और कर्तव्यों की

उपेक्षा के कारण हुआ । ...... वेदाध्ययन और वेदाभ्यास, तप (ब्रह्म - विषयक) ज्ञान, इन्द्रिय - संयम, अहिंसा और गुरु शुश्रुषा ब्राह्मण के लिए श्रेष्ठ मोक्ष साधक है ।[2] इस युग का धार्मिक संघर्ष किन्हीं दो सम्प्रदायों के बीच का नहीं बल्कि समाज को दो वर्गों के बीच था । एक वर्ग परम्परा-वादियों का और दूसरा वर्ग समाज का निम्नवर्ग था ।

1·2 वर्ण व्यवस्था में व्यावहारिक समानता :

मैथिलीशरण गुप्त ने ब्राह्मण को तभी तक पूज्य मानाहै, जब तक उसमें ब्राह्मणत्व का आदर्श रहता है । आदर्श से वंचित होने पर वह उस आदर का अधिकारी नहीं रहता । उनके मत से दुराचारी ब्राह्मण का वध भी विधेय है ।[3] गुप्त ने वर्ण व्यवस्था में व्यावहारिक समानता को स्वीकार किया है । उनकीसीता वन की कोल किरात बालाओं के साथ सखी का सा व्यवहार करती है । "राम निषाद राजा को देखकर स्वयं उठकर उसका आदर करते हैं ।[4] इसी प्रकार के विचार डा० बलदेव प्रसाद मिश्र के "साकेत सन्त" में भी हैं । इस में भरत गुह का नाम सुनते ही उसे छाती से लगा लेते हैं .....

गुह का जैसे ही नामसुना, आतिथ्य भरत ने कुछ न गुना,
झटपट बढ़ उसको उठा लिया, अपनी छाती से लगा लिया ।[5]

यहाँ पर गुह निम्न जाति के होने पर भीभरत उन्हें गले लगाते हैं । अर्थात् इस में वर्ण को प्रधानता नहीं दी गयी है । सब एक रूप में विचार किया गया है । इस प्रकार के प्रसंग हमें रामचरित चिन्तामणी[6], सीता समाधि[7], जानकी जीवन[8], आदि में पर्याप्त रूप में मिल जाते हैं ।

1·3 संस्कार की प्रधानता :

जगदीश गुप्त अपने काव्य "शंबूक" में कहते हैं कि शंबूक की दृष्टि में सब भूमि पुत्र हैं । संस्कार से ही उच्च वर्ण बनता है । शंबूक के ये शब्द सुनकर राम वर्णाश्रम धर्म में अपनी श्रद्धा प्रकट करते हैं --

तप नहीं शूद्र का कर्तव्य
फिर से सोच लो शंबूक
उसे सेवा कर्म ही भव्य
क्यों उसमें करे वह चूक ।[9]

"प्रतिपक्ष" अंश में शंबूक राम से कहता है कि जन्म से सभी भूमि पुत्र है, अतः मनुष्य मनुष्य में क्यों भेद माना जाय । अब किसी वर्ण के आधार पर शक्ति का संचय नहीं होगा । कर्म के अनुसार ही श्रेष्ठ अधिकार होता है । कर्म ही सब के लिए सम आधार है ।[10] इस प्रकार "सीता समाधि" काव्य में भी वर्ण को कर्म के आधार पर करने के लिए कहा गया है ।[11]

1·4 वर्ण व्यवस्था का विभाजन :

डा० बलदेव प्रसाद मिश्र जी ने अपने काव्य "साकेत-सन्त" में वर्ण व्यवस्था के विभाजन के बारे में कहा है । इस में एक जगह पर वशिष्ट राम और भरत को वर्ण विभाजन के सम्बन्ध में बताते हैं कि ब्राह्मण का कर्तव्य है राज्य और तपोवन में रहे । अर्थात् तप करना एवं राज्य में रहने को अधिकार है । क्षत्रिय तो राजपुरी तक सीमित है । वैश्य राज्य लंका में और शूद्र तो राज्य के गांवों में रहते हैं । इन चारों की अपनी महिमा है । अपनी-अपनी

जगह पर महत्व पाते है । जिसको राज्यनहीं वह राज्य विहता है । राम तो चातुर्वर्ण्य समन्वय कर्ता है । यह विचार पुरानी विचार को समर्थन करती है । मिश्र जी ने उनके ही अन्य काव्य "रामराज्य" में यही विचार व्यक्त किया है । इस में कवि ने कहा कि ब्राह्मण धर्म के, क्षत्री काम के और वैश्य अर्थ के रक्षक है तथा मोक्ष सब के लिए है । कवि ने ब्राह्मण को शान्तिवर्धक, क्षत्री को शौर्य - वर्धक, वैश्य को वस्तु-वर्धक और शूद्र को कला वर्धक होना माना है ....

वैश्यों का यह आचार, अर्थोपार्जन वृत्ति हो
शूद्रों का, लोक सेवा हो निज दैहिक शक्ति से ॥[13]

जिस प्रकार प्राचीन काल में वर्णों का विभाजन था, उसी को यहाँ बताया गया है ।

1.5 वर्ण व्यवस्था की अनिवार्यता :

डा0 बलदेव प्रसाद मिश्र स्वभावगत वैषम्य के आधार पर मानवीय विकास के लिए वर्ण-व्यवस्था को अनिवार्य मानते है । उनके अनुसार वर्ण व्यवस्था मानव-वृत्तियों में सामंजस्य स्थापित कर चित्त की कुण्ठा दूर करती है । वर्ण के दवारा किसी को भी ऊँचा या नीचा नहीं कहा जा सकता है । समाज एक शरीर की भांति है और वर्ण उसके अंग । जिस तरह शरीर के सभी अंगों की उपयोगिता है , उसी प्रकार सभी वर्ण मानवीय है ....

देह का एक है धर्म, अंगों का भिन्न धर्म भी
समाज - वपु - रक्षार्थ, चारों का उपयोग है ।[14]

आधुनिक समस्त राम काव्यकार वर्णाश्रम धर्म को सामाजिक आदर्श के रूप में मानते हैं, लेकिन उस में कहीं भी मध्यकालीन जड़ता प्राप्त नहीं है । इसका मूल स्रोत सांस्कृतिक निष्ठा और कुछ उपयुक्तता है । राम काव्य के अनेक पुरस्कर्ता वर्ण व्यवस्था का मूल आधार जन्म या जाति नहीं अपितु कर्म माना है । इस मन्तव्य को हरिऔधजी ने "वैदेही वनवास" में व्यक्त किया है । --

नहीं पूजित है कोई व्यक्ति, आज है पूजनीय गुण कर्म,
वही है मान्य जिसे है ज्ञात, मानसिक पीड़ाओं का मर्म ।। [15]

राजाराम शुक्ल "जानकी जीवन" में कहते हैं कि आधुनिक काल में जीवन के मूल्य और सिद्धान्त बदल गये हैं । व्यक्ति चाहे जिस जाति का हो उसमें तपस्या करने का अधिकार है । इस धारणा के आधार पर कुछ व्यक्ति राम में दोष की भावना को भी पकड़ते हैं । अतः कवि ने "जानकी जीवन" में इस घटना को युगानुरूप बनाने के लिए इतिहास को भी कल्पना के मिश्रण से समाज के लिए कल्याणकारी माना है । कवि ने चाण्डाल या नीच जाति उसी को माना है कि .....

"वही चाण्डाल वन्चक म्लेक्ष भी है ।।" [16]

उपर्युक्त बताया गया सभी वर्ण व्यवस्थाको समर्थन करने वाले विचार है । आधुनिक कवि होकर भी ये वर्ण व्यवस्था का समर्थन करते हैं ।

1·6 औचित्य के सम्बन्ध में :

आधुनिक कवियों ने वर्ण व्यवस्था की आलोचना की है । कुछ आधुनिक कवियों ने वर्ण व्यवस्था पर टिप्पणी करते हुए अपने काव्यों में विचार व्यक्त किया है ।

1·7 वर्ण व्यवस्था की निंदा :

जगदीश प्रसाद के "शम्बूक" में शम्बूक वर्ण व्यवस्था पर निंदा करते हुये राम से कहता है कि -- "मैं नियति का सदा दास हूँ और शूद्र हूँ । मेरी देह काली है इसलिए तुम्हें मुझ पर संदेह है । मैं तप करने के लायक नहीं हूँ । क्या ब्राह्मण के पुत्र ही लायक है ? ऐसा है तो ये बताओ कि तुम्हारा रंग भी श्यामल वर्ण है, तुम भी नालायक हो अथवा नहीं·····

ब्राह्मण तनुज की ताप
किन्तु मेरा प्रश्न ही आकर्ण
क्या नहीं तुम स्वयं श्यामल वर्ण ।[17]

इस प्रकार एक निम्न जाति के व्यक्ति का राम से सवाल करना आधुनिक विचार है । आज की वर्ण व्यवस्था के सम्बन्ध में दलित साहित्य का प्रभाव इस काव्य पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है ।

गांधीजी विचलित तो नहीं हुए पर मनुष्य के प्रति मनुष्य के इस अमानुषिक व्यवहार से व्यथित होते हुए उन्होंने कहा कि "यदि मेरे सामने यह सिद्ध हो जाए कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्म का आवश्यक अंग है तो अपने को ऐसे धर्म के प्रति विद्रोही घोषित कर दूंगा ।"[18] जगदीश गुप्त ने वर्ण व्यवस्था को बहुत ही यथार्थ धरातल पर रखा है । शम्बूक राम से मांग करते हैं कि

वर्ण व्यवस्था की सीमा के बन्धनों को ताड़ दी ।"[19] इस प्रकार बन्धनों को तोड़ना आधुनिक विचार है । कवि ने एक निम्न जाति के व्यक्ति को मन में रखकर शम्बूक पात्र का स्थापन किया है । शम्बूक स्वयं कहता है कि मैं शूद्र हूँ समाज में मेरा अस्तित्व बहुत ही अल्प है । कवि ने एक "निम्न जाति व्यक्ति की मानसिक भावना को यहाँ पर दिखाया है ।"[20]

1·8 ऊँच-नीच का अन्तर :

आधुनिक दृष्टि के कवियों ने समाज में ऊँच-नीच की भावना को छोड़ने के लिए कहा है । "सीता समाधि" में कवयित्री राजेश्वरी अग्रवाल जी कहती हैं कि ऊँच-नीच के भेद-भाव को भूलकर सब मिलजुल कर रहनाहै । सब जातियों को एक रास्ते पर लाने की कोशिश की है । उन्होंने अपने काव्य में राम के द्वारा ऊँच-नीच के अन्तर को हटाने का विचार व्यक्त किया है । राम निम्न वर्ग के केवट को गले लगाते हैं......

केवट को निज गले लगाकर, ऊँच नीच का भेद मिटाया ।[21]

संसार में मनोवृत्ति, मति, परिस्थिति बराबर नहीं होती है । मनोवृत्ति में रहने वाली विषमता को कोई भी मिटा नहीं सकता । कवयित्री सवाल करती है कि "इतनी वृत्तियाँ कहाँ है ? कब से है ? मानव सब समान है ।"[22]

इस प्रकार जनता में रहे इस अन्तर को हटाने के लिए आधुनिक कवियों ने कोशिश की है । ये लक्षण हमें अधिकांश रूप में आधुनिक राम काव्यों में ही प्राप्त होते हैं ।

1·9 युगीन सत्य :

"शबरी" काव्य में नरेश मेहता ने "शबरी" को निम्न जाति के युगीन संदर्भ में देखा है । आप के अनुसार किसी व्यक्ति का जातिगत भेद उसको लक्ष्य सिद्धि में बाधक नहीं बनता । उसके मार्ग में अवरोध उत्पन्न करने वाली युगीन मानसिकता को कवि स्पष्ट करता है .....

"पर किसीको भी किस युग में
स्वीकार किया लोगों ने ?
हर तरह तपा कर देखा
है, युग ने भी लोगों ने ।"[23]

उपर्युक्त पद में शबरी आध्यात्मिक वांछा के कारण सारी शृंखलाओं को तोड़कर ऋषि मतंग के शरण में जाती है । मतंग ऐसी स्त्री को शिष्य बनाकर स्वयं को धन्य मानते हैं । लेकिन आश्रम में मतंग के सिवा उसे कोई महत्त्व नहीं देना चाहते हैं । आश्रम के अन्य लोग उसे वहाँ से निकाल देना चाहते हैं । जातिगत भेद को उठाकर उसके पथ में बाधा डालना चाहते हैं । यह विचार युग का है । दूसरों के औन्नत्य को परीक्षा लिए बिना कोई समाज किसे स्वीकार करता है । इस प्रकार नरेश मेहता जी आजकल समाज में निम्न जाति की स्त्री या पुरुष की स्थिति क्या है ? उसे दिमाग में रखकर "शबरी" पात्र का सृजन किया है और उसी पात्र को युगीन सत्य के रूप में दिखाया है ।

1.10 सामाजिक आग्रह :

"शबरी" काव्य में सामाजिक नियमों का पालन करना सभी का कर्तव्य बताया गया है । समाज में शूद्र धार्मिक अनुष्ठान का अधिकारी नहीं है । मतंग द्वारा शबरी को आश्रम में स्थान मिला है । इसे सामाजिक नियमों के विरुद्ध कार्य कहा गया है । सामाजिक मर्यादाओं का भंग होने से समाज के बिखर जाने की शंका व्यक्त की गयी है । आखिर सभी आश्रमवासी ने मिलकर शबरी को आश्रम से निकाल देना चाहा । अगर मतंग ऋषि सामाजिक निर्णय का पालन नहीं करना चाहते हैं तो उनको भी समाज से बहिष्कृत करने के लिए भी सब तैयार है । सामाजिक आग्रह को कवि इस में व्यक्त करता है ......

स्वीकार न हो यदि उनको
सारे समाज का निर्णय
तो बहिष्कार करने का
करना ही होगा निश्चय ।[24]

शबरी उच्चवर्णवालों के उस आत्मअहंकार के प्रति विद्रोह प्रकट करती है । शबरी मतंग ऋषि से सम्बोधित करके उच्चवर्ण वालों से यही पूछना चाहती है ....

"क्या आत्मा की उन्नति केवल
है उच्च वर्ग तक ही सीमित
प्रभु तो हैं सबके पिता, भला
उनकी आराधना क्यों सीमित ।"[25]

इस प्रकार के उद्धरण सिर्फ "शबरी" काव्य में ढेर सारे मिल जाते हैं । आधुनिक राम काव्यों में भी जैसे सीता-समाधि[26], रामराज्य[27] जैसे काव्यों में यत्र-तत्र प्राप्त होते हैं ।

१·११ अस्पृश्यता :

इसके सम्बन्ध में गांधी जी के विचार को देख सकते हैं । गांधी जी आजीवन वर्ण व्यवस्था पर खुलकर प्रहार करते रहे । गांधी जी ने अपने लेखों और भाषणों में इस के लिए कठोर-से-कठोर शब्दों का उपयोग किया है । उन्होंने कहा कि अस्पृश्यता वर्तमान हिन्दू धर्म के माथे पर अमिट कलंक का टीका है । यह एक अभिशाप है । जब तक यह अभिशाप हमारे साथ रहेगा, तब तक इस पवित्र भूमि पर जो कुछ भी विपत्ति आती है, वह इस घोर पाप दण्ड स्वरूप ही है । आगे गांधी जी ने और विवेचन किया है ----"अस्पृश्यता जिस रूप में आज हिन्दू-धर्म में प्रचलित है, वह भगवान और मनुष्य दोनों के विरुद्ध पाप है । यह एक विष की तरह है, जो हिन्दू धर्म के मर्म को खाए जा रहा है ।····· सहस्रमुख वाले राक्षस की तरह यह प्रथा अपनी जहरीली जीभ से समाज को डस रही है ।"[28]

नरेश मेहता जी ने अस्पृश्यता एवं वर्ण व्यवस्था जैसे सामाजिक दुराचारों के दोषों को दृष्टि में रखकर मतंग के द्वारा उन्हें समाप्त करना चाहा । मतंग अस्पृश्य शबरी को गंगा के समान पवित्र मानते हैं । उनके मत के अनुसार शबरी शूद्रा है तो यह गंगा भी शूद्रा है । इस वर्ण व्यवस्था से बढ़कर धर्म की सर्वोच्चता को स्थापित करते हुए आश्रमवासियों से प्रश्न करते हैं --

"क्या धर्म तत्व से ऊंची
है वर्णाश्रम मर्यादा ?
तब व्यर्थ तपस्या पूजन
यह गंगा भी है शूद्रा ।"[29]

अस्पृश्यता हिन्दू समाज का कलंक है जिसके मूल में वर्ण व्यवस्था है । ब्राह्मण, क्षत्रिय वणिक और शूद्र वर्णों में समाज को व्यवस्थित करना समाज को बांटना नहीं, उसे श्रम का विभाजन कहा जाता है । "व्यक्ति को जिस वृत्ति में मन लगे उसी दिशा में उन्हें सक्रिय करने का उद्देश्य था ।"[30] इस भावना को नरेश मेहता "शबरी" में वर्ण व्यवस्था के प्रारंभिक रूप में सूचित करते हैं । आधुनिक रामकाव्यों में नरेश मेहता ने अस्पृश्यता एवं वर्ण व्यवस्था के सम्बन्ध में जितना कहा है उतना दूसरे किसी कवि ने नहीं कहा ।

2. पारिवारिक सम्बन्ध :

पारिवारिक सम्बन्ध में दो अंग हैं । पहला है दाम्पत्य जीवन का आदर्श और दूसरा - परिवार के अन्य सदस्यों के सम्बन्ध ।

2.1 दाम्पत्य जीवन का आदर्श :

आजकल परिवार के विघटनशील तत्वों के बीच रामकाव्य धारा के कवियों ने सन्तुलित दृष्टिकोण का चित्रण किया है । उन्होंने दाम्पत्य के आदर्श को दृढ़ भित्ति प्रदान की है और इसके अलावा उसे जीवन की परिपूर्णता का श्रेष्ठतम आधार प्रमाणित किया है । उन्होंने दाम्पत्य जीवन की सफलता के लिए काम-निग्रह और संयम की महत्ता आवश्यक माना है ।

आधुनिक राम - काव्य में कवियों ने काम-निग्रह के लिए स्त्री को पतिव्रत धर्म एवं पुरुष को एक पत्नीव्रत के पालन का पूर्ण समर्थन किया है। "साकेत" में गुप्त जी ने पत्नी के पातिव्रत के सम्बन्ध में कहा ....

मेरी यही महामति है -
पति ही पत्नी की गति है।[31]

इसी भाव को हरिऔधजी ने "वैदेही वनवास" में प्रकट किया है.. ..

"है मुख्य -धर्म पत्नी का, पति-पद पंकज की अर्चा"

"रामराज्य" में बलदेव प्रसाद मिश्रजी कहते हैं कि "पत्नी का मुख्य धर्म है पति के साथ रहना है।"[33]

2.2 पति की सेवा :

दाम्पत्य-जीवन की सफलता पति -पत्नी के पारस्परिक प्रेम और सहयोग से ही निश्चित होती है। आधुनिक राम-काव्य में पत्नी को भारतीय आदर्श के अनुसार पति की सेवा में ही जीवन यापन करता है। पत्नी अपने अहं का त्याग कर पति की सेवा में ही अपना जीवन सार्थक मान लेती है। हरिऔध जी ने कहा.....

प्रियतम सुख-साधन-आराधन
में थी सारा-दिवस बिताती।
उनके पुलके रही पुलकती,
उनके कुम्हलाए कुम्हलाती।[34]

बालकृष्ण शर्मा "नवीन" , "उर्मिला" में उर्मिला लक्ष्मण से कहती है कि "तुम मेरी शुद्ध निष्ठा, परमागति, ज्ञान-शशि और पावन परब्रह्म रति हो । तुम मेरी आध्यात्मिकता हो ।"[35] मैथिली शरणगुप्त कहते हैं कि पत्नी की एकनिष्ठता की स्वीकृति में पति को कृतकृत्य होना है, पति को पत्नी का आदर ही नहीं, फिर भी उससे एक निष्ठ प्रेम करना चाहिए । इस प्रेम में अहं का भाव बिल्कुल छोड़ना होगा । "साकेत" के लक्ष्मण चित्रकूट में उर्मिला से मिलने पर उसके चरणों पर गिर पड़ते है....

गिर पड़े दौड़ सौमित्र प्रिया-पद-तल में,
वह भींग उठी प्रिय-चरण धरे दृग-जल में ।[36]

पति और पत्नी अहं को छोड़कर समझौते के साथ चलना आधुनिक विचार है । प्राचीन परंपरा में पुरुष का अधिकार चलता था। लेकिन लक्ष्मण स्वयं जाकर उर्मिला के चरणों पर गिर पड़े हैं ।

2.3 पति-पत्नी का विच्छेद :

भौतिकता का प्रभाव नर-नारियों को विलास शृंगार एवं स्वच्छंदता की ओर ले जाता है । नारी अपने अहं का तिरोभाव नहीं कर सकती । अतः बार-बार पति-पत्नियों का सम्बन्ध विच्छेद होता रहता है । इस के कारण ही विवाह का पवित्र बन्धन एक खेल बनता जा रहा है । अतः वैदेही वनवास में हरिऔधजी ने पति-पत्नी के सम्बन्ध - विच्छेद को एक निंदनीय व्यापार माना है --

> है अभिनिन्दित नहीं सात्विकी - प्रकृति से
> है पती-पत्नी त्याग परम-निन्दित - क्रिया ।[37]

हरिऔध जी ने तलाक की पद्धति को दृष्टि में रखकर कहा है । दाम्पत्य सम्बन्ध एक स्थायी सम्बन्ध है । जिसे पारस्परिक सहयोग द्वारा पूर्ण बनाना अनिवार्य है और ऐसा ही होना चाहिए। "रामाराज्य" में बल्देव प्रसादजी कहते हैं कि "पति का कर्तव्य पत्नी की रक्षा का भार उठाना और पत्नी का कर्तव्य अपने माधुर्य से पति के भार को हल्का करना है ।"[38] "पति-पत्नी दोनों कोएक-दूसरे पर एकनिष्ठता ही दाम्पत्य जीवन को पूर्ण बना सकती है ।"[39] इस तरह के विचार रामचरित चिन्तामणी[40], सीता समाधी[41], अशोक वन[42], भूमिजा[43] आदि काव्यों में पर्याप्त रूप में है ।

2·4 नारी की मुक्ति :

आधुनिक युग की नारी किसी भी क्षेत्र में पुरूष से कम नहीं है । सब क्षेत्रों में नारी का स्थान पुरूष से बराबर रहा है, लेकिन भावनाप्रधान होने के कारण उसकी अपनी कुछसीमाएं है । आधुनिक नारी के भी असहाय होने पर सोचने का ढंग वही पुराना हो जाता है । मृत्यु को गले लगाती है । इन भावनाओं को भारत भूषण अग्रवाल ने "अग्निलोक" में स्पष्ट किया है । "अग्निलोक" की सीता भी अपने आपको रामराज्य में सबसे अधिक निरीह मानती है । इसलिए वह मृत्यु से ही अपनी मुक्ति मान लेती है और उसे स्वीकार करती है --

> पर तो मैं लाचार हूं,
> इतने बड़े राम राज्य में
> आज मुझ से ज्यादा निरूपाय कोई नहीं

आज मैं जीकर क्या करूँगी
अब तो मरण ही मुक्ति है ।[44]

उपर्युक्त लक्षण जैसे पति-पत्नी का सम्बन्ध, विच्छेद, वैधव्य आदि दाम्पत्य जीवन में दिखाई देते हैं । इसका हल समानता, सद्व्यवहार, आदर्शपालन आदि है । कवियों ने आधुनिक राम काव्य में दाम्पत्य का यही आदर्श माना है । यह आदर्श पूर्णतया भारतीय है । इसमें विशेष बात ये है कि काम के स्वच्छंद प्रवाह के साथ संयम बन्धन होता है । आधुनिक राम काव्यों में हृदय की सरसता के साथ आदर्श की कठोरता और लौकिकता के साथ आध्यात्मिक स्पर्श भी निहित है ।

2.5 परिवार के सदस्यों से सम्बन्ध :

जीवन सांसारिक सुख-दुख, राग-द्वेष, संघर्ष - शांति के बीच ही व्यतीत होता है । भले-बुरे का चक्र यहाँ निरन्तर चलता रहता है । प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों का निर्माण होता है । इसके सामने किसी प्रकार के अन्तर नहीं है । मनुष्य व्यक्तिगत दृढ़ता, धीरता और आवश्यकतानुसार कर्म-साधना के द्वारा खरा सिद्ध होकर महानता के शिखर पर पहुँचता है । कहा जाता है कि कर्म का वास्तविक क्षेत्र गार्हस्थ्य जीवन है । दशरथ - परिवार संयुक्त परिवार है । इसमें पिता, माता, विमाता, भाई, भाभियाँ, पत्नी, बहिनें, ननद एवं जेठानी - देवरानी आदि हैं । सभी परिवार के सदस्य अपने-अपने व्यक्तित्व के अनुसार पारिवारिक मंच पर अपने अपने अभिनय प्रस्तुत करते जाते हैं । इस संयुक्त परिवार का नियम है कि इस परिवार का मुख्य पुरुष पिता है और उसकी आज्ञा का पालन तर्क-वितर्क के बिना स्वीकार करना है ।

मैथिलीशरण गुप्त के संयुक्त परिवार के बारे में डा० नरेन्द्र ने कहा कि -- "जिसने गुप्तजी के काव्यों का एक बार भी अध्ययन किया होगा, वह अवश्य मान लेगा कि उनको गृहस्थ जोवन के चित्र खींचने में अद्वितोय सफलता मिलो है । यह युग राष्ट्रोयता का होने के कारण लोग उनको राष्ट्रोयता को ले उड़े, अन्यथा उनको प्रधान विशेषता गृहस्थ जोवन के सुख-दुख को व्यंजना हो है ।"45

2·6 पति-पत्नो का सम्बन्ध :

"साकेत" में गुप्तजी ने ऊर्मिला और लक्ष्मण के बोच इसो सम्बन्ध को स्पष्ट किया है । लक्ष्मण और ऊर्मिला के बोच हास-परिहास का अमृत बहने लगा । इस विनोद में कभो पति को विजय होतो और कभो पत्नो को । लेकिन वे हारकर भी विजय से अधिक आनन्द का अनुभव करते हैं । वास्तव में प्रेमियों का प्रेम सचमुच वर्णनातोत है और अर्थात् शब्दों में उसका वर्णन नहीं किया जा सकता । उनको हार में भो परस्पर जोत है·····

हार जाते पति कभो, पत्नो कभो,
किन्तु वे होते अधिक हर्षित तभो ।
प्रेमियों का प्रेम गोतातोत है ।
हार, में जिसमें परस्पर जोत है । 46

आधुनिक युग में पति-पत्नो सहो समझौता से जोवन को चलाते हैं । यहो भावना साकेत में गुप्तजी व्यक्त किये हैं ।

2·7 नियति का सम्बन्ध :

हरिऔधजी कहते हैं कि पति-पत्नी या नर-नारी का सम्बन्ध नियति है । ये दोनों एक सूत्र में बँधे रहते हैं । यह मत प्राचीन परंपरा को स्मरण करा रहे हैं । पति-पत्नी का बन्धन समाज में सही विधियों में बन्धे रहना है । उनका मिलन नियति ही है । पति-पत्नी के बीच त्याग की भावना व्यक्त हुई है । सुख-दुख में एक को चुनने के अलावा दोनों आपसी प्रेम से भोगना चाहिए -

सुख में दुख में जो ही प्रीति न एक सी ।
स्वर्ग सा सुखद जो न युगल - संसर्ग हो ।।[47]

हरिऔध जी ने पति-पत्नी का सम्बन्ध सबसे प्रिय सम्बन्ध कहा है । आधुनिक परंपरा के अनुसार पति-पत्नी में किसी प्रकार असमंजस न पैदा होना चाहते हैं । बहुत ही आपसी प्रेम से व्यवहार करते हैं । अगर उनके बीच असमंजस पैदा हो तो विपत्ति की ओर खींचेगा । फलतः सत्या नाश होगा । ये दम्पति के हृदय में छेद करती है । उसके कारण उनके जीवन विषमतम बन जाते हैं । "परिणाम स्वरूप पति-पत्नी के बीच विच्छेद पैदा होता है ।"[48]

आधुनिक युग की नीति है कि पति और पत्नी दोनों बराबर है । स्त्री-पुरुषों से बराबरी का हक माँगती है । अग्निलीक में भारत भूषण अग्रवालजी ने सीता जैसी पात्र को आधुनिक मानसिकता की प्रतीक बनाया है । पुरुष अगर नारी का त्याग कर सकता है तो नारी भी कर सकती है । "अग्निलीक" की सीता कहती है ....

राम ने मुझे बहुत पहले ही छोड़ दिया था
आज मैं भी राम को छोड़ती हूं ।
अब मैं स्वतन्त्र हूं, मुक्त हूं,
अपने आप में पूर्ण हूं
आप अपनी निर्देशिका, आप अपनी कर्त्री और आप अपनी भोक्ता हूं ।[4]

प्राचीन परंपरा है कि पत्नी सदा पति सेवा करती रहे और अपना जीवन पति को समर्पित कर दे । पत्नी के लिए पति ही सर्वस्व है । "साकेत सन्त" में मिश्रजी कहते हैं कि "पत्नी हमेशा पति की सेवा करना चाहती है ।"[50] पुरानी पीढ़ी की स्त्री बहुत अबला है अतः उसमें निर्बलता है । पति के कितना सताने पर भी पति को ही भगवान मानकर चलती है । उस के लिए प्राण तक देने के लिए तैयार रहती है । इस भावना को रघुवीर शरण की भूमिजा में देखा जा सकता है । इसमें "सीता अपनी स्थिति पर दुःखित होने पर भी अपने पुत्रों को पति राम की कथा सुनाती है ।"[51]

आधुनिक राम काव्यों में राम सीता के प्रति किये गये दोषों को स्वीकार करते हैं और अपने विचार व्यक्त करते हैं । "भूमिजा" में राम सीता से कहते हैं कि मेरे बहुत दोष है, मैंने तुम्हारे प्रति बहुत अन्याय किया था । फिर भी भाग्य की बात ये है कि मेरे जैसे विष घट पर अब भी तुम्हारा प्रेम रहा है....

"मेरे जैसे विष घट पर भी
प्यार रहा है तेरा ।।"[52]

इस पद पर आन्तरिक रूप से विचार करने से राम के पश्चाताप का रूप स्पष्ट होता है ।

2·8 परस्पर निर्भरता :

दम्पति में हीन भावना नहीं रहनी चाहिए । दोनों एक है । एक दूसरे पर निर्भर हैं, और परस्पर आधारित है । एक के बिना दूसरे को सोचना व्यर्थ है । ये आधुनिक युग की राय है । "उर्मिला में यही विचार व्यक्त हुए हैं । नवीन जी नर-नारी या पति-पत्नी के सम्बन्ध में कहते हैं कि कभी भी (दम्पति में) भेद नहीं रहना चाहिए ।[53] "जानकी जीवन" में सीता ने राम पर अपार प्रेम रहने के कारण वन जाने की बात अस्वीकार की है ।[54] पत्नी की प्रशंसा करना प्राचीन परंपरा में है लेकिन कवयित्री राजेश्वरीजी नये विचार से व्यक्त करने की कोशिश की है । सीता की श्रद्धा को देखकर राम कहते हैं कि --

"पति गृह में है यह सुख पाया, आते ही सुख चैन गंवाया ।"[55]

राजेश्वरीजी कहती है कि "पति-पत्नी के प्रेम में विश्व-कल्याण निहित है ।" "नारी नर के लिए प्रेरक एवं पूरक भी है ।"[57] ये सभी विचार आधुनिक युग को दृष्टि में रखकर लिखे गए हैं ।

2·9 प्रेमिका एवं पत्नी :

भारत भूषण अग्रवाल की सीता आधुनिक युग की मानसिकता की प्रतीक है । इस में सीता एक सवाल उठाती है कि पति के मनो जगत में प्रेम को कोई जगह नहीं । प्रेमी सब कुछ त्याग कर सकता है लेकिन प्रेमिका नहीं

दुनिया में भी ऐसे करोड़ों उदाहरण है जहां प्रेमी ने स्वर्ण सिंहासन, माता-पिता, कुल की मर्यादा सब कुछ त्याग दिया प्रेयसी के लिए, किन्तु वही प्रेमी जब पति बन गया है तो उसके सम्मुख अनेक बंधन आ गए है । पति को पत्नी के प्रेम का अहसास नहीं होता । प्रेमिका एवं पत्नी दोनों रूपों में प्रेम, मात्र प्रेम करती है । किन्तु राम ने सीता के संदर्भ में न तो सीता को प्रेमिका के रूप में महत्त्व दिया है न ही पत्नी के रूप में सीता प्रश्न करती है....

मैं पत्नी नहीं, प्रेयसी हूं,
नहीं, प्रेयसी नहीं, प्रेमिका
राम की प्रेमिका ।
मैंने राम को विवाह ही नहीं किया,
मैंने राम से प्यार किया है ।[58]

इस प्रकार के विचार आधुनिक राम काव्य "अग्निलोक" के अलावा और अन्य काव्यों में नहीं है । नरेश मेहता ने "प्रवादपर्व" में सीता को आदर्श पत्नी के रूप में चित्रित किया है । "सीता को अपमानित करने पर भी, अग्निपरीक्षा लेने को तैयार होकर भी वह अपने राम के न्याय पर अपार विश्वास रखती है ।"[59] इस प्रकार के उदाहरण रामचरित चिन्तामणी[60], भूमिजा[61], वैदेही वनवास[62], जानकी जीवन[63] आदि में कवियों ने स्त्री को आदर्श पत्नी के रूप में ही दिखाया है ।

2.10 अन्य सदस्यों से सम्बन्ध :

रामकाव्य परम्परा का सबसे महत्वपूर्ण आदर्श पारिवारिक संबंधों

में है । पौराणिक काल से लेकर आधुनिक काल तक संयुक्त परिवार के मानदण्डों को रामकाव्यों में कहीं भी नकारा नहीं गया है । यहाँ तक की कैकेयी जैसी विमाता के दोषों का प्रक्षालन भी आधुनिक काव्यों में कर दिया गया है । विभिन्न पारिवारिकसंबंधों को आधुनिक राम काव्यों में भारतीयता के आलोक में ही रखा गया है ....

2.11 पितृ भक्ति :

आधुनिक राम-काव्यों में पुत्र के लिए पितृ भक्ति अनिवार्य बतायी गई है । पं० रामचरित उपाध्याय के राम कैकेयी से कहते हैं....

सत्पुत्र जग में है वही जो निज पिता का भक्त हो ।
गुणवान हो, बलवान हो, सद्धर्म में अनुरक्त हो ॥[64]

साकेत में गुप्त ने पितृ भक्ति को अत्यंत महत्व दिया है । गुप्त के "राम प्रति दिन प्रातः काल भाइयों सहित पितृ वन्दना के लिए जाते हैं ।"[65] राम भी पिता की आज्ञा का पालन करना सदा विधेय मानते हैं ।[66] यह प्रसंग जानकी जीवन, रामराज्य, सीता समाधि आदि काव्यों में मिल जाता है ।

2.12 माता-पिता का सम्बन्ध :

माता के ममत्व एवं पुत्र की श्रद्धा का आदर्श स्पष्ट है । इसमें आधुनिक विचार है कि माता अपने पुत्रों के भविष्य को दृष्टि में रखकर और लोक कल्याण के लिए पिता की अनुगामी बनकर राज्य करना चाहती है ।

हरिऔध जी की "सीता अपने पुत्रों- लव-कुश को पिता का अनुगामी बनने और सद्गुणों द्वारा लोक मंगल की शिक्षा देती है ।"[67] इसी प्रकार बलदेव प्रसाद मिश्र ने चित्रकूट मिलन में माता-पुत्र के सम्बन्ध का चित्रण किया है • • • •

कौशल्या ने सिर सूंघ उन्हें जब छोड़ा,
कैकेयी ने आश्लेष अमिट सा जोड़ा ।
x x x
ललकी छोटी माँ, राम गिरे चरणों पर ।[68]

आधुनिक राम काव्यों में माता-पुत्र को सम्बन्ध प्राचीन परंपरा से भिन्न नहीं दिखाया गया है ।

2•13 भाईपन की भावना :

प्राचीन राम काव्यों में राम के प्रति लक्ष्मण की सेवा और जीवन अर्पित करने की भावना को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया है । आधुनिक राम काव्यों में भी वही विचार लिये गये हैं । यहाँ पर लक्ष्मण और उर्मिला, राम और सीता के प्रति वही श्रद्धा को व्यक्त कर रहे हैं । लक्ष्मण उर्म्मिला से कहते हैं कि तुम्हारी समानता में एक भी उपमा उपयुक्त नहीं है । उर्म्मिला उत्तर में कहती है कि राम के राज्याभिषेक में तुम्हारा कौन-सा स्थान है । तब लक्ष्मण कहते हैं कि मैं तो राम का एक सैनिक मात्र हूं, फिर उर्म्मिला कहती है कि तुम राम के सैनिक मात्र हो लेकिन मैं तो सीता की बहिन हूं• • •

एक सैनिक मात्र लक्ष्मण राम का
किन्तु, सीता की बहन है उर्म्मिला,
वाह, उलटा योग यह अच्छा मिला ॥[69]

यही विचार मणिरायपुरी की "कैकेयी" में दृष्टव्य है । इस में लक्ष्मण कहते हैं कि सब नाश होने पर भी मैं भरत को यही कहूँगा कि "मैं राम का स्वामी हूँ वे जहाँ रहेंगे मैं भी वहाँ ।"[70] "साकेत सन्त" में राम और भरत के मिलन में हृदय का आवेग फूट पड़ने की भावना स्पष्ट होती है ।[71]

देवर-भाभी के सम्बन्ध में आदर और स्नेह के साथ सात्विक छेड़-छाड के छींटे प्राप्त होते हैं । "भाभीऔर देवर का सम्बन्ध भी इसी प्रकार मधुर परिहासों से भरा है ।"[72] परिवार का पूर्ण चित्र उपस्थित करने वाले एक मात्र श्री मैथिलीशरण गुप्त है । आपके "साकेत" में परिवार के सभी प्रकार के सम्बन्धों का आदर्श प्राप्त हुआ है । उनका पारिवारिक विचार भारतीय जीवनादर्शों से प्रभावित है, साथ ही उसमें हार्दिक, सरलता का भाव निहित है । इसमें हम उपर्युक्त सम्बन्धों को भारतीय जीवन आदर्शों के अनुसार देखना ही आधुनिक विचार है ।

3. नारी भावना :

भारतीय समाज में नारी का स्थान पवित्र है । नारी को शक्ति स्वरूपिणी के रूप में पूजा हुई है । भारतीयों का विश्वास है कि "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।" भारतीय परंपरा में नारी का स्थान उच्च माना गया है । भारतीयों की दृष्टि में विवाह श्रेष्ठ माना जाता है । पति पत्नी का सम्बन्ध इहलोक में ही नहीं, परलोक में भी रहता है । भारतीयों का विश्वास है कि यह सात जन्मों का सम्बन्ध है । दांपत्य में भी नारी उन्नत स्थिति को पायी है । आधुनिक युग में नारी का बाह्य संसार दिन-ब-दिन बढ़ता जा रहा है । महिलाएं विविध क्षेत्रों में पुरुष वर्ग से स्पर्धा रख रही है ।

आधुनिक राम - काव्यों में नारी संबंधों में मध्य-युगीन धारणा का भी प्रतिबिम्ब प्राप्त होता है लेकिन सर्वत्र इस प्रकार की धारणा ... व्यक्त नहीं हुई है । उसमें नारी, आदर्श भारतीय नारी के रूप में सम्मानित हुई है । नारी यहाँ पर पुरुष के मार्ग को बाधक नहीं किन्तु साधक रही है । उसके संसर्ग से ही पुरुष को पूर्णता मिलती है । किन्तु जहाँ पर पुरुष ने अपनी महत्वाकांक्षा में नारी के महत्व को नहीं आंका है वहाँ सीता जैसी नारी ने भी राम से प्रश्न किया है । आधुनिक राम-काव्यों में नारी की मानसिकता परम्परागत एवं आधुनिक दोनों रही है ।

3·1 परम्परागत रूप :

मैथिलीशरण गुप्त ने "साकेत" में "ऊर्मिला" को न केवल अपनी करुणा अर्पित की लेकिन उसे महाकाव्य की नायिका होने का गौरव स्थान दिया । साकेत में सौंदर्य, कला-प्रेम, स्वाभिमान, चरित्रत्व, विचारशीलता, रोमांस, अनुराग, त्याग आदि गुणों से स्वतन्त्र व्यक्तित्व प्रदान किया है । गुप्त जी की नारी कल्पलता के समान है । नारी अपने अनुराग और त्याग के फलों से जीवन को सरस और मधुर करती है । वास्तव में लक्ष्मण के अनुसार नारी जाति कल्प वल्लरी के समान है । ऊर्मिला कहती है कि पुरुष जाति इस कल्प वल्लरी को सहारा देने वाला आश्रय रूप वृक्ष है ....

कल्पवल्ली सी तुम्हीं चलती हुई,
बाँटती हो दिव्य फलती हुई ।[73]

गुप्तजी की सीता नारी धर्म के बारे में कहती है कि हे स्वामी ! मुझे अपने से भिन्न मत समझो, तुम्हारा दुःख ही मेरा दुःख है । और मेरा

सुख ही तुम्हारा सुख है । "यह मेरे लिये उचित नहीं है कि सुख में तो मैं तुम्हारा साथ दूं और संकट के समय तुमसे मुंह मोड़ लूं ।"[74]

3·2 वैधव्य जीवन :

मैथिलीशरण गुप्त जी ने वैधव्य जीवन को पवित्रता का विधान किया है । रानियों की ओर से मृत्यु का प्रस्ताव सुनकर वशिष्ठजी ने कहा कि संसार में वैधव्य के समान महानवस्तु अन्य नहीं है । वैधव्य से यह आसक्ति रहित प्रेम और पवित्रता से भरित अमर सुहाग धन्य माना जाता है । तुम्हारा यह वैधव्य पूर्ण जीवन तो अग्निमय हो गया है । पति के साथ सती होने के धर्म से कहीं बढ़कर तो वैधव्यपूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए उम्र भर पति का स्मरण करना ही उचित है ····

सहन कर जीना कठिन है देवि
सहज मरना एक दिन है देवि ।[75]

आधुनिक सभ्यता में पुरुष को देखकर नारी जगत संकोच में रह जाती है । बलदेव प्रसाद मिश्र जी "साकेत - संत" को नारी संकोच के साथ रहती है । पुरुष के मन में छवि का विस्तार होता है लेकिन नारी के मन में संकोच अधिक रहती है । पुरुष को यह सब कुछ पाने की चाह (इच्छा) है लेकिन नारी का तो एक कान्त पर ही है ···

पुरुष-मन में छवि का विस्तार,
नारी-मन में संकोच अपार ।
पुरुष का ही अनन्त पर चाव,
नारि का एक कान्त पर भाव ।"[76]

3·3 शक्तिस्वरूपिणी नारी :

भारतीय दृष्टि नारी को आदि शक्ति मानती है । नारी धरती के जैसे सहन कर सकती है अगर क्रोध में मन की सहनता का भंग होने पर प्रलय मचा देती है । अपराधी ही अपने गलती से बचने के लिए आवाज लगाता है अतः नारी कई गुण नर से श्रेष्ठ है । पाप और पुण्य को सह लेती है उन्हें कोई नहीं बचाया है । रघुवीरशरण मिश्रजी का राम कहते हैं कि जब इस संसार में नारी ... रोई है तब प्रलय होता आया है ....

"पाप पुण्य मन के बोझे है,
इन से बचा न कोई ।
तब तब प्रलय हुई धरती पर
जब जब नारी रोई ।।"[77]

बालकृष्ण शर्मा नवीन जी ने नारी का कार्य क्षेत्र पर स्वीकार किया है । उनके अनुसार "नारी गृह - स्वामिनी और गृह व्यवस्था के उत्तरदायित्व को वहन करने वाली है ।"[78]

3·4 शक्ति की पूजा :

निराला ने राम के द्वारा शक्ति की पूजा करायी है । रावण पर विजय पाने के लिए निराला के राम आत्म विश्वास खो चुके हैं । अतः राम ने शक्ति पूजा किया था । किसी का विजय हासिल करने के लिए स्त्री का पात्र होना यहाँ सार्थक हुआ है ....

स्थिर राघवेन्द्र को हिला रहा फिर-फिर संशय
रह-रह उठता जग जीवन में रावण-जय-भय
x x x

असमर्थ मानता मन उद्यत हो हार-हार ।[78]

यहाँ पर राम की शक्ति पूजा, राम की नारी की शक्ति पूजा की प्रतीक मानी जा सकती है ।

मैथिलीशरण गुप्त ने नारी के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा है कि.... "आधुनिक युग की विचार दृष्टि ने नारी की इस स्थिति को समाज और देश के .. लिए अत्यन्त हानिकारक ठहराया । पत्नी के रूप में योग्य सहयोगिनी, माता के रूप में योग्य शिक्षिका और साथ ही, अपनी स्वतन्त्र विद्या बुद्धि और कर्म कुशलता से समाज एवं देश के जीवन विकास में सहयोग देनेवाली एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में नारी की भूमिका को पहचानने का आग्रह हुआ है ।"[80]

3.5 सहयोगिनी :

"प्रवादपर्व" की सीता अपने पर आपादित कलंक से विचलित होकर परित्यक्ता होने का दुःख सहकर भी हृदय से पूरी तरह राम को साथ देती । वह अपने पति के कर्तव्य मार्ग में बाधा बनना नहीं चाहती है । "सीता एक आदर्श पत्नी के रूप में पति राम जीवन बिताना चाहती है ।"[81] समाज में नारी का कर्तव्य महान माना जाता है, अतः उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती । आधुनिक राम काव्य की नारी सम्बन्धी धारणा अधिक उदात्त और नारी स्वभाव के गम्भीर अध्ययन पर निर्भर है ।

आधुनिक प्रगतिवादी विचारधारा की नारी को उसके प्रकृति क्षेत्र से हटाकर उसे समाज में पुरुष की समकक्षता में खड़ा करना चाहती है । आजकल राम-काव्य की नारी भावना में भारतीय संस्कृति का स्वरूप अक्षुण्ण है । उसका कारण कवियों का विशिष्ट चिंतन ही नहीं एवं उनकी विषय - वस्तु भी है ।

3·6 आधुनिक रूप :

आधुनिक नारी से तात्पर्य नारी का वह रूप है जहाँ वह मध्यकालीन पुरुष की हठधर्मिता का विरोध करती है । नये परिवेश में पुरुष से बराबर अधिकार माँगती है । भारतीय नारी को मिले समानाधिकारों के साथ पुरुष से प्रतिद्वंद्विता इसी विकृति की उपज कही जा सकती है । इसी तरह पुरुष की बराबरी में उतर कर भी नारी अपने निजी स्तर से नीचे उतरेगी। परिवार को विघटित कर अपनी सुरक्षा ही नहीं, अपनी मानसिक शांति भी खो देती है, बीसवीं सदी को "महिला-जागरण का युग" कहा जाता है । इस जागरण में कई विषयों को जगाये है । ये सभी में कुछ विचार आधुनिक राम काव्यों पर है । आधुनिक कवियों ने नारी का चित्रण आधुनिक ढंग से ही देखने का प्रयास किये हैं । लेकिन किसी कवि ने भी आधुनिक राम काव्यों में पुनर्विवाह की बात न कहा है ।

3·7 समानता की भावना :

हरिऔध जी ने नर और नारी को समान माना है । उनके अनुसार नियति ने लोक-कल्याण के लिए दोनों का सृजन किया है । उन में एक के बिना दूसरा अपूर्ण है······

है अपूर्ण दोनों पर उनकी पूर्णता
है प्रदान करना दोनों का सम्मिलन ।[82]

यहाँ पर कवि नर के समान नारी पात्र को स्थापित करने का प्रयत्न करता है । मणिरायपुरी ने अपनी कैकेयी में कैकेयी का एक क्रान्तिकारिणी नारी के रूप में चित्रण किया है । इस में आधुनिक नारी के लक्षण द्रष्टव्य है...

ओ विप्लव की प्रथम गायिके ।
    क्रान्ति - स्वरूपे । ओ रानी ।
तेरे कारण अमर बन गई ।
    कवि की कल्याणी वाणी ।[83]

आधुनिक युग में नारी सहती नहीं, समस्याओं के प्रति विद्रोह करती है और अपने लक्ष्य को पाती है ।

3.8 स्वतन्त्र नारी :

आज की नारी बन्धनों में बन्धी बनकर नहीं रहना चाहती है । स्वतन्त्र नारी के रूप में जीना चाहती है । डा० बलदेव प्रसाद मिश्र जी कहते हैं कि भारतीयनारी बंधी बनकर न रहेगी उसे स्वतन्त्र कर दो....

जिस पर चलकर हम सीता को देखें, कर दें उसे स्वतन्त्र
भारतीय नारी न रहेगी बंधी, विदेशों में परतन्त्र ।
जन-शासक होकर अबला का हरण किया, कुत्सित अन्याय
प्रायश्चित करो कुछ जिसमें क्षोभ - सभी का कुछ मिट जाय ।।[84]

रघुवीरशरण मिश्र ने "भूमिजा" में व्यक्त किया कि सीता को अन्याय से जंगल भेजने के कारण जनता में पुरुष के अधिकार और नारी को सदा पीड़ित करने की भावना जारी है । कवि ने यहाँ नारी को दृष्टि में रखकर नारी की स्थिति को व्यक्त किया है ....

सीता क्या सोचेगी मन में,
क्या इतिहास कहेगा ।
नर स्वार्थी है, नारी पीड़ित
यहविश्वास रहेगा ।[85]

नारी मुक्ति में जब तक पुरुष का सहयोग नहीं रहता है तब तक नारी जाति को प्रगति जोर नहीं पकड़ती है । बालकृष्ण शर्मा "नवीनजी" राजकुमारी आर्यवर्त की ललनाओं को आह्वान करती हुई कहती है कि "नारी कायर, भीरु और मतिमंद नहीं है ।"[86] नवीनजी ने नारी को अत्यन्त सशक्त रूप दिया है । नारी का अवसरानुकूल शौर्य प्रस्फुटित हो जाता है । नारी विश्व की आधार है, शक्ति रूपिणी एवं कल्याणमयी है.....

तुम जग की आधार भूत हो, तुम हो आदि शक्ति रूपा ।[87]

कवि का उद्देश्य ये है कि नारी में अनेक प्रकार के लक्षण निहित है । वे लक्षण समय के अनुसार प्रकट होते हैं । अतः नारी का अबला के रूप में स्वीकार किया जाना अनुचित है ।

3·9 स्वच्छंद नारी :

सीता समाधि में कवइत्री राजेश्वरी अग्रवाल ने शूर्पणखा को पाश्चात्य नारी का प्रतीक माना है । शूर्पणखा को पाश्चात्य स्त्री के रूप में देखना आधुनिक भारतीय नारी पर पाश्चात्य प्रभाव को दर्शाना है .....

रूप संवारे शूर्पणखा अति, एक दिवस पहुंची बन ठन कर ।
दूर पीठ भी उधर राम की, देख लखन ने लिया शोघ्रतर ।
बन के सादे रहन-सहन में, हास्यास्पद लगती वन उन में ।[85]

श्री हरदयाल सिंह के "रावण महाकाव्य" में शूर्पणखा को जन्म स्थान का गवर्नर नियुक्त करना आधुनिक नारी जागरण का प्रभाव है ।[89]

3·10 समसामयिक नारी :

"अग्निलोक" में भारत भूषण अग्रवाल की सीता वाल्मीकि से कहती है कि मैं पवित्र हूं, यह लोकापवाद मिथ्या है । इस अपनी पतिव्रता का सवाल करने में कवि ने सीता में आज की नारी को देखा है । सीता सवाल करती है कि क्या ? मुझे सब के सामने सौगन्ध खाकर प्रमाणित करना पड़ेगा कि मैं पवित्र हूं । मुझे सोलह साल पहले ही क्यों कष्टसहना पड़ा । मुझे जंगल में मारी-मारी फिरने की क्या जरूरत थी ?....

मैं जंगलों में मारी-मारी फिरी
अपनी प्रसव-वेदना के समय
आप ही अपना परिचारिक बनी
और फिर दो नन्हे-नन्हें बच्चों को अपनी छाती से चिपकाये ।[90]

भारत भूषण अग्रवालजी अपने काव्य में सीता को समसामयिक नारी के रूप में चित्रित किया है । अग्निलीक की सीता राम के प्रति विद्रोह प्रकट करते हुए वाल्मीकि से कहती है कि मैं न तो रो रही हूँ और न की दया की भीख माँग रही हूँ । ये मेरी प्रलाप भी नहीं है । ये आँसू नहीं अंगारे हैं । ये मेरे जीवन की आग है जो मेरे भीतर धधक रहे हैं । सीता आधुनिक नारी की मानसिकता से युक्त होते हुए भी वास्तविकता से मुँह न मोड़ पाती क्योंकि समसामयिक नारी को इसका भी आभास है ....

आप क्या जाने
इस संसार में नारी कितनी अकेली है?
उसका दुख भी आँसू है,
उसका क्रोध भी ।[91]

सीता का आक्रोश चरम सीमा पार कर चुका है इसलिए वह राम को बख्श देती है क्योंकि राम उसके पुत्रों के पिता हैं......

नहीं तो मैं आप को दिखा देती
कि नारी क्या कर सकती है ।[92]

उपर्युक्त पद में कवि ने आधुनिक नारी के आक्रोश का चित्रण किया है । समसामयिक नारी को प्रतीक के रूप में भारतभूषण ने अग्निलीक की सीता का जैसा सटीक चित्रण किया है वैसा अन्य रामकाव्य में अनुपलब्ध है ।

3·11 नारी की उदासीनता :

कवि का कहना है कि शबरी के मन में घोर उदासीनता की भावना बढ़ गयी है । शबरी सोचने लगती है कि अगर जीवन में कुछ पाना है तो परिवार का मोह त्याग देना अनिवार्य है । "उस सघन अर्धरात्रि के समय सब बच्चे सोये थे और पति की बाहें गले में थी वे कच्चा मोह सूत्र ही थीं ।"[93]

शबरी के पारिवारिक जीवन में पति का सहयोग नहीं मिला है । इस के फलस्वरूप वह अपनी वैयक्तिक चेतना की रक्षा के लिए पारिवारिक बन्धनों को तोड़कर घर से चली जाती है । ऋषि मतंग की कृपा से भक्ति, ज्ञान और योग में निपुण बन जाती है । अपनी स्वतन्त्र सत्ता से साधना मार्ग में सफल हो जाती है । शबरी के ऐसे स्वतन्त्र तेजोमय रूप के प्रति मतंग भी प्रसन्न हो गए है·····

मन्दार पुष्प सा जिसका
सर्वस्व समर्पित प्रभु को
जो स्वयं तपस्या है अब
क्या वेद मन्त्र है उसको ।[94]

यहाँ पर मेहताजी ने "शबरी" में नारी के सामर्थ्य को व्यक्त किया है और परिवार से उदासीन दिखाया है ।

4· मानवतावाद :

इस शब्द का सामान्य व्यवहार मानव सेवा के आचार परक अर्थ में होता है । डा० श्वाइत्जर के अनुसार "मानवता शब्द से ही हमारा तात्पर्य होता है -- साथी इन्सान के प्रति आदमी की वास्तविक सदिच्छा । इस शब्द

से यह संकेतित है कि हमें न केवल इसलिए करुणाशील होना चाहिए कि यह एक नैतिक आदेश है, अपितु इसलिए कि यह {करुणाशीलता} मानव-स्वभाव की स्वयं एक विशेषता है ।"[95] मानवतावाद आदर्शवाद की अपेक्षा यथार्थवादी है । इस में मानव के त्याग, बलिदान, पराक्रम, संघर्ष और महाप्राणत्व की ओर अधिक बल दिया गया है । मानवतावाद में अपनी सहज भूख-प्यास के साथ मान्यता प्राप्त करना आवश्यक है ।

4·1 व्यक्ति की प्रधानता :

साकेत में गुप्तजी के राम सीता से कहते हैं कि समस्त प्राणियों को अपनी रक्षा का अधिकार रहे, परन्तु समाज की सुविधा का भार राज्य शासन ही उठाए । मैं आर्यों का आदर्श सिखाने के लिए आया हूँ । धन से व्यक्ति बड़ा है । मैं यही बताने के लिए आया हूँ । कवि ने यहाँ व्यक्ति को प्रधानता दी है । व्यक्ति के बिना समाज नहीं है । व्यक्ति को प्रधानता देना आधुनिक मानवतावादी धर्म है --

सबकी सुविधा का भार किन्तु शासन को
जन सम्मुख धन से तुच्छ जताने आया ॥[96]

हरिऔधजी "वैदेही वनवास" में मानव की स्थिति के बारे में कहते हैं कि मानव जीवन के लिए पर्याप्त आहार चाहिए । उसको पैदा कराने पर देश का विकास होता है । लेकिन ऐसा न हुआ तो देश में अकाल फैल जायेगा । मानव कष्टों में पड़ जाएगा ....

यदि यथेच्छा आहार - विहार - उपेन हो ।
नर नारी जीवन, तो होगी अधिकता -
पशु - प्रवृत्ति की, औ, उच्छृंखलता बढ़े ।
होवेगी दुर्दशा - मर्दिता - मनुजता ।।[97]

मिश्रजी ने राम में मानवतावाद का दर्शन किया है । कवि माँग करते हैं कि राम बनों लेकिन रावण नहीं । कवि समाज में मानवता को जिलाना चाहते हैं अतः राम बनने की माँग करते हैं......

ग्राम वृद्ध वालों से कहते "राम बनो, रावण मत होना,
राम राज्य के अवयव रहकर, जगमग कर दो कोना कोना ।। [98]

यही विचार निराला ने अपने काव्य "राम की शक्ति पूजा" में राम को सामान्य मानव-रूप में चित्रित किया है । राम अपनी स्थिति से व्याकुल और उन्मन है । निराला के सामने राम का मानव - रूप ही इतना प्रबल है कि दुर्गा द्वारा अन्तिम कमल के चुराये जाने पर राम अपने ध्यान को नहीं छोड़ते, लेकिन समाधि - स्थितप्रज्ञ मानसिकता से कुछ नीचे अवश्य आ जाते हैं । अर्थात् जिस प्रकार व्यक्ति किसी को पाने के लिए या हासिल करने के लिए कुछ नीचे अवश्य आता है, वही राम ने भी किया है, यहाँ निराला के राम साधारण व्यक्ति के रूप में प्रमाणित है...

टूटा वह तार ध्यान का, स्थिर मन हुआ विकल,
संदिग्ध भाव की उठी दृष्टि देखा अविकल,
बैठे वे ही कमल - लोचन, पर सहज नयन,
व्याकुल -व्याकुल कुछ चिर-प्रफुल्ल मुख निश्चेतन ।।[99]

राम की शक्ति पूजा की तरह नरेश मेहता ने राम को एक साधारण मनुष्य के जैसा प्रस्तुत किया है । आधुनिक युग में खण्डित व्यक्तित्व की (split personality) स्थिति भी है । अर्थात् समाज में जैसे-जैसे अभिजात्य तत्वों का विकास होता है-- वैसे - वैसे मानव-आचरण के विधेय भी कठिन होते हैं । अतः नरेश मेहता ने पौराणिक राम को अपने कथा सन्दर्भ में दर्शाया है । राम आज के मनुष्य की ही भांति कहते हैं ---

दो सत्य
दो संकल्प
दो-दो आस्थाएं
व्यक्ति में ही
अप्रमाणित व्यक्ति पैदा हो रहा है ।[100]

मेहताजी ने "प्रवादपर्व" में मनुष्य को प्रधानता देने का प्रयत्न किया है । "इस सृष्टि की जिह्वा मनुष्य है ।"[101]

4·2 मानव और अतिमानव :

कवि बलदेव प्रसाद मिश्र जी ने राम को मानव और अतिमानव के रूप में देखा है । प्राचीन राम काव्य में राम को अतिमानव या भगवान के रूप में देखा गया है । लेकिन आधुनिक राम काव्य के कवियों ने राम को साधारण मानव के जैसा प्रस्तुत किया है ....

"मानव भी श्री राम है अतिमान भी राम
उसी रूप में वे सुलभ, जिसको जिससे काम"[102]

और एक प्रसंग पर मानव की शोचनीय दशा पर कहते हैं कि आज के मानव के लिए किसी प्रकार के लक्ष्य नहीं है । मनुष्य लक्ष्य भ्रष्ट होकर फिर रहा है । किसी ने उनकी प्रगति को रोका नहीं है और न उनकी मनुजता को नियति ने बान्धा है ।[103]

4·3 अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता :

आधुनिकता की सब से बड़ी मांग विचार स्वातंत्र्य है । किन्तु आधुनिकता की सबसे बड़ी पीड़ा भी यह है कि व्यक्ति के विचार कुचल दिए जाते हैं । अभिव्यंजना में पूर्णस्वातन्त्र्य की मांग करना सहज ही है । विचार ही व्यक्तित्व को पुष्ट करते हैं । अतः व्यक्ति को विचार प्रधान कहा जाता है । जो बात एक व्यक्ति के लिए लागू है, वह समूह, समुदाय और राज्य के लिए भी लागू होती है । अगर राज्य की जनता का चिन्तन स्तर ऊँचा होगा तो सचमुच वह राज्य निश्चय ही समुन्नत होगा । जॉन स्टुअर्ड ने लिखा है "जैसे ही विचार शक्ति विकसित होती है वैसे ही मनुष्य की आवश्यकताओं का अन्धापन खत्म हो जाता है । विचार आगे की ओर देखता है और परिणाम की पहले से ही कल्पना कर लेता है ।वह अपने लिए कुछ प्रयोजन, योजनाएं, लक्ष्य, आदर्श और उद्देश्य बना लेता है । मानवीय प्रकृति के इन सार्वभौम और अनिवार्य तथ्यों में से श्रेयस की ओर चरित्र के बौद्धिक पक्ष के मूल्यों की नैतिक अवधारणाएं विकसित होती है । चरित्र का यह बौद्धिक पक्ष इच्छाओं और उद्देश्यों के समस्त संघर्ष और द्वन्द्व में व्यापक और स्थायी परितुष्टि को अन्तर्दृष्टि से देखने का प्रयत्न करता है । वही ज्ञान या दूरदर्शिता है ।"[104] इसी ज्ञान एवं चिन्तन के आधार पर मानव उन्नति करता है अपने हित के साथ-साथ समाज का हित भी करता है ।

भारतीय संविधान में भी विचार स्वातंत्र्य की व्यवस्था रही है । यह व्यवस्था जनता के हित में रहती है । हमारे संविधान में वर्णित मूल अधिकारों पर यह वाक्यांश "मनुष्य जन्म से स्वतन्त्र है किन्तु हर कदम पर बन्धन युक्त है ।"[105] पूर्ण रूप से प्रमाणित करता है । विधि सम्मत स्वतंत्रता ही स्वतन्त्रता है । समाज के व्यापक हितों के सन्दर्भ में युक्ति युक्त निर्बन्धन कई बार अनिवार्य बन जाते हैं । भारतीय संविधान ने इसी भाषा एवं अभिव्यक्ति को जनतंत्रीय पद्धति में आवश्यक समझते हुए अधिकार के रूप में ग्रहण किया है ।

प्रवादपर्व में राम ने राज्य के सभी वर्गों की इसी भाषा और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता को महत्त्व दिया है । राम के राज्य में अनाम वर्ग का समझे जाने वाला धोबी सीता की चरित्र मर्यादा पर कलंक लगाता है । राज्य के सभी राजवंशी उस धोबी के विश्वास को अप्रमाणित मानते हैं । धोबी की अभिव्यक्ति को कोई महत्त्व नहीं देते हैं । राम से उसी विषय पर गहरा विचार किया गया है कि तर्जनी वाणी का प्रतीक होती है और उसमें अनंत शक्ति निहित होती है । व्यक्तिगत तर्जनी के माध्यम से सामूहिक विश्वास व्यक्त होता है । उस अनाम तर्जनी का भी अपना ऐतिहासिक महत्त्व रहता है । इसका इतिहास भी साक्षी है । इस तर्जनी में इतिहास को प्रतिइतिहास में बदलने की शक्ति रहती है । अतः जनता के प्रतिनिधि के रूप में धोबी की वाणी एवं अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता की रक्षा करना राम अपना दायित्व मानते हैं...

ऐसी ऐतिहासिक अनाम तर्जनी में भी
इतिहास को
प्रतिइतिहास में बदल देने की शक्ति होती है ।[106]

राम अपनी प्रजा की अभिव्यक्ति को महत्व देते हैं। क्योंकि राज्य एक का नहीं है, सामूहिक व्यक्तियों का एक समुदाय है। अतः सभी वर्गों का समान अधिकार उस पर होता है। प्रजा की अभिव्यक्ति को राज्य के प्रति विरोधी संकल्प के रूप में नहीं लेना चाहिए। राम ने राजतंत्र में प्रजातन्त्र का समर्थन किया है।

रामराज्य में भाषा और अभिव्यक्ति को प्रधानता दी गई है। जो भी हो समाज अपनी भाषा और अभिव्यक्ति को इतिहासहीन होने का समर्थन नहीं करता है। इसी विषय को प्रवादपर्व में राम ने लक्ष्मण से स्पष्ट किया है।[107] राम ने मनुष्य की अभिव्यक्ति में ही राज्य की सुरक्षा निहित माना है। अतः राम ने अपने राज्य में प्रजा के सभी प्रकार के अधिकारों को सुरक्षित रखना चाहा है। इसलिए राम ने रावण जैसे राजा और उसके राज्य का उल्लेख किया है। रावण ने कभी भी जन सामान्य के विचारों का समर्थन नहीं किया है। सत्ताकोई भी हो अपने अधिकार की सुरक्षा के आगे बन्धुत्व को भी महत्व नहीं देती है। इस के कारण रावण ने भरी सभा में विभीषण को अपमानित करके देश से बहिष्कृत किया है। अपनी शक्ति से प्रजा को अभिव्यक्तिहीन, भाषाहीन और स्वत्वहीन बनाने वाले पराक्रमी रावण के सम्बन्ध में व्यंग्य के रूप में राम ने लक्ष्मण से कहा ---

"प्रतिइतिहास को
अभिव्यक्ति हीन
भाषा हीन और
स्वत्वहीन बना देने वाले
अप्रतिम प्रतापी।"[108]

नरेश मेहता की "संशय की एक रात" के रावण से समस्त दक्षिण देश उनके अत्याचारों से सदा से पीड़ित होते रहे हैं। पीड़ित मानवता की ओर से रावण की निरंकुशता के विरुद्ध अपने अधिकारों की रक्षा के लिए अंतिम मार्ग के रूप में युद्ध करने को निश्चय किया गया है। अपनी शास्त्र की सुरक्षा के लिए विभीषण ने भी राम का साथ दिया है। लंका पर आक्रमण करने के लिए सृष्टि के अद्भुत प्रतीक के रूप में महान सेतु का निर्माण किया गया है। हनुमान ने इस सेतु के पीछे निहित उद्देश्य एवं उस सेतु के महत्व के बारे में राम से कहा कि .....

"वह महासेतु
जो कि प्रथम आश्चर्य सृष्टि का
मान के विद्रोह भाव का
प्रथम
किन्तु अद्भुत प्रतीक है।[109]

अत: "प्रवादपर्व" के राम अपने राज्य को रावण के राज्य का प्रतीक बनना नहीं चाहते हैं। राम अपनी वैयक्तिक समस्या के द्वारा प्रजा को अपनी सत्ता से वंचित करके राज्य में विद्रोह को जन्म नहीं देना चाहते हैं। इसलिए राम ने धोबी को जन साधारण का प्रतिनिधि माना है। व्यक्ति की तर्जनी द्वारा सामूहिक महत्व को स्वीकार करना चाहते हैं। राम यहाँ पर प्रजातंत्र के प्रतिनिधि के रूप में प्रजा की अभिव्यक्ति और अधिकारों की रक्षा करना चाहते हैं। यहाँ पर धोबी को अनाम साधारण वर्ग का प्रतिनिधि मानागया है।

4·4 व्यष्टि एवं समष्टि :

आधुनिक युग में आकर प्रजातंत्र में व्यष्टि से समष्टि को प्रधानता देते हैं । जो नेता बनता है उसे समष्टि के रूप में सोचना चाहिए न कि व्यष्टि रूप में । नेता को अपने कर्तव्य को कभी न भूलना चाहिए । यह विचार जगदीश प्रसाद गुप्त के "शम्बूक" में राम से समता बोध के बारे में सवाल करते हैं शम्बूक कहता है कि कोई भी नेता अपनी भूल नहीं मानता है । जनता को अपराधी बताता है ····

राम तुम राजा बने किस हेतु हो ?
व्यष्टि और समष्टि मन के सेतु हो ?
शूद्र-घाती बने, करके क्रोध,
क्या तुम्हारा यही समता-बोध ।[110]

यही विचार "साकेत सन्त" में भरत भरद्वाज आश्रम में व्यक्त करते हैं । जनता में समष्टि भावना रहनी चाहिए । जनता का सच्चा गौरव राम के राज्य में ही है । वहाँ की जनता में किसी को धन पर मोह नहीं है । राजा और प्रजा का अन्तर नहीं है । सब में साम्यता की भावना विराजमान है । वहाँ की जनता एक लक्ष्य पर स्थिर है । वह है समष्टि भावना । किसी में स्वार्थ की भावना नहीं है । सब लोग अपनी शक्ति को बढ़ाकर परस्पर सहयोग से काम करते हैं····

एक ध्येय पर बढ़े सभी थे,
एक लक्ष्य पर खड़े सभी थे ।
जो कुछ था समष्टि का वह था
कहीं न स्वार्थपूर्ण आवाह था ।[111]

आधुनिक रामकाव्य के कवियों ने व्यष्टि एवं समष्टि की समस्या पर विचार करते हुए व्यष्टि को सदा समष्टि हित में निरत होने की प्रेरणा दी है । "संशय की एक रात" की पृष्ठ भूमि में भी यही समस्या उठायी गयी है । राम सीता की मुक्ति को वैयक्तिक समस्या मानते हैं । अतः राम अपनी वैयक्तिक समस्या में समष्टि के अहित में नहीं चाहते हैं । इसके सम्बन्ध में राम लक्ष्मण से प्रश्न करते हैं कि .....

व्यक्तिगत मेरी समस्याएं
क्यों ऐतिहासिक कारणों को जन्म दें ?[112]

प्रजातन्त्र में व्यक्ति की प्रधानता नहीं है । समष्टि के विचार के आधार पर नेता का निर्णय होता है । यहाँ राम केवल सीता के लिए ही नहीं समस्त मानव कल्याण के लिए युद्ध को स्वीकार करते हैं । समष्टि कल्याण के लिए अपने वैयक्तिक संशय को दबाना उचित मानते हैं....

निर्णय हूं सबका
सब के लिए,
केवल अपने ही लिए,
सम्भवतः नहीं,
नहीं ॥[113]

"प्रवादपर्व" में धोबी के द्वारा सीता की चरित्र मर्यादा पर शंका व्यक्त की गयी है । राम इसे समष्टि विरोधी प्रश्न मानते हैं न कि व्यष्टि के विरोध में । वह अपने व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए समष्टि का गला घोंटना नहीं चाहते । अतः राम राज्य के सभी सदस्यों को सम्बोधन

करते हुए कहते हैं कि क्या ? राजद्रोह व्यक्ति के विरुद्ध होता है । क्या मैं और सीता राष्ट्र है ? अधिपति का अर्थ राजा होता है लेकिन राष्ट्र नहीं । राम यहाँ अपने स्वार्थ को त्यागकर समाज की दृष्टि से सोचते हैं....

"मैं या सीता राष्ट्र है ?
नहीं....
अधिपति होने का अर्थ
राजा तो है
पर राष्ट्र नहीं ।"[114]

इसी काव्य में अनाम तर्जनी का प्रसंग है । इस तर्जनी से समष्टि रूप में लिया गया है ।

ज्यादातर आधुनिक राम काव्यों में मानवतावादी प्रसंग पर्याप्त रूप में है ।

5. समाजवाद की भावना :

आधुनिक राम काव्य पर समाजवाद का परोक्ष प्रभाव पड़ा है । यह प्रभाव सामाजिक एवं आर्थिक समानता, शोषण - निंदा, दलित वर्ग के प्रति सहानुभूति, बीभत्सता के चित्रण जैसे अंशों को देखा जा सकता है । आधुनिक रामकाव्य के काव्यकारों ने अपने आदर्शों के अनुकूल ही समाजवादी तत्वों को स्वीकार किया है । इस में भौतिकता, हिंसा, संघर्ष जैसे तत्वों को विजातीय समझ कर छोड़ दिया है । प्रगतिवाद की स्फुट रचनाओं में राम - कथा को वर्ग-संघर्ष के प्रतीक के रूप में लिया गया है । कवियों ने

प्रगतिवादी काव्य धारा को भारतीय वातावरण के अनुसार रूपायन किया है। आधुनिक राम - काव्य की समस्त विषय - वस्तु नये भाव-बोध में उपस्थित की गयी है। आधुनिक राम काव्य मध्ययुगीन राम-काव्य की परम्परा का अनुकरण नहीं है, उसमें विषय सम्बन्धी नवीनता है।

5·1 लोक मत :

मैथिली शरण गुप्त पर गांधी जी के सत्याग्रह आन्दोलन की स्पष्ट छाप है। जन समुदाय बोल उठा कि हे राम। हमने तो अपना राजा तुम्हें ही चुना है। अतः राज्य छोड़कर हमारे लोक-मत की उपेक्षा मत करो। अगर हमें कुचल कर वन की ओर जा सकते हो तो जाओ। यह कहकर जन समुदाय रथ के आगे मार्ग में बैठ जाते हैं। राम आगे न बढ़ सके क्योंकि वे भी प्रेम एवं वैर के अन्तर को जानते हैं ---

राजा हमने राम, तुम्हीं को है चुना,
करो न तुम यों हाय। लोकमत अनसुना
जाओ, यदि जा सको रौंद हमको यहाँ।[115]

"वैदेही वनवास" में हरिऔधजी लोक नीति के बारे में कहते हैं कि जो व्यक्ति दूसरों की सहायता करता है उसी के उपकार को याद रखना चाहिए। कवि यहाँ पर दूसरों में अर्थात् सज्जन या उपकारक की सहायता करते हुए समन्वय से रहने को कहते हैं ---

उपकारक के उपकारों को याद रख।
करते रहना अवसर पर प्रतिकार भी॥

है अति - उत्तम - कर्म्म, धर्म्म है लोक का ।
हो कृतज्ञ, न बने अकृतज्ञ मनुज कभी ॥[116]

राज्य में या समाज में शासन सही ढंग से चलाना है तो लोक मत और लोक नीति को दृष्टि में रखकर चलना अनिवार्य है ।

5•2 गुलामी के प्रति विद्रोह :

व्यक्ति हर एक समस्या को निडरता सह सकता है किन्तु गुलामी या दमन को नहीं सह सकता । मणिरायपुरी शर्मा "कैकेयी" में जनता की शक्ति के बारे में कहते हैं कि प्रजा सदा आजादी चाहती है ....

युग युग का इतिहास कह रहा
प्रजा दमन से दब न सकी
शक्ति प्रयोग विफल ही होता
क्रांति कभी भी रुक न सकी ।[117]

आम की बात है कि जब तक जनता गुलामी में रहती है तब तक देश किसी प्रकार की प्रगति नहीं कर सकता । "सीता - समाधि" में राजेश्वरी दासता से मुक्ति पाना चाहती है ।[118]

5•3 परिवर्तन :

परिवर्तन सदैव प्रजातन्त्र में ही होता है । जिस प्रकार समय बदलता है उसी के अनुसार व्यक्ति और समाज बदलता है । अगर समय के अनुसार हम

नहीं बदलते तो हमारा विकास नहीं होता । बलदेव प्रसाद ने इसी विचार को "रामराज्य" में व्यक्त किया है । राष्ट्र के विकास के लिए सुधार लाना आवश्यक है । सुधार में जनता को सुख शांति भंग नहीं होनी चाहिए । राष्ट्र एवं प्रजा के विकास का ही ध्येय रहना चाहिए । अतः कवि परिवर्तन को माँग करता है....

सुगति हो या कुगति, गति ही चाहता है लोक
वही काम्य - सुधार, जिसमें सुगति का आलोक ।
अवस्था अनुसार रचकर राज काम-विभाग
चलाओ वह तंत्र, जन के भाग्य जायें जाग ॥[119]

5.4 सम्मिलित श्रम :

समाज की प्रगति में गति पकड़ने के लिए सम्मिलित श्रम बहुत आवश्यक है । किसी कार्य को अलग-अलग करने से बहुत समय व्यर्थ होगा किन्तु सब मिलकर करने से घण्टों या दिनों का काम क्षणों में हो जायेगा । "रामराज्य" में मिश्र जी सम्मिलित श्रम पर जोर देकर कहते हैं...

तुम्हारे श्रम से हूँ मैं सुखी, हो रहा है समाज अनुकूल
समझ अब प्रायः सब ही गये, सम्मिलित श्रम समृद्धि का मूल ॥[120]

आधुनिक राम काव्यों में सम्मिलित श्रम की भावना "रामराज्य" में ही दिखाई देती है, अन्य काव्यों में नहीं है । सम्भवतः मिश्र जी पर औद्योगीकरण का प्रभाव अधिक है ।

5•5 साक्षरता :

भारत सरकार सालों से जनता की साक्षरता पर ध्यान दे रही है । भारत के आजादी पाने के बाद इतना स्पष्ट है कि जब तक जनता साक्षर नहीं बनेगी तब तक देश का विकास न होगा । साक्षरता को प्रधानता देते हुए मिश्र जी कहते हैं कि वानर जातियां जिसे हम जन जातियों का प्रतीक मान सकते हैं वे भी साक्षर थी और उनकी प्रशासन शक्ति अमिट एवं प्रख्यात थी•••

रहेगी जब तक कि साक्षर वानरों की जाति
रहेगी तब तक अमिट उनकी प्रशासन – ख्याति ।। [121]

5•6 प्रजा का विश्वास :

राज्य प्रजा के विश्वास पर टिका होता है । अतः राज्य, न्याय, राष्ट्र व्यक्तियों और सम्बन्धों से ऊपर होता है । राज्य सदा अनाम साधारण जनता के विश्वास को लेकर पनपता है । प्रजातन्त्र में किसी की उपेक्षा नहीं कर सकते हैं•••

जिसे उसने निर्भय अभिव्यक्त किया है
तो राज्य, न्याय तथा आपको
उस अनाम प्रजा के विश्वास की
अभिव्यक्ति की
रक्षा करनी चाहिए ।।[122]

किसी राज्य में भी हो शासन सफल पूर्वक चलाने के लिए प्रजा का विश्वास आवश्यक है । प्रजा का विश्वास न रहने पर राज्य दूसरों के हाथ में चला जाएगा । इसका प्रमाण हमारा इतिहास ही है ।

5·7 नवनिर्माण की चाह :

बालकृष्ण शर्मा "नवीन" जी ने "अपलक" में नव-निर्माण की चाह को व्यक्त किया है । आज का युग नवीन युग है । अतः इस युग में नव निर्माण के द्वारा विश्व - मंगल की भावना को पाया जाता है । कवि आशा करता है कि आनेवाले नव युग बहुत ही उन्नत होंगे । इसलिए उसका स्वागत करना है । नये युग में नवीन मान्यताएँ एवं आदेशों का पालन ही नव-निर्माण की ओर ले जाता है····

आओ नवयुग, उन्नत मस्तक
हो हम स्वागत करते हैं ।
तेरे नव आदेशों को हम
शिर आँखों पर धरते हैं ।[123]

5·8 शोषण और पोषण :

भारतीय परंपरा में अनेक प्रकार से शोषण का पोषण होता रहा है । इनमें निम्न जातियों एवं वर्गों का शोषण, नारी का शोषण आदि महत्वपूर्ण रहे हैं । आधुनिक युग में शोषण का घोर विरोध किया गया है । "साकेत संत" की कैकेयी कहती है शोषण के द्वारा कभी भी उत्कर्ष संभव नहीं····

शोषण यदि प्राणों का हो
पोषण अपना होगा ।
शोषण यदि जीवों का हो,
उत्कर्ष कहाँ कब होगा ?[124]

समाजवादी व्यवस्था में राजा शोषण नहीं कर सकता । जनता शोषण से मुक्त होना चाहती है । अतः मार्क्सवाद के अनुसार समाजवाद में समता का यही आदर्श है -- "प्रत्येक को अपने विकास और उन्नति का तथा जीवन निर्वाह के उपायों की प्राप्ति के लिये समान अवसर हों और प्रत्येक व्यक्ति को अपने परिश्रम का फल पाने का भी समान अवसर हो और समाज के शासन और व्यवस्था में भाग लेकर आत्म निर्णय का समान अधिकार हो ।"[125] मार्क्सवाद समाज के लिए ऐसे शासन का व्यवस्था को आदर्श समझता है जिसमें किसी भी श्रेणी का शोषण न हो सके । इसी विचार से "मार्क्सवाद शोषण का अन्त कर समानता स्थापित करने के लिए मजदूर श्रेणी का शासन समाज में होना आवश्यक समझता है ।"[126]

5.9 गाँव और शहर :

नगर गाँव से बड़ा होता है, लेकिन गुण और दोषों से रहित नहीं है । गाँव में रहने वालों का धन दृढ़ सन्तोष है तो नगरों में रहनेवालों में तनाव है । मिश्र जी कहते हैं....

राजतल्प क्या, तृणशय्या क्या, मुख्यवस्तु है नींद भली
मन सन्तोषी है तो निश्चय स्वर्ग तुल्य है गाँव गली ।।[127]

गांवों में वृत्ति में सहयोग होता है इसलिए गांव नंदनवन सा होता है। गांवों आत्मीयता है अतः स्वर्ग-सा अनुभव होता है, लेकिन गांवों में विकास नहीं। नगर बड़े होते हैं किन्तु नगर के साथ-साथ गांवों का मेल नहीं है। जनताके मत के अनुसार समाज में परिवर्तन लाना चाहिए....

उत्तम वही व्यवस्था है जो हर ले अपने सब के खेद
राज-व्यवस्था, प्रजा-व्यवस्था, इसी व्यवस्था के तो भेद ।।[125]

गांधी जी ने गांवों के उद्धार के लिए कहा था। इस का प्रभाव बलदेव प्रसाद मिश्रजी पर स्पष्ट रूप में दिखाई दे रहा है....

यह शासक का नहीं, किन्तु वह है स्वेच्छा-सेवक का काम
जन-जन में रम कर जो विकसित कर दे उनके मन का राम।
जो सेवक है जगा न पाया अपने स्नेह-दीप भरपूर
वह औरों को कलुष-कालिमा कर सकता है कैसे दूर।[129]

गांव में कई वर्गों और जातियों के लोग रहते हैं। उनकी सामाजिक मर्यादाएं श्रेणियां एवं स्तर भी भिन्न-भिन्न है। गांवों की आर्थिक स्थिति बहुत बिगड़ गई है। इने-गिने महाजनों को छोड़कर शेष सब लोग पैसे-पैसे को मोहताज है। ग्रामीणों का खान-पान, पहनावा, संस्कार, बातचीत, व्यवहार सब आज भी सजीव है। लेकिन शहरों में अनेक प्रकार के राजनीतिक, सामाजिक आन्दोलन और तरह-तरह की विचारधाराएं प्रचलित हैं। आजकल गांव के और कई आदमी मजूरी की टोह में शहर जा रहे हैं। शहरी जीवन में स्वार्थ अधिक मात्रा में घुसता जा रहा है। इस प्रकार शहरी-जीवन की भी अनेक झांकियां प्रस्तुत करके सामयिक समाज और वातावरण का सच्चा चित्रण किया जा रहा है

सन्दर्भ सूची

1• मैथिलीशरण गुप्त : व्यक्ति और काव्य, डा0 कमलाकान्त पाठक, पृ•89

2• मनुस्मृति . 10-24, 12-83, पृ• 648

3• साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, दशम सर्ग, पृ. 379

4• वही, पंचम सर्ग, पृ• 137

5• साकेत सन्त, बलदेवप्रसाद मिश्र, अष्ठम सर्ग, पृ•9

6• रामचरित चिन्तामणो, रामचरित उपाध्याय, पृ• 165,166

7• सीतासमाधि, राजेश्वरी अग्रवाल, पृ• 160

8• जानकी जीवन, राजाराम शुक्ल, पृ• 360

9• शंबूक, जगदीश प्रसाद गुप्त, पृ• 50

10• वही, पृ• 64

11• सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल, पृ• 160

12• साकेत सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ• 171

13• रामराज्य, बलदेवप्रसादमिश्र, पृ• 122, एकादश सर्ग

14• वही, पृ• 122

15• वैदेही वनवास, हरिऔध, तृतीय सर्ग, पृ• 32

16• जानकी जीवन, राजाराम शुक्ल, सोलहवां सर्ग, पृ• 300

17• शंबूक, जगदीश प्रसाद गुप्त, पृ• 64

18• गांधी जी का दिल्लीडायरी तथा दिल्ली का स्वतन्त्रता संग्राम भाग-1, ब्रज कृष्ण चांदीवाला, पृ• 50

19• शम्बूक, जगदीश गुप्त, पृ• 66

20• वही, पृ• 83

21• सीता-समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल, पृ• 160

22• वही, पृ• 274

23. शबरी, नरेश मेहता, पृ० 54

24. वही, पृ० 59

25. वही, पृ० 31

26. सीता समाधी, राजेश्वरी अग्रवाल, पृ० 160

27. रामराज्य, बलदेवप्रसाद मिश्र : पृ० 136, 137

28. गाँधी जी की सामाजिक संरचना का सिद्धान्त, शम्भु रत्न त्रिपाठी, पृ० 53

29. शबरी, नरेश मेहता, पृ० 31

30. वही, पृ० 4

31. साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, पृ० 68

32. वैदेही वनवास, हरिऔध, षष्ठ सर्ग, पृ० 76

33. रामराज्य, बलदेव प्रसाद मिश्र, द्वितीय सर्ग, पृ० 31

34. वैदेही वनवास, हरिऔध, षष्ठ सर्ग, पृ० 67

35. उर्म्मिला, बालकृष्ण शर्मा नवीन, तृतीय सर्ग, पृ० 232, 34

36. साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, पृ० 166, अष्टम सर्ग

37. वैदेही वनवास, हरिऔध, चतुर्दश सर्ग, पृ० 201

38. रामराज्य, बलदेवप्रसाद मिश्र, एकादश सर्ग , पृ० 131

39. साकेत , मैथिलीशरण गुप्त, द्वादश सर्ग, पृ० 325

40. रामचरित चिन्तामणी, रामचरित उपाध्याय, छठा सर्ग , पृ० 77

41. सीता समाधी, राजेश्वरी अग्रवाल, पृ० 83

42. अशोक वन, गोकुलचन्द्र शर्मा, पृ० 54

43. भूमिजा, रघुवीर शरण मिश्र, पृ० 73

44. अग्निलीक, भारत भूषण अग्रवाल , पृ० 43

45. डा० नगेन्द्र, साकेत : एक विवेचन [साकेत – सुधा, श्रीरामस्वरूप दुबे, पृ० 44 से उद्धृत]

46. साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, पृ० 216
47. वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ० 189
48. वही, पृ० 201
49. अग्निलीक, भारत भूषण अग्रवाल, पृ० 53
50. साकेत सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ० 55
51. भूमिजा, रघुवीरशरण मित्र, पृ० 61
52. - वही -
53. ऊर्म्मिला, बालकृष्ण शर्मा "नवीन", पृ० 63
54. जानकी जीवन, राजाराम शुक्ल, पृ० 246
55. सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल, पृ० 74
56. वही, पृ० 74
57. वही, पृ० 177
58. अग्निलीक, भारत भूषण अग्रवाल, पृ० 43,44
59. प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ० 81
60 रामचरित चिन्तामणि, रामचरित उपाध्याय, पृ० 49, 214
61. भूमिजा, रघुवीर शरण मित्र, पृ० 61
62. वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ० 176
63. जानकी जीवन, राजाराम शुक्ल, पृ० 284, 285
64. रामचरित चिन्तामणि, रामचरित उपाध्याय, छठवाँ सर्ग, पृ० 46
65. साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, तृतीय सर्ग, पृ० 35
66. वही, पृ० 42
67. वैदेही वनवास, हरिऔध, पंचम सर्ग, पृ० 263
68. साकेत सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, एकादश सर्ग, पृ० 133
69.साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, पृ० 55
70. कैकेयी, मणिरायपुरी, पृ० 72
71. साकेत सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, एकादश सर्ग, पृ० 129
72. ऊर्म्मिला, बालकृष्ण शर्मा "नवीन" द्वितीय सर्ग, पृ० 95

73· साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, प्रथम सर्ग, पृ· 11
74· वही, पृ· 66
75· वही, पृ· 127
76· साकेत सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ· 26
77· भूमिजा, रघुवीरशरण मिश्र, पृ· 73
78· उर्म्मिला, बालकृष्ण शर्मा नवीन, पृ· 236
79· राम की शक्ति पूजा, निराला, पृ· 84 (राग विराग)

80· मैथिलीशरण गुप्त का काव्य : सांस्कृतिक अध्ययन, पृ· 52
81· प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ· 81
82· वैदेही वनवास, हरिऔध, चतुर्दश सर्ग, पृ· 185
83· वैदेही, मणिरामपुरी, पृ· 37
84· रामराज्य, बलदेवप्रसाद मिश्र, पृ· 99
85· भूमिजा, रघुवीर शरण मिश्र, पृ· 72
86· उर्मिला, बालकृष्ण शर्मा "नवीन", तृतीय , पृ· 236
87· वही, तृतीय पृ· 313
88· सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल , पृ· 127
89· रावण महाकाव्य, हरदयाल सिंह, पृ·
90· अग्निलीक, भारत भूषण अग्रवाल, पृ· 41
91· वही , पृ· 42
92· वही, पृ· 42
93· शबरी, नरेश मेहता, पृ· 19
94· वही, पृ· 36
95· मानवता और साहित्य, नवल किशोर, पृ· 23

96· साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, पृ· 156

97· वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ· 185

98· रामराज्य, बलदेवप्रसाद मिश्र, पृ· 147

99· राम की शक्ति पूजा, निराला, पृ· 95

100· संशय की एक रात, नरेश मेहता, पृ· 98

101· प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ· 98

102·राम राज्य, बलदेव प्रसाद मिश्र, प्रस्थान

103· वही, पृ· 17

104· नैतिक जीवन का सिद्धान्त, जानड्यूई, अनुवादक – कृष्णचंद्र , पृ·167

105· भारतीय संविधान और राजनीति वेददान सुधीर, पृ· 123

106· प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ· 28

107· वही, पृ· 43

108· वही , पृ· 48

109· संशय की एक रात, नरेश मेहता , पृ· 52

110· शम्बूक, जगदीश प्रसाद गुप्त, पृ· 51

111· साकेत सन्त बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ· 106

112· संशय की एक रात, नरेश मेहता, पृ·20

113· वही, पृ· 93

114· प्रवादपर्व, नरेशमेहता, पृ· 98

115· साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, पंचम सर्ग, पृ· 74

116· वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ· 210

117· कैकेयी, मणिरामपुरी, पृ· 67

118· सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल, पृ· 274

119· रामराज्य, बलदेवप्रसाद मिश्र, पृ· 84

120· वही· पृ· 52

121. वही, पृ. 85
122. प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ. 114
123. ऊर्म्मिला, बालकृष्ण शर्मा "नवीन", पृ. 586
124. साकेत सन्त, डा0 बलदेवप्रसाद मिश्र, पृ. 38
125. मार्क्सवाद, यशपाल, पृ. 65
126. वही, पृ. 56
127. रामराज्य, बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ. 24
128. वही, पृ. 24
129. वही, पृ. 25

पंचम अध्याय

आधुनिक राम काव्य की राजनैतिक दिशाएं एवं दृष्टियाँ

1• शासक

1•1 प्रजा का महत्व

1•2 राज्य जनता की संपत्ति

1•3 जनता का समर्थन

1•4 शासन दण्ड

2• सत्ता और शासन

2•1 शक्तिशाली राजा

2•2 उत्तराधिकार

2•3 प्रजा का सहयोग

2•4 शासन में कठिनता

2•5 महत्वाकांक्षा एवं राज्यविस्तारवादी नीति

2•6 राजतंत्र में प्रजातंत्र का समर्थन

2•7 शासन तंत्र

3• स्वतंत्रता

3•1 परतंत्रता से मुक्ति

3•2 तंत्र में स्वेच्छा का भाव

3•3 स्वाधीनता की रक्षा

4• युद्ध एवं हिंसा

4•1 आत्म त्याग की भावना

4•2 आत्मजयी

4•3 शोषण के प्रति युद्ध

5• रामराज्य की भावना

5•1 सुरक्षा की भावना

5•2 राजा का दायित्व

5•3 अहिंसा का मार्ग

5•4 विश्व शांति

5•5 समय के अनुसार परिवर्तन

5•6 पंचायती राज्य

5•7 सर्वोदय

पंचम अध्याय

आधुनिक राम काव्य की राजनैतिक दिशाएं एवं दृष्टियाँ

आधुनिक युग प्रजातंत्र का युग है । अतः आधुनिक राम - काव्य में राजतंत्र के साथ प्रजातंत्र का समन्वय किया गया है । नैतिक आदर्शों का प्रसार कर्मचारियों और सामान्य जनता में है । जनता की छिपी हुई शक्तियों के विकास से राज्य की भी शक्ति उन्नत होती है । अच्छे शासन की कसौटी शासन - विधा नहीं, लेकिन जनता पर पड़नेवाला उसका प्रभाव है । पहले यह बताना आवश्यक माना जाता है कि प्रजातंत्र क्या है ? प्रजातन्त्र माने प्रजा का पालन होता है अर्थात् प्रजा अपने में एक को चुनाव के द्वारा नेता को चुनती है, वह नेता प्रजा की शासन की देखभाल करता है ।

1. शासक :

प्रजातन्त्र में राज्य किसी की व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं है । राज्य उन्हीं की सुख शान्ति के लिए है जो इसके लिए अपना बलिदान करते हैं । उनके द्वारा नियुक्त किया गया शासक तो वास्तव में लोक-सेवक मात्र है --

तात, राज्य नहीं किसी का वित्त,
वह उन्हीं के सौख्य - शान्ति - निमित्त
स्वबलि देते हैं उसे जो पात्र,
नियत शासक लोक-सेवक मात्र ।[1]

राम ने सीता के उत्तर में कहा कि राज्य भोग करने के लिए नहीं है । राज्य प्रजा की दी हुई थाती है उसको न्यास की भाँति अखण्ड रूप से

रखा होनी चाहिए । राज्य तो एक उत्तरदायित्व है । वह तो प्रजा की धरोहर है जो सदा अक्षुण्ण बनी रहे ।[2]

1.1 प्रजा का महत्व :

जगदीश गुप्त राज व्यवस्था का समर्थन करते हुए कहते है "कि जो व्यवस्था लोक से स्वीकृत है वह समाज को हितकर है अर्थात् प्रजा के विचार को महत्व देना चाहिए । वह व्यवस्था सारी प्रजा को मान्य होती है । अतः शम्बूक राम के लोकनायकत्व का खण्डन करता हुआ कहता है --

लोक नायक वही
जो विश्वास अर्जित कर सके
प्रत्येक का
और जो सारी प्रजा के
चित्त का प्रतिरूप हो ।[3]

प्रजातन्त्र का विकास ग्रामों के द्वारा ही होता है । ग्रामों के विकास के बिना देश का विकास नहीं होता । ग्रामोद्धार करना वस्तुतः गांधीवाद है । इसके द्वारा जनता और देश का कल्याण होता है । प्रजातन्त्र में प्रजा के साथ-साथ गांव का भी महत्व होता है नेता या राजा ऐसा होना चाहिए कि वह जनता की भलाई देखे और ग्रामवृद्धि करे --

ग्राम्यों के स्वेच्छा - स्वीकृत हो, ग्राम - वृद्ध ये रहे, प्रबन्धक
ग्रामवृद्ध - अभिमत नेतागण जनपद के थे प्रमुख विकास ।
जनमत - संग्रह हेतु न करता, कोई कहीं आत्म-विज्ञापन
एकतन्त्र भी शुचि जनतान्त्रिक रामराज्य का रहा प्रशासन ।।[4]

जो व्यक्ति जनता के द्वारा नियुक्त होता है वह सदा पूजनीय है। वह लोक रक्षा और जनता की रक्षा करता है। जनता के राज्य के बारे में हरिऔधजी कहते हैं कि नेता प्रजा का सर्वस्व है, क्योंकि प्रजा ने ही राजा को चुना है। अतः वे राजा को लोकाराधना का अवतार मानते हैं। जब राज्य में विपत्ति फैल जाती है तब नेता जनता की रक्षा करके लोक मर्यादा को प्राप्त करता है। प्रजा के मत के अनुसार राज्य करने से देश की प्रगति होगी --

बन गई देश काल अनुकूल।
प्रगति जितनी भी हित विपरीत।।
प्रजारंजन की जो है नीति।
वही है आदर सहित गृहीत।[5]

1•2 राज्य जनता की संपत्ति :

राज्य जनता की संपत्ति है। जनता के बिना राज्य नहीं है। प्रजातंत्र में नेता का चुनाव जनता ही करती है। इसी भाव को नवीन जी ने "उर्मिला" में स्पष्ट किया है। दशरथ राज्य के बारे में कहते हैं कि राज्य मेरा नहीं है, यह जनता का है इसको (नेता) बदलने का अधिकार जनता को ही होता है ---

राजनहीं के वैधो का यह
दशरथ का न स्वराज यहाँ
जन-गण-मन-रंजन कर्त्ता ही
होता है अधिराज यहाँ।[6]

जनता अधिकार किसी को भी दे सकती है उसे स्वीकार करना राजा का परम धर्म है । मणिरायपुरी की "कैकेयी" काव्य में सचिव राम से कहते हैं कि जनता फिर आपको नेता के रूप में देखना चाहती है । क्या आप उनकी राय को महत्व नहीं दे रहे हैं ?......

प्रतिनिधित्व का भार तुम्हें जो
यह जनता का दिया गया
क्या उसका अपमान नहीं है
राघव । तुमसे किया गया ?[7]

बड़ों का वाक्य सदा विधि या कर्तव्य निष्ठा लिए हुए होता है, और प्रजा की प्रेरणा ही प्रभु की प्रेरणा रही होती है । इसी भाव को राजाराम शुक्ल ने "जानकी जीवन" में व्यक्त किया है --

"किया मैंने वही करणीय था जो
प्रभो । कर्तव्य ही भवितव्य होता ॥"[8]

1.3 जनता का समर्थन :

प्रजातंत्र में जनता के विरुद्ध कोई निर्णय नहीं लिया जाता है । प्रजा के अनुसार ही शासन करना पड़ेगा । "भूमिजा" में रघुवीर शरण कहते हैं कि जो निंदा सीता पर थोपी गयी है वह गलत है । यह जानकर राम जनता की बात का समर्थन करके प्रजातंत्र की भावना को उभारते हैं । जनता के हित के लिए राम ने सीता को त्यागा है --

उसे त्याग सकता था ।
जनता की सीता जनता से
नहीं माँग सकता था ।
राज्य प्रजा का वह जब चाहे -
सिंहासन को ले ले ।
राजा वह है जो जनता को -
नाव भँवर में खे ले ।।[9]

इसी काव्य में वाल्मीकि राम लक्ष्मण से कहते हैं - हे जनता आओ राजा जा रहा है । अब जग का अनुष्ठान बदला है । इसलिए आगे प्रजातंत्र फूलता-फलता रहेगा । यह सिंहासन प्रजा का है । राजा भी प्रजा का ही है....

सिंहासन जन जन का सत्वर
राजा जनता का धन ।[10]

"संशय की एक रात" में नरेश मेहता लक्ष्मण को प्रजा का प्रतिनिधि मानते हैं और लक्ष्मण राम के संशय को अनुचित मानते हैं । प्रजा की इच्छा है कि सीता को मुक्त कराया जाय । लोक मत का आदर करके कर्तव्य पालन करने के लिए प्रेरित करते हुए लक्ष्मण राम से इस प्रकार कहते हैं ---

"परिजन और पुरजन, प्रिय भाजन हैं ।
साथ ही हम प्रजा के
मनोनीति राजन हैं ।"[11]

राजा जन साधारण की अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता की रक्षा के द्वारा लोकतन्त्र को सुरक्षित रखना चाहते हैं । किसी राजतन्त्र के प्रति साधारणजन अपनी असहमति व्यक्त करते हैं तो वह उनका अधिकार मानते हैं । ऐसी अभिव्यक्ति के ऐतिहासिक महत्व की रक्षा करना राजा का कर्तव्य मानते हैं । उनके अनुसार .....

जब भी
ऐसी तर्जनी उठती है
तब
राजतन्त्र और इतिहास
कोलाहल से भर उठते हैं
क्यों कि
वह मात्र अंगुली ही नहीं होती राम ।
उसका एक प्रति ऐतिहासिक व्यक्तित्व होता है ।[12]

मेहताजी प्रजा के हाथ में अधिकार देने को कहते हैं । प्रवादपर्व के राम भरत से कहते हैं कि राज्य और न्याय को प्रतिष्ठापित होने दो । यदि ऐसा न हुआ तो प्रजा भय की प्रतीक बन जाएगी । जब प्रजा में भय रहता है तो प्रजा राज्य छोड़कर भाग जाती है, तब कौन प्रजा बनकर राज्य में रहना चाहेगा ....

राज्य को सामूहिक आकांक्षा का
प्रतीक बनने दो भरत ।
प्रजा के भी अधिकार होते हैं ।[13]

1.4 शासन दण्ड :

राजा को शासन करने के लिए अधिकार चाहिए । राजा के हाथ में शासन करने का शासन दण्ड न होने पर राज्य चलाना कठिन है । अतः राजा

के हाथ में शासन दण्ड रहना अनिवार्य माना गया है । इस दण्ड को प्रजा ने ही राजा को सौंपा है । इसलिए वह दण्ड अखण्ड बन गया है —

पर भरत के हाथ में अब दण्ड है,
जो नृपाला वह सदैव अखण्ड है ।[14]

भारतीय अंग्रेजों के शासन से मुक्त होकर प्रजातन्त्र को पाने के बाद कितने सन्तुष्ट हुए हैं वही सन्तोष अरिमर्दन के द्वारा विभीषण के हराए जाने के बाद जनता में प्रस्फुटित हुआ है । यहाँ अरिमर्दन का शासन जनतन्त्र के प्रतीक के रूप में है —

जो है स्वतन्त्र - विचार वे ते सब सुनत हर्षित भये ।
जनतन्त्र-थापन - भाव बहु तिन सबन के जागे नये ।
लोग विचारन नव-विजेतहिं पच्छ में मिजता इहै ।
अरु थापना जनतन्त्र - शासन को इते करवाइ है ॥[15]

इस प्रकार के विचार "रावण महाकाव्य" में कई जगह प्राप्त होते हैं । आधुनिक राम काव्यों में लगभग अधिकांश काव्यों में प्रजातन्त्र की भावना मिल जाती है । आधुनिक कवि जो अनुभव कर रहा है वही यथार्थ रूप में दिखाना चाहता है । वस्तुत: कवि जो अनुभव करता है वही प्रस्तुत करने के लिए कोशिश करता है । अत: आधुनिक कवियों ने अपने-अपने विचारों को व्यक्त करते हुए राम को जन नेता या जननायक के रूप में देखा है । ....

2. सत्ता और शासन :

राम का राज्य एक नीति - परायण योद्धा का राज्य है । इस के

शासक में पशुबल न होकर नीति, सदाचार और संयम का बल है । सत्ता और शासन का बहुत ही निकट सम्बन्ध है । सत्ता के अनुसार ही शासकीयता होती है ।

<u>2·1 शक्तिशाली राजा :</u>

राजा, योद्धा या वीर का प्रतीक माना जाता है । उसमें राज्य चलाने की शक्ति निहित है । अगर किसी राजा में इस प्रकार का लक्षण न हो तो राज्य टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा । इसी विचार को गुप्त जी साकेत में कहते हैं कि जहाँ एक शक्तिशाली राजा न होकर अगणित छोटे-छोटे राजा होते हैं, वहाँ राष्ट्र की शक्ति छिन्न-भिन्न हो जाती है ······

एक राज्य न हो, बहुत से हो जहाँ,
राष्ट्र का बल बिखर जाता है वहाँ ।
बहुत तारे थे, अँधेरा कब मिटा,
सूर्य का आना सुना जब, तब मिटा ।[16]

राजाज्ञा को कोई भी इन्कार नहीं कर सकते । अर्थात् सत्ता के प्रति सिर झुकाना ही पड़ेगा । राजाज्ञा को स्वीकार करना होगा । सत्ता में स्त्री-पुरुष का अन्तर नहीं है । यहाँ पर कैकेयी अपने रानी होने का अधिकार जताती है । यह अधिकार भी औचित्य रूप में लेती है अनुचित रूप में नहीं । कैकेयी राम को वन इसलिए भेजती है कि राक्षसों का विनाश हो । मणिरायपुरी को कैकेयी अपनी भूल को सुधारने के लिए . अंतः करण में सोचकर सचिव से कहती है····

किन्तु याद रखना इसको भी
मैं हूं कोशल की रानी
मेरो आज्ञा राजाज्ञा है
वह जायेगी ही मानी ।।

भारत आजादी पाने के बाद स्वावलम्बी न बन सका । कारण ये है कि नेता सत्ता में आने के बाद अपना सुख देख रहे हैं । इसके कारण देश में प्रगति नहीं हो रही है । धर्म भी मिट रहा है । इसका और एक कारण है कि अधिकार समर्थ व्यक्ति न देकर मुढ़ व्यक्ति को दे रहे हैं । फलतः सत्ताधारी न्याय नहीं कर पा रहे हैं । इसी भावना को कवइत्री सीता समाधि में प्रकट करती है ---

"शक्ति मुढ़ जन को अति देकर, न्याय न कर पाते सत्ताधार ।।"[18]

2·2 उत्तराधिकार :

सत्ता की प्राप्ति के दो प्रकार के नियम हैं । राजतंत्र में ज्येष्ठ पुत्र उत्तराधिकारी होता है तो जनतंत्र में प्रजा राजा का चुनाव करती है । दोनों ही तंत्रों में नियम का पालन आवश्यक है । मैथिलीशरण गुप्त यहाँ राजतंत्र के ज्येष्ठ -पुत्र के उत्तराधिकार का उल्लेख करते हैं । राजतंत्र में भी उत्तराधिकार नियम के विपरीत पिता का पुत्र कुछ कर नहीं सकता ...

भला वे कौन है जो राज्य लेवें,
पिता भी कौन है जो राज्य देवें,
प्रजा के अर्थ है साम्राज्य सारा
मुकट है ज्येष्ठ ही पाता हमारा ।।[19]

राम के शासन में सुस्थिरता है । अनेक प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न होने पर भी राजा बहुत ही एकाग्रता से शासन को चलाते हैं। प्रकृति संबंधित विभिन्नता के कारण नयी नयी समस्याएँ पैदा होती है । फलस्वरूप सदा जनता में अनेकता की भावना पैदा होती है । राम के शासन में सुस्थिरता है । विभिन्न प्रकार की समस्यायें उभरने पर भी राम बहुत ही एकाग्रता से शासन को चलाते हैं......

उनका सुन्दर बल निकालकर जो सब विविध सम्होष देसके
रामराज्य में वही प्रबन्धक शासकीय सुस्थान ले सके ॥[20]

<u>2.3 प्रजा का सहयोग :</u>

बलदेव प्रसाद मिश्र ने "साकेत सन्त" में सहयोग के रूप में माण्डवी के द्वारा व्यक्त किया है । माण्डवी भरत से कहती है कि कौन कहता है तुम एक हो, तुम एक होने पर भी अनेक हो तुम्हारी छवि का विस्तार में विश्व के साकार रूप में देखूँगी । मैं तुम्हारे हृदय में आरती बन कर रहूँगी । इसके द्वारा विश्व की सारी कांति को समेट कर कांति रूपी अधिकार को भेंट के रूप में तुम्हें दूँगी.....

और मैं ? तुम्हें हृदय में थाम,
बनूँगी अर्ध्य आरती आप ;
विश्व की सारी कांति समेट
करूँगी एक तुम्हारी भेंट ॥[21]

राज्य को निष्ठा से चलाने पर उसमें कठिनाई अवश्य होती है । लेकिन कुछ राजा लोग ऐसे होते हैं , राज्य पाने के बाद शासन को भूलकर

सिर्फ भोग में रह जाते हैं । इस स्थिति को कवि ने विषधर को कष्टों के प्रतीक और चन्दन को भोग के प्रतीक रूप में कहा है । रघुवीर शरण मिश्र "भूमिजा" में सत्ता को पाकर राज्य भोगनेवालों को जगाने की कोशिश करते हैं । सत्ता को पाने के बाद प्रभुता के मोह में कभी भी कर्तव्य को नहीं भूलना चाहिए --

दुःखों में विषधर भी रहते ,
मत चन्दन पर फूलो ।
राज्य भोगने वालों जागो,
मत प्रभुता में भूलो ।[22]

2.4 शासन में कठिनता :

मणिरायपुरीजी "कैकेयी" में कहते हैं कि राजा को आज्ञा देना कठिन नहीं लगता है लेकिन पालन करना उसकी तुलना में सरल नहीं है । उसे उदाहरण देकर कहते हैं कि कोई भी व्यक्ति जानबूझ कर सुख से विष नहीं पीता है । यहाँ मणिरायपुरी ने शासन को विष का प्रतीक माना है --

आज्ञा देना कठिन नहीं है
पालन करना सरल नहीं
जानबूझ करके कोई भी
पीता सुख से गरल नहीं ।[23]

राजा का पद कर्तव्यों का पथ है । हर कदम पर, हर मोड़ पर बन्धन ही बन्धन है । उसके कारण अशान्ति ज्यादा रहती है । इसलिए

देखने वाले को वह प्रद क्रांति जैसा दिखता है और इसमें भय भी होता है•••

क्रान्ति उसमें है दिखलाती
भरा होता है उसमें भय ।[24]

सत्ता को चलाते समय स्वार्थ को त्यागना चाहिए । स्वार्थ के बिना राज्य चलाने से ही रामराज्य बनेगा । राजा सदा समष्टि के लिए होता है व्यष्टि के लिए नहीं । इसी भाव को वैदेही वनवास में हरिऔधजी ने कहा कि सत्ता के द्वारा कभी-कभी पत्नी को भी छोड़ने की स्थिति उत्पन्न होती है । इस प्रकार के मौके पर स्वार्थ को देखने से राज्य में अशांति फैलेगी ••••

प्रजा-रंजन हित-साधन भाव
राज्य-शासन का है वह अंग ।
है प्रकृति,प्रकृति नीति प्रतिकूल
लोक आराधन व्रत का भंग ।[25]

सत्ता को कोई भी पा सकता है । लेकिन सत्ताधारी के इस प्रकार को सत्ता से अपनाना चाहिए, जो सत्ताधीशों में से समर्थ होकर बने । इसी भाव को राजारामशुक्लजी "जानकी जीवन" में व्यक्त करते हैं••••

सत्ताधीशों से समर्थ सत्ता लिये,
सत्ताधारी जो कि महत्ता से भरा ।
सर्वव्यापी शक्ति इयत्ता है जहाँ,
धर्मात्मा धर्मज्ञ हो न भूले उसे ।[26]

सत्ता में आने पर अपार शक्ति का साधन प्राप्त हो जाता है। इसका तात्पर्य यह नहीं कि अपार शक्ति के जाल को अपने स्वार्थ के लिए प्रयोग किया जाये। नरेश मेहता ऐसे दर्शन का तिरस्कार करते हैं...

सत्ता के गोमुख पर बैठकर
उसके सारे शक्ति-जालों को
अपने ही अभिषेक के लिए
सुरक्षित रखना....
यह कौन सा दर्शन है लक्ष्मण ![27]

2.5 महत्त्वाकांक्षा एवं राज्यविस्तारवादी नीति :

भारत भूषण अग्रवाल ने अग्निलीक में राम की महत्त्वाकांक्षा की भावना को व्यक्त किया है। रघुराम राम की निंदा करते हैं कि राम ने भूल से सीता को जंगल में नहीं भेजा है, जानबूझकर भेजा है। राम ने दुर्मुख की बात मानकर सीता को त्यागा है। राम ने अपने खोये हुए राज्य को पाने के लिए ही सीता को वन भेजा है। राम ने सत्ता को प्राप्त करने के लिए सीता को वन में भेजा है। इस प्रकार के विचार आज महत्त्वाकांक्षी शासकों की ओर संकेत है....

उन्हें तो अपना खोया राज्य पाना था।
जिस के लिए वे चौदह बरसों तक जंगलों में भटके थे।
वह अब आँखों के आगे था!
भूल का नहीं, दयानिधान,
उन्होंने राज्य का मोल चुकाया है![28]

नारी पति के साथ शास्त्रों से बंधी है पति उसके साथ शास्त्रों से बंधा नहीं है । पति कितना भी चरित्रहीन क्यों न हो उसे अपनी पवित्रता का प्रमाण पत्नी को नहीं देना है । पति यदि चरित्रहीन नहीं है तो उसके अन्य शौगल भी हो सकते हैं । जिसके सामने पत्नी का कोई भी महत्व नहीं होता । सीता कहती है कि ---

इनके मन में कोई और ही रमी है ।
महत्वाकांक्षा ।[29]

प्राचीन रामकाव्यों को देखने से विदित होता है कि राम एक आदर्श राजा है और उनका राज्य रामराज्य है । इसी धारणा को लेकर कवियों ने अपने काव्यों में राम को आदर्श राजा के रूप में ही दिखाया है । लेकिन बदलते हुए काल के अनुसार आज के कवियों ने राम के शासन की निंदा आधुनिक मंत्रियों के प्रतीक के रूप में ढालने के लिए की है । महत्वाकांक्षा के आलोक में सीता राम के शासन की भी निंदा करती है । सीता गुरुदेव से कहती है कि आप किसी प्रजाजन से पूछ लीजिए वास्तविकता मालूम हो जायेगी । प्रजा का इन्होंने कितना हित किया है । क्या ? इनके गद्दी पर बैठने से पहले इस प्रकार के अकाल हुए हैं ? आधुनिक मंत्रियों के प्रतीक राम चक्रवर्ती होने में लगे हैं......

ऐसी महामारी आई थी ?
ऐसी त्राहि-त्राहि मची थी ?
पर ये राजराजेश्वर हैं,
चक्रवर्ती होने में लगे हैं ।[30]

प्राय: राजा या नेता सिर्फ अधिकार को पाने के लिए भी युद्ध करते हैं। वे कहते हैं कि अधिकार को प्राप्त करने के लिए युद्ध के बिना और अन्य मार्ग नहीं है। युद्ध ही अन्तिम मार्ग है सत्ता को हासिल करने के लिए .....

स्वत्व और अधिकार अर्जन का
किसी - किसी युग में
युद्ध ही
अन्तिम सत्य, दर्शन हुआ करता मित्र।
शेष -
शोभा - वंचना।[31]

2.6 राजतंत्र में प्रजातंत्र का समर्थन :

प्राय: ऐसी धारणा है कि राजतंत्र में तानाशाही होती है किन्तु रामराज्य वास्तव में प्रजातंत्र का प्रतीक है। सत्ता पर अधिकार जितना शासन का होता है उतना ही प्रजा भी होता है। यदि राजशक्ति पर प्रजा प्रश्न चिन्ह लगती है तो यह उसका विरोधी संकल्प नहीं होता बल्कि प्रजा का अधिकार होता है। प्रजाजन अनाम साधारण जन नहीं है। प्रवादपर्व में अनाम तर्जनी राम से पूछते हैं....

"राजशक्ति पर प्रश्न चिह्न लगाना
विरोधी संकल्प कैसे है ?
क्या गरिमा
क्या चरित्र
क्या अधिकार

केवल राज्य
राजपुरुषों या
इतिहास पुरुषों के ही होते हैं ?
इनाम साधारणजन के कुछ नहीं होते राम ।[32]

विभीषण को किसीप्राचीन राम काव्य में दोषी नहीं ठहराया गया है । आधुनिक राम काव्यों में भी नहीं किन्तु मात्र हरदयाल सिंह ही ने विभीषण को दोषी रूप में देखा है । हरदयालजी ने "रावण महाकाव्य" में विभीषण को जयचंद सदृश राष्ट्र द्रोही के रूप में चित्रित किया है । इस काव्य में और नवीन लक्षण है कि विभीषण का लंकाधिपति बन कर मंदोदरी को रानी बनाने का प्रयास रावण - पुत्र अरिमर्दन का विभीषण से युद्ध और लंका पर अरिमर्दन का अधिकार का वर्णन किया गया है । कवि ने विभीषण के चरित्र को विविध परिस्थितियों में विकसित किया है । उसका चरित्र परंपरानुमोदित नहीं है । विभीषण देश द्रोही, भ्रातृ - द्रोही के रूपमें कलुषित और कलंकित है । अधिकार को पाने के लिए विभीषण को शत्रु - पक्ष की ओर से युद्ध करते देखकर मेघनाद भी उसकी बड़ी भर्त्सना करता है...

हाय तात ! यह काम तुम्हारा
किया सकल राक्षस कुल छारा
राज्य - लोभ तुम्हारे हिय आयो
कुल गौरव तुम सकल गवायो ।[33]

2.7 शासन तंत्र :

बालकृष्ण शर्मा नवीन ने "ऊर्मिला" में कैकेयी की राजनीति एवं शासन

तंत्र को बताया है । उर्मिला कैकेयी के सम्बन्ध में कहती है कि कैकेयी ने बहुत कुटिल नीति से सोच समझकर राम को वनवास भेजने की चाल चली है.....

कैकेयी ने सोच समझकर
रचा खेल यह सारा जन
सिवा खेलने के है बाकी
रहा कौन सा चारा अब[34]

यही विचार "भूमिजा" में रघुवीर शरण मिश्र भी व्यक्त करते हैं...

मुंह में राम, बगल में छुरियां,
श्वास श्वास में छल है ।
मानव का मन है या कोई -
मीठा मिला गरल है ।[35]

इनको (राम को) ऐसी छोटी-छोटी बातों के लिए सोचने में समय कहाँ है । उन्होंने प्रजा की व्यवस्था ऋषियों पर अर्थ नीति पण्डितों पर, भोग में मुख्य वानरों पर छोड़ रखी है....

जो हर समस्या का एक ही समाधान जानते हैं ।
यज्ञ, अनुष्ठान, दान और ज्योतिष ।[36]

कवि ने यहाँ आजकल के नेताओं को दृष्टि में रखकर सीता के द्वारा अपने विचार को व्यक्त किया है । राम काव्य में यह एक अनोखा विकास है ।

सीता का क्रोध पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है उसे राम के सम्पूर्ण वंश परंपरा में प्रेम नहीं दिखाई पड़ता । सीता कुल की निन्दा करने में भी नहीं चूकी है । सीता को रघुवंश में प्रेम का सौदा राज्य से होता दिखाई देता है --

हाय । वह पुरुष नारी के प्यार को क्या समझेगा ।
जिसके पिता ने तीन तीन ब्याह रचाये हों
और जिसने अपनी आँखों के आगे
प्यार का सौदा होते देखा हो ।[37]

राम के कुल में शासन करने का विचार आज के राम काव्यों में द्रष्टव्य है ।

<u>3. स्वतन्त्रता :</u>

भारत सदियों तक विदेशियों द्वारा गुलामी के बंधनों में रहा । गुलामी की जंजीरों में जकड़ी आहत मानवता का करुण चीत्कार जनता के मन को विदीर्ण कर रहा था । भारतीय देश को स्वतन्त्र करने और विदेशियों को भारत छोड़कर शीघ्र चले जाने के लिए अहिंसा का मार्ग अपना कर चले थे । हमारे राष्ट्र के कर्णधार महात्मा गांधी, नेहरू और अन्य सेनानियों के कारण देश को आजादी मिली । वास्तव में स्वतन्त्रता का अर्थ ये है कि स्व का तंत्र है । अर्थात् स्वयं पालन करना है । यहाँ प्रजा स्वयं अपने आप को स्वेच्छा से शासन करती है । इसमें जनता को किसी के काबू में रहने की आवश्यकता नहीं है । इस प्रकार के तंत्र में रहने वाले देश को स्वतन्त्र देश कहा जाता है । परतंत्र का अर्थ परों का तंत्र है । अर्थात् अन्य लोग जहाँ पर शासन करते हैं । अर्थात्

स्वतन्त्रता से उल्टा अर्थ इस प्रकार के शासन में जनता को किसी प्रकार को स्वेच्छा नहीं रहती है। राजा को सर्वाधिकारी है। राजा को आज्ञा का इन्कार करने वाला कोई नहीं रहता है। स्वतन्त्रता के पूर्व भारत में परतंत्रता की स्थिति ही थी।

3·। परतंत्रता से मुक्ति :

"वैदेही वनवास" में हरिऔधजी स्वतन्त्रता पर जोर देते हुये कहते हैं कि व्यक्ति के लिए परतंत्रता नरक के समान है, नरक को भोगते समय उन्हें स्वर्ग रूपी स्वतन्त्रता मिल गई तो परतंत्रता से मुक्ति पाना चाहते हैं। परतंत्रता में दुराचार ही सदाचार है इसलिए जनता परतंत्रता को तजकर स्वतन्त्रता पाना चाहती है....

दुराचार ही सदाचार था बन गया ।
स्वतन्त्राताथी मिली तजे परतंत्रता ॥[38]

राजाराम शुक्ल जो ने "राम की जोवन" में स्वतन्त्रता के महत्व को बताया है। राम अश्वमेध यज्ञ करके अश्व छोड़ देते हैं, उस अश्व को लव-कुश पकड़ लेते हैं। राम की सेना उन बालकों से डरते हुये कहती है कि सचेत होकर आगे कदम बढ़ाओ बहुत ही निडर और स्वेच्छा से बालक हमारे प्रति प्रलय के रूप में खड़े हैं। आजादी पाने के भरोसे से खड़े हैं। इस में राम की सेना को अंग्रेजी सेना के प्रतीक के रूप में चित्रित किया गया है और लव-कुश के स्वतंत्रता सेनानी के रूप में....

"जागे अजेय जान जो अचेत से चले,
देखा नवीन दृश्य तो सचेत से चले ।
निर्द्वन्द्व एक काल-काल- व्याल-सा खड़ा,
स्वच्छन्द छन्द या स्वतन्त्र मन्त्र ... सा कड़ा ।"[39]

"बालकृष्ण शर्मा नवीनजी ने उर्मिला में पूर्ण-स्वातन्त्र्य पाने की इच्छा को प्रकट किया है ।"[40] उर्मिला शारीरिक बन्धनों से रिहा पाकर पूर्ण स्वातन्त्र्य की माँग करती है ।

3.2 तंत्र में स्वेच्छा का भाव :

कोई भी तंत्र हो उसमें स्वेच्छा का भाव वर्जित होता है । हाथ में अधिकार है तो कुछ भी कर सकते हैं । रावण के राज्य में जो परतंत्रता का प्रतीक उसकी बहन शूर्पणखा का स्वेच्छाचारी रूप सीता समाधि काव्य में वर्णित है --

हूँ स्वतंत्र अति स्वेच्छाचारी, निर्भय मैं विचरूँ भूतल में ।
हिंसक गर्वीले पशुओं को, दर्प ध्वस्त करती हूँ पल में ।
हो कितने भी संकट भारी, रोक न सकते राह हमारी ॥[41]

"सीता-समाधि" में परतंत्र भारत का विचार स्पष्ट दिखाई देता है । "कवयत्री ने भूमिका में अंग्रेजों का भारत को अपने अधीन कर लेना सीता-हरण माना है ।"[42] सीता को छुड़ाना भारत को आजादी प्राप्त होना ही है । राजेश्वरी अग्रवाल ने परतंत्रता में कठोर शासन चलाने की भावना को व्यक्त

किया है । जलियाँवाला बाग में कितने लोग गोली खाकर मर गये थे । जनता में जागृति लाने के लिए भगतसिंह भी अमर बने हैं । तिलक और गोखले जटायु के प्रतीक हैं.....

धूम रही थी विकल मनों में, कहीं चेतना राम लखन की ।
मिले जटायु तिलक गोखले, मति पगी में थी चिंचित-सी
पराधीनता कथा सुनाई, स्वतन्त्रता की राह दिखाई ॥[43]

3.3 स्वाधीनता की रक्षा :

श्री नरेश मेहता के अनुसार अपने वर्चस्व और स्वाधीनता की रक्षा करना मानव जीवन का कर्तव्य है । जब तक प्राण रहेगा तब तक स्वतंत्रता की रक्षा करना हमारा धर्म है....

बन्धु ! यह असम्भव है
कर्म और वर्चस को
छीन सके कोई भी
जब तक हम जीवित है ।[44]

स्वाधीनता मिलने पर भी उसकी रक्षा करना कठिन है । देश में हिंसा, भ्रष्टाचार, धोखेबाजी जैसे कारण ही स्वाधीनता के लिए खतरा बन गए हैं । जब स्वतन्त्र शासन में स्वतंत्रता, अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता समाप्त कर दी जाती है, जीवन मूल्यों तथा आदर्शों का हनन हो जाता है तब चक्रवर्ती राजा हो क्यों न हो प्रजा उसके विरुद्ध युद्ध का आह्वान करती है । "प्रवादपर्व" में राम स्वाधीनता की चेतना की जागरण शक्ति को महत्व देते हुए लक्ष्मण से कह

प्रकार कहते हैं कि अपनी प्रिय जन्म भूमि को विदेशी पंजे से स्वतन्त्र कराने के लिए देश भक्तों ने अल्पकालीन कष्ट झेले, जीवन का उत्सर्ग किया और अन्ततः वे अपने उद्देश्य में सफल हुए । प्रजा ने हमारी पारिवारिक विफलता के लिए ऐतिहासिक सहयोग नहीं दिया और हमने अपनी वैयक्तिकता के कारण युद्ध नहीं किया । सिर्फ प्रजा और उसकी स्वेच्छा के लिए.....

अनाम लोगों और
भयातुर, प्रताड़ित प्रजा ने
अपने स्वत्व
स्वाधीनता, अभिव्यक्ति और
जीवन मूल्यों तथा आदर्शों के लिए
प्राणार्पण किया था
एक चक्रवर्ती के विरुद्ध
साधारणता ने
युद्ध का आवाहन किया था ।[45]

4. युद्ध एवं हिंसा :

युद्ध का होना एक प्राकृतिक प्रक्रिया है । डा० राम प्रकाश अग्रवाल के अनुसार "वन्य जीवन से नागरिकता और स्वार्थ एवं हिंसा से परमार्थ और अहिंसा की ओर अग्रसर होने का प्रयास मानव-समाज चिरकाल से करता आ रहा है । यदि शान्ति उसका लक्ष्य है तो युद्ध भी उसकी अनिवार्यता है, मानों, कि पुनः पुनः अधिकाधिक शान्ति और श्रेष्ठतर मानव संस्कृति की स्थापना के लिये ही वह विवशता में युद्ध करता है ।"[46] आधुनिक युग में संसार में पूर्वी और पश्चिमी छोरों पर व्यापक परमाणु अप्रसार संधि का अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास

हो रहा है । जहाँ पर एक ओर अनेक राष्ट्र के अहंकार, स्वार्थ, अविश्वास, आशंका और शक्ति संग्रह की तामसी प्रवृत्ति है, वहाँ वह प्रेम एवं सौहार्द से पूर्ण वसुधाकुटुम्ब का स्वप्न सार्थक करने की अन्तर्निहित सात्विक लक्षण का सूचक है -- "सर्वेऽपि-सुखिनासन्तु" और "सर्वे भद्राणि पश्यन्तु" का मंत्र भूमण्डल का सनातन नारा है । भारतीय वाङ्मय के दो महान् ग्रन्थों रामायण और महाभारत में युग-युग के युद्धों की प्रवृत्तियाँ तथा व्यापक व्यवस्था का इतिहास निहित है । युद्धों में कूटनीति, नियमोल्लंघन और संहार का भी आश्रय लेना पड़ता है ।

युग की विचारधारा के अनुरूप आधुनिक राम काव्यों में युद्ध, युद्ध की अनिवार्यता और युद्ध में हिंसात्मक दृश्यों का अंकन प्राचीन राम काव्यों की तुलना से कम प्राप्त होता है । नरेश मेहता ने "संशय की एक रात" में युद्ध और शांति की समस्याओं पर विवेचन किया है । राम के माध्यम से युद्ध एवं शान्ति के प्रश्न को उठाया है । इस काव्य में राम के अनुसार युद्ध ही शांति स्थापना के लिए एक मात्र उपाय नहीं हो सकता, गहरे से अध्ययन करने से अन्य उपाय भी हो सकते हैं । राम का मन युद्ध के परिणामों से चिन्तित है । राम युद्ध की अनिवार्यता को भली - भांति जानते हैं । अपितु राम अपने युग को इसके दूसरे उपाय सोचने के लिए हनुमान से कहते हैं....

"युद्ध की अनिवार्यता को जानता हूँ
अपने से अधिक
इन पृथुजन को मानता भी हूँ
किन्तु.. ..
इस युद्ध के उपरान्त
होगी शान्ति

इसका तो नहीं विश्वास
बन्धु !
यह युद्ध
सम्भव है अनागत युद्ध का कारण बने ।[47]

नरेश मेहता के इसी काव्य में युद्ध के सम्बद्ध अनेक लक्षण मिल जाते हैं । राम के अनुसार वैयक्तिक स्वार्थों के लिए अथवा सत्ता के मोह में पड़कर जनमत के विरुद्ध युद्ध करना अनुचित है । राम अपने परिजन और पुरजनों के दुःखों के लिए स्वयं कोजिम्मेदार मानते हैं । युद्ध के द्वारा युगीन दुःखों के कारण युद्ध को अस्वीकार करने को राम ने अपनी विवशता को व्यक्त किया है ।[48] राम युद्ध को विभीषिका में सारे मानवता का बलिदान नहीं देना चाहते हैं । देश की प्रजा की ओर से युद्ध होने का निर्णय लिया गया है । इस में युद्ध को यहाँ फैन नहीं जन-जन का निर्णय कहा गया है ।[49] वे युद्ध के द्वारा नवीन इतिहास का निर्माण करना चाहते हैं । अतः यहाँ युद्ध का समर्थन करते हैं । न्याय की रक्षा के लिए सम्राट रावण के विरुद्ध युद्ध का समर्थन करते हैं । शोषण के विरुद्ध अपने अधिकारों की रक्षा के लिए युद्ध का समर्थन करते हैं ।[50] बलदेव प्रसाद मिश्र इसका समर्थन देते हुए कहते हैं कि न्याय को बचाने के लिए सहयोग देने पर युद्ध करना गलत नहीं है ....

जो कि न्याय-रक्षा में अड़कर लड़कर देते अपने प्राण
उन्हीं हुतात्मा वीरों की रज है संवारती जग कल्याण ।।

नरेश मेहता पर विज्ञान का प्रभाव स्पष्ट रूप में है । आधुनिक राम काव्यों में ये एक नया दृष्टिकोण है । विभीषण युद्ध के पश्चात हुई हिंसात्मक स्थिति का वर्णन "संशय की एक रात" में किया गया है .....

जले और खण्डित भवन
जिह्वाहीन भिक्षुकों सरीखे
हाथ फैलाये खड़े हैं ।
राज पथ
बेहोश, पैंठी देह से नंगी पड़े हैं ।
टूटे हुए रथचक्र में
अन्धे अश्व हँसने जा रहे हैं

x x x

इस युद्ध में
रौंध डाला जायेगा कल राम ?[52]

"रावण महाकाव्य" में हरदयाल सिंह ने भी युद्ध का वर्णन बहुत सुन्दर किया है । यह युद्ध देवता गण और राक्षस के बीच है । राक्षस गण ने युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर रण-दुन्दुभि बजायी है । युद्ध में हिंसात्मक दृश्यों का वर्णन आधुनिक राम काव्यों में पर्याप्त रूप में मिल जाता है । राजा राम शुक्ल ने "जानकी जीवन" में हिंसात्मक भावना को व्यक्त किया है । राम के अश्वमेध यज्ञ के सन्दर्भ में हिंसात्मक घटनाओं को लक्ष्मण बताते हैं । यही विचार गोकुलचन्द्र शर्मा ने "अशोक वन" में राम की युद्ध कुशलता के वर्णन में किया है ।[55]

इस संसार में अनेक युद्ध हुये हैं । खास कर भारत में युद्धों की संख्या को गिनना संभव नहीं है । पहले से भारत युद्धों की भूमि रही है । क्यों कि भारत में प्राचीन काल में राजाओं का शासन था अर्थात् वीरों का और योद्धाओं का समय था । इसलिए युद्ध बहुत होते हैं । रघुवीरशरण मिश्र ने "भूमिजा" में इस धरती पर कितने युद्ध हुये बताया है ....

धरती से पूछो माँ । तुझ पर
कितने बार हुए हैं ?
तन के मन के युद्ध यहाँ पर
कितनी बार हुए हैं ?[56]

आगे मिश्रजी कहते हैं कि इन युद्धों के कारण इस संसार (धरती) को शान्ति कहाँ है ? हमेशा धरती शत्रुओं के आपसी वैर से धधकती रहती है ।[57] युद्ध के सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार के मत हैं । युद्ध के द्वारा ही शान्ति की स्थापना होती है अतः युद्ध करना चाहिए । लेकिन युद्ध के परिणामों के बारे में कोई नहीं सोचते हैं । युद्ध से अनेक प्रकार के विनाश होते हैं, ये आधुनिक विचार हैं । "भूमिजा" में वाल्मीकि राम को युद्ध के द्वारा होने वाले विनाश को बताते हुये कहते हैं.....

युद्ध सरल है, किन्तु युद्ध का
है परिणाम भयंकर ।
इतने मत हुंकारो जिससे -
जाग उठे प्रलयंकर ॥[58]

हिंसा के द्वारा होने वाले परिणामों को हरिऔधजी ने व्यक्त किया है ....

कितने सद सांसतें बहुत दुख भोगते ।
कितने पिसते पड़ प्रकोप लकड़ों तले ॥
दमन-चक्र यदि चलता तो बहता लहू ।
कुछ न जाने कितने कट जाते गले ॥[59]

मणिरायपुरी शर्मा ने अपने काव्य "कैकेयी" में हिंसा की भावना को व्यक्त किया है । इस में सुमन्त्र कैकेयी के सामने निस्सहाय होकर पूछते हैं.....

बन्दीगृह में ही बैठी से
    उनको सालें सिखलाना
नृप की आज्ञा - उल्लंघन का
    प्रतिफल उनको दिखलाना ।[60]

4.। आत्म त्याग की भावना :

युद्ध का कारण हमारी - इन्द्रियाँ हैं । इनमें स्पर्श रूप रस गन्ध आदि है जिनके कारण हम परिचालित हैं....

उस समय प्राण-दान का खेल
हुआ, हम सभी हुए उत्पन्न ।
तभी से स्पर्श - रूप - रस गन्ध
व्याधि से हैं, हम सब आक्रान्त ।[61]

अणु का प्रयोग करना आधुनिक दृष्टि है । तप के द्वारा भगवान शंकर को प्रसन्न करके अणु ऊर्जा को पाया जाना परम्परागत दृष्टि है । यह शक्ति अद्वितीय है । जगत में प्रलय मचा सकती है । इसके सहयोग से अवश्य विजय प्राप्त होती है लेकिन क्षणों में समस्त जगत धूल में मिल जाता है । इसी विचार को श्रीमतीराजेश्वरी अग्रवाल जी ने सीता समाधि में व्यक्त किया है...

वाम विधाता होता जब है, कौन नहीं दुख को सहता है ।
उलटी पड़ती चालें सीधी, राहु के मुख रवि रहता है ।
प्रलय विनाशी होती पल में, सुख सम्पत्ति सब जाते तल में ।[62]

4.2 आत्मजयी :

अग्निलोक में देवी कौशिकी से कहती है कि हे राम । अश्वमेध यज्ञ करने से क्या फायदा है । इस प्रकार युद्ध लिप्सा से युद्ध करने पर रक्त पर्व होने के अलावा क्या हित होगा । क्या प्रयोजन है ? इस हलचल, कोलाहल और समारोह का । इस के फलस्वरूप धन, जन और बल भी व्यर्थ होगा, संसार अभावों से और पीड़ा से त्रस्त-ग्रस्त होगा । अतः इस युद्ध के द्वारा क्या प्रयोजन है तुम भी नहीं जानते हो ? क्या तुम अब भी नहीं जानते हो कि तुम्हें दिग्विजयी नहीं आत्मजयी बनना है.....

क्या तुम अब भी नहीं जान पाये,
तुम्हें दिग्विजयी नहीं, आत्मजयी बनना है
तुम्हें राजों - महाराजों को नहीं
अपने ही अधीन
क्षुद्र - दृष्टि और लोलुप पण्डितों और -
वानरों को वश में करना है ।[63]

"राम की शक्ति पूजा" में निराला ने राम को परम्परा से भिन्न अंकित किया है । राम युद्ध में पराजय की शंका से व्याकुल होते हैं । उनके बाण हत - लक्ष्य हो रहे हैं । युद्ध के कारण राम का जटा मुकुट मलीन हो गया है, उनकी लटें कंधे, बाहु और वक्षस्थल पर फैल गई है, किन्तु उनकी आँखों में आत्म विश्वास की आभा विद्यमान है जो युद्ध में विजय पाने कीप्रेरणा दे रही है

दृढ़ जटा मुकुट हो विपर्यस्त प्रतिलट से खुल,
फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर विपुल,
उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशान्धकार,
चमकती दूर ताराएं ज्यों हों कहीं पर ।[64]

जगदीश गुप्त ने "शम्बूक" में राम के राज्य की निंदा किया कि हे राम ! तुम उसी फल को सिद्ध को पाने के लिए सेतु का बाँधा गया था । उसके लिए ही वानर और राक्षसों का युद्ध रचे हो । उस समस्त विपत्ति के कारण तुम्हीं हो । क्या ? देवता गण के स्वार्थ के परिणाम को जानते हो । उन देवताओं को उद्बोधन क्यों नहीं दिया ? फिर मुझे उपदेश देने आये हो ? इस प्रकार करने में क्लेश नहीं है ? आगे कहते हैं.....

ताड़का, मारीच, खर, दूषण, सुबाहु, कबन्ध
बालि, त्रिशिरा आदि का वध ही बना सम्बन्ध
क्या तुम्हारे न्याय का आधार है वध मात्र ?
क्या विपक्षी सब के बल तुम्हारे लिए वध के पात्र ?[65]

शम्बूक ने राम और उनके वंश के प्रति निंदा किया है । "शम्बूक" काव्य में इस प्रकार के चर्चा बहुत हुआ है ।

4.3 शोषण के प्रति युद्ध :

"प्रवादपर्व" में नरेश मेहता शोषण के विरुद्ध किया गया युद्ध कहते हैं । राम शोषण के विरुद्ध प्रजा द्वारा स्वीकृत युद्ध को न्याय सम्मत मानते हैं । इसके समर्थन में वे लक्ष्मण से कहते हैं ---

स्वाधीनता, अभिव्यक्ति और
जीवन-मूल्यों तथा आदर्शों के लिए
प्राणार्पण किया था ।
एक चक्रवर्ती के विरुद्ध
साधारणता ने
युद्ध का आवाहन किया था ।[66]

अब तक राजाओं के बीच की लड़ाई या युद्धों को देखा गया है । लेकिन नरेश मेहता ने "शबरी" में जातियों के बीच परस्पर विचारों का युद्ध दिखाया है --

धनुष-बाण हथियार लिए
सब लड़ने की तैयारी
शबर जाति की इस स्त्री
ने काटी नाक हमारी ।[67]

कवि का कहना है कि जब शबरी के पति को खबर मिली तब वह दौड़ा हुआ आया और साथ में अपने समर्थकों को लेता आया है । उस समय उसके मुँह पर उस स्त्री के प्रति क्रोध की भावना स्पष्ट थी जो वर्षों पहले उसे छोड़कर भाग आई थी । शबर और उसके साथी सब लड़ने की तैयारी से आये थे और धनुष-बाण एवं हथियार लिये थे । उनका कथन है कि शबर जाति को इस स्त्री ने हमें अपमानित किया है ।

5. रामराज्य की भावना :

राम का राज्य सब के लिए कल्याणकारी है, इसमें किसी का पक्षपात नहीं । यह सबका अभ्युदय करने वाला है । रामराज्य वोट बटोरने वाला कुटिल जनों का कोई मायावी नाश नहीं है । राम का राज्य एक नीति-परायण योद्धा का राज्य है । राम के शासन में पशुबल न होकर नीति सदाचार और संयम का बल है । इसकी आर्थिक व्यवस्था ऐसी है कि कोई भी दीन दुःखी या दरिद्र नहीं है । राम राज्य की स्वास्थ्य व्यवस्था ऐसी हो कि किसी की अकाल मृत्यु न हो, किसी को किसी प्रकार की पीड़ा न हो और सभी सुन्दर एवं निरोग रहे ।

राम राज्य के सभी नागरिक परस्पर प्रीति के साथ रहते हैं, अर्थात् आज के नागरिकों की तरह जाति, धर्म और भाषा के नाम पर परस्पर संघर्ष नहीं करते हैं और वे अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं। यहाँ की जनता दम्भ रहित, उदार और परोपकारी है। डा० रामनाथ त्रिपाठी ने रामराज्य के सम्बन्ध में इस प्रकार कहा है कि -- "राम राज्य एक ऐसा कल्याणकारी राज्य है, जिसमें सभी वर्गों के अभ्युदय का विधान है, जिसमें सभी को भौतिक सुविधाएँ उपलब्ध है, तथा सभी के नैतिक चरित्र को ऊँचा उठाने की चेष्टा है। यह राज्य वर्णाश्रम व्यवस्था का है। अर्थात् स्व कर्तव्य पालन व्यवस्था पर आधारित ऐसा समाज है, जिसे नैतिकता और सदाचार का बल मिला हुआ है.... जो व्यक्ति राम के लोकमंगलकारी व्यक्तित्व के प्रति समर्पित है।"[68] इस रामराज्य के अन्तर्गत राजा और प्रजा का सम्बन्ध अहिंसा, शांति, राष्ट्रीयता एवं विश्व बन्धुत्व की भावना में देखा गया है।

5.1 सुरक्षा की भावना :

जनता कहीं भी निवास करे वह सदा सुरक्षित रहना चाहती है। राज्य में रहने वाली जनता को किसी प्रकार का भय न हो। यही विचार साकेत में मैथिलीशरण गुप्त व्यक्त करते हैं -- एक ही वृक्ष पर विकसित विभिन्न फूलों की भाँति अयोध्या के नागरिक जन परस्पर हिलमिल कर रहते हैं। जिस प्रकार फूल स्वतन्त्र रूप से विकसित होते हुए भी वृक्ष के अंग होते हैं, उसी प्रकार अयोध्या के नागरिक जन भी स्वतन्त्र रूप से अपने जीवन का विकास करते हैं और वे सामाजिक उत्तर दायित्वों का सम्मिलित रूप से पालन करते हैं। यहाँ के सभी नागरिक स्वस्थ्य शिक्षित, सुसंस्कृत और परिश्रमशील हैं। वे बाह्य रूप से सांसारिक सुखों का भोग करते हुए भी आन्तरिक रूप से योगी के समान भोगों में उदास है। इस प्रकार अयोध्या निवासी तन-मन, धन तीनों प्रकार से

सुरक्षित है ....

व्याधि की बाधा नहीं तन के लिए
आधि की शंका नहीं मन के लिए,
चोरों की चिन्ता नहीं धन के लिए ।[69]

रामराज्य में जनता के बीच परोपकार की भावना है । "साकेत" के राम लक्ष्मण से कहते हैं कि जहाँ सुख प्राप्त करते दूसरों के भी सुख का ध्यान रखे ।[70] हमें इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि सब एक सत्ता के शासन के अधीन हैं ।

5.2 राजा का दायित्व :

राज्य में जनता का सुख और शांति से रहने के लिए राजा का दायित्व क्या है ? इसे जगदीश प्रसाद गुप्त ने "शम्बूक" में स्पष्ट किया है । इस में राम प्रजा के महत्व के सम्बन्ध में शम्बूक से कहते हैं कि प्रजा का परितोष देखना राजा का कर्तव्य है । मैंने तो अपना स्वार्थ नहीं देखा था । प्रजा के लिए सीता को त्याग दिया था । आधुनिक रामकाव्यों का विचार है कि नेता को प्रजा के बारे में सोचना चाहिए न कि अपने बारे में ....

प्रजा का परितोष
राजा का प्रमुख दायित्व
वह सहज कर्तव्य
स्वामी का नहीं स्वामित्व
किया मैंने त्याग

सीता का, प्रजा के अर्थ
नहीं तो क्या था
गृहस्थी – सुख मुझे कुछ व्यर्थ ।[71]

रामराज्य को चलाने के लिए आदर्श राजा आवश्यक है । अग्निलोक में रथवान राम को एक आदर्श राजा के रूप में नहीं मानते हैं । वे कहते हैं कि "मैं राजा राम की प्रजा हूँ" इसलिए मैं बहुत चिन्तित हूँ । अर्थात् वह राम के शासन में संतुष्ट नहीं है । तब राज पुरुष रथवान से आदर्श राजा के लक्षण और राम किस प्रकार के राजा हैं, कहता है....

यह भी कोई कहने की बात है ?
जिनका यश तीनों लोकों में गूंजता है
जो पिता की भाँति पालन करते हैं
और भाई की भाँति स्नेह देते हैं
जो न्याय के रक्षक और धर्म के अवतार हैं
उनकी प्रजा होने में दुःख ।[72]

रथवान को राम राज्य से आपत्ति मात्र इसलिए है कि राम ने सीता जैसी देवी का त्याग किया है प्रजा के लिए । यहाँ पर राजा के रूप में राम का महत्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि राम ने अपनी पत्नी का त्याग अपना दायित्व निभाने के लिए किया है । ये आधुनिक विचार है । इस प्रकार के चित्रण प्राचीन रामकाव्यों में अप्राप्त है । प्राचीन राम काव्यों में राम को आदर्श राजा कहा गया है । यहाँ "अग्निलोक" में राम में राजा के लक्षण है क्या ? इस प्रकार के सवाल उठाना फिर समाधान प्रस्तुत करना एक नवीन अवधारणा है ।

"साकेत सन्त" में बलदेवप्रसाद मिश्रजी प्रजा के लिए राजा प्राणार्पण करने की विचार व्यक्त की गई है । प्रजातंत्र में नेता प्रजा के लिए ही शासन का भार अपने ऊपर लेते हैं । इन सन्दर्भों में राजा को अपनी जनता के लिए कष्टों को सहना पड़ता है । यही विचार "साकेत सन्त" में व्यक्त हुआ है । इसमें भरत ने प्रजा का बहुत हित किया है । प्रजा के लिए खुद विष पीकर प्रजा को सुधा दिया है....

भरत ने जो बहाई प्रेम-धारा
बहा उसमें विकल हो विश्व सारा ।
न केवल भरत आगे जो रहे थे ।
अनेकों जीव साथ बढ़ा रहे थे ॥

x x x

स्वयं विष पी सुधा जग को पिलाई,
भरत ने भी नई गंगा बहाई ॥73

अपना कर्तव्य निभाये बिना ही अधिकारों के लिए लड़ना प्रजा को शोभा नहीं देता । राजा अधिकार के मद में डूबकर राज्य की ओर ध्यान नहीं देता तो ऐसे राज्य पुरुषों से पहले उनका कर्तव्य बोध कराना, समझाना, नहीं मानने पर आग्रह के साथ शुभाशुभ के बारे में बताना प्रजा का कर्तव्य है । प्रजातन्त्र में नेता योग्य न हो तो उसे प्रजा अनेक प्रकार से समझाने की कोशिश करती है । तब भी न समझने पर अगले चुनाव में हराकर सबक सिखाती है । अर्थात् यहाँ राजा या नेता को सही मार्ग पर ले जाने का कर्तव्य प्रजा की है । यही विचार नरेश मेहता ने प्रवादपर्व में व्यक्त किया है । राम अपने मन्त्रीवर को सम्बोधन करते हुए सभा के समक्ष प्रजा के कर्तव्य के बारे में कहते हैं...

प्रजा का ही
यह कर्तव्य भी है कि
अधिकार में डूबे राज्य और
राजपुरुषों से कहें
न हो आग्रह करें कि
क्या शुभ है, और
क्या अशुभ ।[74]

अर्थात् प्रजातन्त्र में राजा को अपना स्वार्थ नहीं देखना चाहिए। किसी के लिए भी राष्ट्र और जनता प्रधान है न कि व्यक्ति । सम्पूर्ण राष्ट्र को दृष्टि में रखकर राजा का व्यवहार होना अनिवार्य है । राज्य या न्याय, राष्ट्र की इच्छा, आशा - आकांक्षा, सम्मान और गरिमा के प्रतीक होते हैं । राजा जो भी निर्णय लेता है वह राष्ट्र की गरिमा के अनुरूप होना चाहिए । भले ही वह राज्याधिपति हो, ऋषि या विशेष व्यक्ति या साधारण व्यक्ति हो परवाह नहीं । राजा व्यक्तिगत राय से नहीं सम्पूर्ण जनता को दृष्टि में रखकर निर्णय लेता है । "प्रवादपर्व" में राम निस्वार्थ भाव से प्रजा की शंका को दूर करने के लिए सभा में सीता के प्रति ऐसा निर्णय लेते हैं कि "सीता कल सूर्योदय होते ही वनवास के लिए प्रस्थान करेंगी ।"[75] इसी काव्य में और एक प्रसंग पर कहते हैं कि "किसी की वैयक्तिकता नहीं वरन् सम्पूर्ण की समग्रता ही राष्ट्र है ।"[76]

आजकल प्रजातन्त्र में नेता अपने स्वार्थ के लिए संविधान को बदल रहे हैं । अपने स्वार्थ के लिए सब कुछ कर रहे हैं । इसी को ध्यान में रखकर कवि ने व्यक्तिक स्वार्थ को छोड़ने के लिए कहा है ।

5•3 अहिंसा का मार्ग :

गांधी जी का प्रभाव सभी भारतीय साहित्यों पर है । गांधी जी के अहिंसा सिद्धान्त ने देश के बहुत लोगों को प्रभावित किया है । रामधारी सिंह दिनकर के मतानुसार — "गांधी जी से पूर्व किसी ने भी समष्टि के धरातल पर अथवा कोटि-कोटि जनव्यापी महा आन्दोलनों के भीतर से अहिंसा का प्रयोग नहीं किया था । गांधी जीने यह प्रयोग किया और उनके प्रयोग से संसार के असंख्य लोगों में यह आस्था उत्पन्न हुई कि अहिंसा की साधना सामूहिक कार्यों में भी चल सकती है ।"[77] यह विचार आधुनिक रामकाव्यों में पर्याप्त रूप में है । "वैदेही वनवास" के "राम हिंसा और दमन के स्थान पर स्वयं कष्ट सहकर सामनीति से लोकाराधन करना चाहते हैं ।"[78] हिंसा को छोड़ने के लिए कहते हैं । रामराज्य में अहिंसा की भावना पर बल दिया गया है । शम्बूक राम से अहिंसा के सम्बन्ध में कहता है —

मात्र हिंसा नहीं मानव न्याय
है अहिंसक और - और उपाय ।[79]

अहिंसा गांधी जी के लिए केवल नीति ही नहीं सर्वोच्च आस्था है । उनके जीवन का प्राण स्पन्दन भी है । उन्होंने कहा कि सत्य और अहिंसा का परित्याग करके हमें भारत की स्वतन्त्रता भी नहीं चाहिए । इसी प्रकार "संशय की एक रात" में राम रक्त सने हाथों से मिलनेवाली सीता को भी स्वीकारना नहीं चाहते हैं.....

"मानव के रक्त पर पग धरती आती
सीता भी नहीं चाहिए ।
सीता भी नहीं ।"[80]

योग सूत्र के अनुसार "अहिंसा प्रतिष्ठायां तत् सन्निधौ वैरत्यागः ।" अहिंसा की प्रतिष्ठा और उसकी सन्निधि में मनुष्य का वैर भाव तिरोहित हो जाता है । संसार में प्राणिमात्र के प्रति दुर्बुद्धि समाप्त हो जाना अहिंसा है । अहिंसा साधने का मतलब सारे संसार के प्रति प्रेम साधना है । साथ ही हमें अपने मनोविकारों और अन्य तृष्णाओं को वश में करना और किसी के प्रति दुर्भाव नहीं रखना चाहिए ।"[81]

5.4 विश्व शांति :

विश्व शांति की भावना आज की भावना है । आधुनिक राम काव्यों में विश्व शांति के सम्बन्ध में अधिकांश उदाहरण प्राप्त होते हैं । "उर्मिला" काव्य के राम ने रामराज्य की स्थापना के लिए यज्ञ करने का निश्चय किया है । उनके विचार में यज्ञ करने से शांति मिलेगी, संसार में सभी लोग सुख एवं शांति के साथ जी सकेंगे । यहाँ कवि ने विश्व शांति के लिए यज्ञ करने की विचारधारा को व्यक्त किया है । इस विश्व शांति को पाने के लिए हमें अपने तन-मन-धन से भी तत्पर होना होगा::--

शुद्ध यज्ञ है - सर्वभूत - हित
रत होकर जीवन देना,
शुद्ध यज्ञ है - जग - हितार्थ सब
अपना तन-मन, धन देना ।[82]

श्रीराजारामशुक्ल ने बालकृष्ण शर्मा नवीन की तरह "जानकी जीवन" में विश्व शांति का समर्थन किया है । कवि कहते हैं कि अश्वमेध का लक्ष्य है विश्व शांति । "कर्तव्य धर्म एवं कर्म से जनता में क्रांति लाना है तब जनता में सद्भावना भरी शान्ति मिलती है ।"[83]

शत्रुघ्न कहते हैं कि विश्व में बन्धुत्व की भावना आप में [राम में] है और संसार को समर्थता से चलाने की शक्ति भी है ।[84] अन्य प्रसंग पर कवि एकता की भावना व्यक्त करते हुए कहते हैं कि सारा राष्ट्र एक कुटुम्ब सा है । इस में एक की चिन्ता सब को है । इस के चलाने वालों का विचार महात्मा गांधी जी के जैसा रहना चाहिए । यहाँ नेता या राजा को गांधी जी के विचारवाला रहने से राज्य में एवं विश्व में सुख एवं शांति का प्रसार होता है —

या राष्ट्र एक कमनीय कुटुम्ब सा हो,
राष्ट्राधिनाथ जिसका मुखिया महात्मा ।
चिन्ता जिसे सतत है सबके सुखों की
शिक्षा, सुधार, गृह, भोजन, वस्त्र का भी ।[85]

नरेश मेहता का "संशय की एक रात" दो विश्व युद्धों के उपरान्त लिखा गया काव्य है । इसलिए उस पर इसका प्रभाव अधिक है । कवि ने विश्व युद्ध की विभीषिका को देखकर विश्व शांति पर अधिक ध्यान दिया है । हमें प्राचीन रामकाव्यों में शांति की भावना यत्र-तत्र मिल जाती है, लेकिन यहाँ विश्वयुद्ध के पश्चात स्थिति को दृष्टि में रखकर जो कुछ लिखा गया है वह महत्वपूर्ण है । यह विचार अन्य प्राचीन राम काव्य में द्रष्टव्य नहीं है । इसमें राम युद्ध को नहीं चाहते हैं शांति चाहते हैं, इस शांति की भावना को जनता में लाना चाहते हैं —

मैं केवल युद्ध को बचाना चाहता हूँ बन्धु ।
मानव में श्रेष्ठ जो विराजा है

उनको ही
हाँ॰ उनकी ही जगाना चाहता रहा हूँ बन्धु ।[86]

शांति के सम्बन्ध में "सीता समाधि" में कवइत्री कहती है कि जो अच्छे वचन मन को शांति बनाती है । " गांधी जी का अस्त्र है शान्ति है, किसी प्रकार के अस्त्र के बिना उन्होंने शांति को हासिल किया है ।[87] भूमिजा में रघुवीर शरणजी कहते हैं -- मानव में सत्य के प्रति गौरव या आदर रहता है । उसमें प्रेम रूपी गंगा का प्रवाह होना है । संसार में कोई भी भूखा न रहना और कोई न नंगा रहना है । यह धरती सीता को है, अतः हर एक थाली अन्न से भरी रहे । इस में कवि देश के लिए सभी प्रकार से सुख एवं शांति के साथ संपन्न रहने की इच्छा को प्रकट किया है । वाल्मीकि ने राम से कहा कि..

यह सीता की ज्योति, अन्न की
थाली सदा भरी हो ।
कोयल गाये, पुण्य की
डाली सदा हरी हो ।[88]

जहाँ पर किसी प्रकार की अशांति और दुःख न हो, वहाँ रामराज्य होगा । इसी भाव को हरिऔध ने "वैदेही वनवास" में व्यक्त किया ...

प्रजा में व्यापी है प्रतिपल ।
भर गया है रग रग में ओज ॥
शस्य, श्यामला बनी मरू-भूमि ।
ऊसरों में है खिले सरोज ॥[89]

"साकेत सन्त" में भी यह विचार पर्याप्त रूप में है । बलदेव प्रसाद मिश्र जी का "ऐक्य राज्य समिति (यू०एन०ओ०) के द्वारा विश्व शांति की रक्षा करने का विचार स्पष्ट रूप से दृष्टव्य है । यह समिति संसार में विभिन्न देशों के बीच पैदा होने वाली समस्याओं को दूर करने में सफल प्रयत्न करती है । युद्ध या हिंसा को दूर करके विश्व शांति की स्थापना करती है । उसका लक्ष्य है विश्वशांति को हासिल करना । "साकेत सन्त" में राम भरत को विश्व में सुख और शांति की स्थापना करने के लिए कहते हैं...

विश्व में फैल जाय सुख-शांति,
यही हो जीवन का आदर्श ।
इसी में मानवता की कान्ति,
इसी में मानव का उत्कर्ष ।
उचित है मनुज इसी के हेतु,
संभाले अपने-अपने काम ।[90]

बलदेवप्रसाद मिश्रजी में राष्ट्रीयता की भावना अधिक है । भारत देश की जो संस्कृति है उसे इस काव्य में बताया गया है । भारत की संस्कृति में "भिन्नता में एकता है" उसे ऐसे भी कह सकते हैं कि "भिन्नत्व में एकत्व" । "रामराज्य" में वे ऐसा चाहते हैं कि भारत के वासी सब एक प्राण हो, सभी एक माता के पुत्र बने, सब एक राष्ट्र के वासी बने । सब लोगों को एक सूत्र में लाने से विश्व सुखी रहेगा । देश की जनता का आपस में प्रेम रहेगा । कवि ने इसी एकता की भावना को व्यक्त किया है --

एक प्राण हो भारत जननी, एक राष्ट्र भारतवासी
राष्ट्र सूत्र हो मानवता में जो कि दिव्यता सुखरासी ।
प्रतिमानव में प्रभु रहता है, उसे सप्रेम जगाये हम
भूमा भाव भूमि पर छाये, सुख बाँटे, सुख पाये हम ॥[91]

विश्व शांति की भावना रघुवीर शरण मिश्र की "भूमिजा" में भी द्रष्टव्य है । इस में सब एक है और समान है का विचार व्यक्त हुआ है । इस में राम लवकुश से क्रोध के साथ कहते है कि "सब घर मेरे घर है" ।[92] विश्व शांति को पाने के लिए जनता में किसी प्रकार की अलगाव या भिन्नता की भावना नहीं रहनी चाहिए ।

5•5 समय के अनुसार परिवर्तन :

श्री बलदेव प्रसाद मिश्र जी कहते हैं कि रामराज्य वही होगाजो समय के अनुसार शासन में तब्दीलियाँ लायें । अर्थात् जो भी हो समय के अनुसार व्यक्ति में परिवर्तन होताहै । उसी प्रकार शासन करना चाहिए । समय के अनुसार परिवर्तन होना भारतीय संविधान को मद्धे नजर रखते हुये कवि ने प्रस्तुत किया है• •••

सुनागरिकता - तत्व, लिखता छत बन्ध है
विधान उसका होवे देश-कालानुसार हो ॥[93]

राजा को राज्य करते समय जनता को नहीं मालूम होना चाहिए कि राज्य में राजतन्त्र या प्रजातन्त्र चल रहा है । अर्थात् राजा को प्रजा की सुख-सुविधा का ध्यान रखना आवश्यक है । प्रजा का ध्यान रखते हुए शासन करना अनिवार्य माना गया है ।[94]

5•6 पंचायती राज्य :

मिश्र जी पर प्रजातन्त्र का प्रभाव है । प्रजा को अधिकार देने के लिए "पंचायती राज" बनाना आधुनिक विचार है । हमारे देश में अब भी गांवों में यह विधान द्रष्टव्य है । कवि कहता है कि पंचायत में पांच लोग रहते है ।

वे पाँच पंचशील जैसे नियम बनाते हैं । जनता के सहयोग से गाँवों में गृह, उद्योग और कृषियों में विकास पाते हैं । इसका कारण सहकारिता का बल है•••

गाँव गाँव में विद्या मन्दिर गाँव गाँव में वैद्य व्यवस्था
गाँव गाँव में उद्यमशाला, एक सुरक्षा - वर्द्धक संस्था ।
गाँव गाँव में पूर्ण स्वच्छता, गाँव गाँव के सुपथ मनोरम
गाँव गाँव में सुख सुविधामय देव गृहोपम भवनों के क्रम ॥[95]

उपर्युक्त पद में आधुनिक भावना स्पष्ट रूप से व्यक्त हो रही है । पंचायती विधान - पंचशील सूत्र, गाँव गाँव में रहने वाले जनता के उपयोगकारी संस्थायें आदि जनता को सुख देती है । यही राम राज्य का लक्ष्य है ।

5•7 सर्वोदय :

गोकुल चन्द शर्माने "अशोक वन" में "सर्वोदय" की भावना को व्यक्त किया है । यह सर्वोदय विचार विनोबाभावे का है । कवि कहते हैं कि जहाँ पर संसार में विश्व प्रेम की भावना है वहाँ पर घृणा की जगह नहीं है । आने वाला दिन सर्वोदय का है । उस सर्वोदय से संसार सुख एवं शान्ति के साथ रहेगा••

सर्वोदय सर्वोदय का था, खिलता जहाँ सरोज सदा ।
सद्भावों का मृदुमानस में, था आत्मा का ओज सदा ॥[96]

"सीता समाधि" में राजेश्वरी अग्रवाल का विचार है कि राम ने हर दिशा में राज्य को सुसंपन्न बनाया है । देश की उन्नति हासिल की है । "सभी तरह जनता और राष्ट्र को सबल बनाया है ।"[97] राजेश्वरीजी समाज की आज की दृष्टि में रखकर कहती है कि हम जब गुलाम थे तब इतने विचार न थे ।

एक विचार का सब आदर करते थे । अर्थात् प्रजातन्त्र में प्रजा का भय विभिन्न प्रकार से व्यक्त करते थे । अब हम स्वतन्त्रता पाकर भी दासता में है । यदा-आजादी पाने के बाद भी सही स्वेच्छा जनता को न मिली है । यहाँ के नेताओं ने कभी भी निष्पक्षता से राज्य नहीं किया और न ही अब कर रहे है । आदर्श राज्य के लिए विश्व में पंचशील, सर्वोदय जैसे सूत्र अपनाये गए हैं किन्तु भ्रष्टाचार, स्वार्थ आदि चल रहा है । कवइत्री आजके प्रजातन्त्र पर टिप्पणी करते हुए अपने विचार को व्यक्त करती है...

> अधीन न थे विचार इतने, पराधीनता में, जो अब हैं ।
> स्वतन्त्रता में बढ़ी दासता, नृप निष्पक्ष यहाँ अब कब हैं ।
> पंचशील जग में विस्तारा, अश्लील शील यहाँ उधाड़ा ।[98]

स्वतन्त्रता के पचास वर्षों में भारत के नेताओं ने पंचायती राज्य, पंचशील, सर्वोदय जैसे सिद्धान्तों की आड़ में इतना भ्रष्टाचार किया है कि उन शब्दों की अब कोई सार्थकता ही नहीं बची है ।

--

सन्दर्भ - सूची

1. साकेत – मैथिलीशरण गुप्त – पृ० 124
2. वही, पृ० 27
3. शम्बूक, जगदीश गुप्त, पृ० 48
4. रामराज्य, बलदेवप्रसाद मिश्र, पृ० 140
5. वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ० 31
6. ऊर्मिला – बालकृष्ण शर्मा "नवीन" पृ० 244
7. कैकेयी – मणिरायपुरी, पृ० 87
8. जानकी जीवन, राजाराम शुक्ल, पृ० 221
9. भूमिजा, रघुवीर शरण मिश्र, पृ० 72
10. वही, पृ० 111
11. संशय की एक रात, नरेश मेहता, पृ० 11
12. प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ० 27
13. वही, पृ० 42
14. साकेत सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ० 66
15. रावण महाकाव्य, श्री हरदयाल सिंह, सत्रहवाँ सर्ग, पृ० 220
16. साकेत – मैथिलीशरण गुप्त, पृ० 6
17. कैकेयी – मणिरायपुरी, पृ० 56
18. सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल, पृ० 272
19. साकेत – मैथिलीशरण गुप्त, पृ० 40
20. रामराज्य – बलदेवप्रसाद मिश्र : पृ० 141
21. साकेत सन्त, बलदेवप्रसाद मिश्र, पृ० 26
22. भूमिजा, रघुवीरशरण मिश्र, पृ० 16
23. कैकेयी, मणिरायपुरी, पृ० 55
24. वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ० 40

25. वही, पृ० 27

26. जानकी जीवन, राजाराम शुक्ल, पृ० 409

27. प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ० 41

28. अग्निलोक, भारत भूषण अग्रवाल, पृ० 16,17

29. वही, पृ० 50

30. वही, पृ० 51

31. संशय की एक रात, नरेश मेहता, पृ० 61

32. प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ० 29,30

33: रावण महाकाव्य, हरदयाल सिंह, पृ० 13 , सर्ग-19

34. उर्मिला - बालकृष्ण शर्मा "नवीन", पृ० 262

35. भूमिजा - रघुवीर शरण मिश्र, पृ० 83

36. अग्निलोक - भारतभूषण अग्रवाल, पृ० 51

37. वही , पृ. 47

38. वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ० 199

39. जानकी जीवन, राजाराम शुक्ल , पृ० 375

40. उर्मिला - बालकृष्ण शर्मा नवीन, पृ० 139 द्वितीय सर्ग

41. सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल : पृ० 129

42. वही, पृ० 153

43. वही, पृ० 268

44. संशय की एक रात, नरेश मेहता, पृ० 16

45. प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ० 49

46. तुलसी - मानस भारती, डा० रामप्रकाश अग्रवाल, नवम्बर 1996, पृ०4

47. संशय की एक रात, नरेश मेहता पृ० 66

48. वही, पृ० 19,20

49. वही, पृ० 70

50. वही, पृ० 68

51. रामराज्य, बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ० 53

52. नींद की एक रात, पृ० 73
53. रावण महाकाव्य, हरदयाल सिंह, पृ० 8/126
54. जानकी जीवन, राजाराम शुक्ल, पृ. 369
55. अशोक वन, गोकुलचन्द्र शर्मा, पृ० 127
56. भूमिजा, रघुवीर शरण मिश्र, पृ० 84
57. वही, पृ० 85
58. वही , पृ० 95
59. वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ० 116
60. कैकेयी, मणिरायपुरी, पृ० 53
61. उर्मिला, बालकृष्ण शर्मा नवीन, पृ० 136
62. सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल , पृ० 86
63. अग्निलोक – भारतभूषण अग्रवाल : पृ० 30
64. राम की शक्ति पूजा, निराला, रागविराग, पृ० 93
65. शम्बूक – जगदीश गुप्त, पृ० 52–53
66. प्रवादपर्व, नरेश मेहता : पृ० 49
67 शबरी, नरेश मेहता, पृ० 53
68. तुलसी – मानस – भारती, जनवरी, 1976, पृ० 21
69. साकेत – मैथिलीशरण गुप्त, पृ० 5
70 वही. पृ० 62
71. शम्बूक – जगदीश गुप्त, पृ० 56
72. अग्निलोक, भारतभूषण अग्रवाल, पृ० 13
73. साकेत सन्त, डा० बलदेवप्रसाद मिश्र : पृ० 123
74. प्रवादपर्व, नरेशमेहता, पृ० 42
75. वही
76. वही, पृ० 96
77. संस्कृति के चार अध्याय, दिनकर, पृ० 634

78• वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ• 116
79• शम्बूक, जगदीश प्रसाद गुप्त, पृ• 56
80• संशय की एक रात, नरेश मेहता, पृ• 32
81• कुछ नीति कुछ राजनीति – भवानी प्रसाद मिश्र , पृ• 24
82• उर्मिला – बालकृष्ण शर्मा नवीन, पृ• 300
83• जानकी जीवन, राजाराम शुक्ल, पृ• 354
84• वही, पृ• 359
85• वही, पृ. 107
86• संशय की एक रात, नरेश मेहता, पृ• 19
87• सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल, पृ• 270
88• भूमिजा, रघुवीरशरण मिश्र, पृ• 113
89• वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ• 32
90• साकेत सन्त, डा0 बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ• 153
91• रामराज्य, बलदेवप्रसाद मिश्र, पृ• 22
92• भूमिजा, रघुवीर शरण मिश्र, पृ• 72
93• रामराज्य, बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ• 130
94• वही,
95• वही, पृ• 144
96• अशोक वन, गोकुलचन्द्र शर्मा, पृ• 107
97• सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल, पृ• 236
98• वही• पृ• 275

--

छठवाँ अध्याय

आधुनिक राम काव्य की अन्य दिशाएं एवं दृष्टियाँ

1. धार्मिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि
   - 1.1 धर्म की दुहाई
   - 1.2 अद्वैतवादी दर्शन
   - 1.3 कर्म सिद्धांत
2. आर्थिक दृष्टि
   - 2.1 शोषण
   - 2.2 आर्थिक विषमता
   - 2.3 आर्थिक समानता
   - 2.4 अर्थ प्रगति
3. ऐतिहासिक दृष्टि
   - 3.1 पुराख्यान
   - 3.2 इतिहास एवं पुराख्यान
   - 3.3 राम काव्यों में प्रमुख पात्रों का ऐतिहासिक विकास
   - 3.4 राम
   - 3.5 सीता
   - 3.6 लक्ष्मण
   - 3.7 उर्मिला
   - 3.8 भरत
   - 3.9 माण्डवी
   - 3.10 शबरी
   - 3.11 शम्बूक

3·12 रावण

3·13 कैकेयी

4· भौगोलिक दृष्टि

4·1 उपदेश ग्रहण

4·2 वैज्ञानिकता

4·3 मानवीयभावना

5· राष्ट्रीयता एवं अंतराष्ट्रीयता की दृष्टियाँ

5·1 देश प्रेम

5·2 अंतराष्ट्रीयता

छठवाँ अध्याय

आधुनिक राम काव्य की अन्य दिशाएं एवं दृष्टियाँ

"राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है,
कोई कवि बन जाय सहज सम्भाव्य है ।" [1]

भारतीय वाङ्मय में राम काव्य की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है । पौराणिक युग से लेकर लौकिक संस्कृत साहित्य तक राम काव्य पर प्रचुर लेखन हुआ है । आधुनिक काव्य में तो रामकाव्य भारतीय सभी भाषाओं में अपने नये विचार एवं दृष्टिकोण में अवतरित हुआ । हिन्दी भाषा का आधुनिक राम काव्य इसी समृद्ध परम्परा के आधार पर नयी दिशाएं और दृष्टियाँ लेकर अवतरित हुआ । क्योंकि राम काव्य की नित नवीन रूप में प्रसिद्ध है ।

1. धार्मिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि :

आध्यात्मिक धर्म का स्रोत गत सत्य है कि हमारी आत्मा अपने वास्तविक रूप में परमात्मा है । हमारा धर्म है कि हम आत्मा के इस परमात्म रूप का अन्वेषण करें और प्रबुद्ध होकर अपने को वही समझने लगे । इस तरह समझना हमें "एकोऽहं बहु स्याम्" की स्थिति में ले जायेगी । जिस आत्मा ने अपने को प्राप्त किया है, अपना साक्षात्कार कर लिया है वह परमात्मा से भिन्न अपना कोई एकान्त अस्तित्व नहीं समझी जाती है । वह सार्वभौमिक जीवन के प्रति जो सभी व्यक्तियों, जातियों एवं राष्ट्रों का

विशिष्ट समुच्चय है । मनुष्य के समस्त साहसिक कृत्यों एवं उच्चाकांक्षाओं के मूल में एक मानसिक प्रेरणा सदा कार्य करती है । समस्त प्राणिजगत् के अनिवार्य एकता का आत्मा का अनुभव ही इन शब्दों में व्यक्त हुआ है कि "तू मुझ में है, और मैं तुम में ।" इसी को व्यापक रूप में कहा जाता है कि साहचर्य ही जीवन है और साहचर्यहीनता ही मृत्यु है । डा० सर्वेपल्लि राधाकृष्णन् कहते हैं कि "मूल प्रवृत्यात्मक और बौद्धिक दोनों प्रकार के प्राणी आध्यात्मिक व्यक्तित्व में अपनी पूर्णता को प्राप्त करते हैं । आत्मा के द्वारा पंच भौतिक शरीर पवित्र और एकतान हो जाता है । बुद्धि प्रदीप्त होकर जीवन के लक्ष्यों की ओर नियोजित कर दी जाती है । शरीर और मन, मूल प्रवृत्ति और बुद्धि आत्मा के निरंकुश स्वामी न बनकर उसके आज्ञानुवर्ती सेवक बन जाते हैं ।"[2]

इस आध्यात्मिक दृष्टिकोण का समर्थन न केवल महान धार्मिक उपदेष्टा एवं मानव-जाति के नेता करते हैं, वरन साधारण जन तक करते हैं । जिनके अन्तरतम अस्तित्व में आत्मा का कूप गहराई में रहता है । अन्तरंग एवं बहिरंग दोनों को जाने वाला कुछ है और दोनों के मध्यदेश में रहता है । इस मध्यवर्ती "कुछ" को मन कहते हैं । इसी दृष्टि से "मनु" का यह मत है....

"उद्बबर्हात्मनश्चैव मनः सदसदात्मकम्"[3]

अर्थात् आत्मा से सद् और असद् भावमय, दृश्य - अदृश्य स्वरूप, चेतन-जड़ - स्वभाववाले मन को व्यक्त करता है । पाश्चात्य विद्वान जोन्स ने कहा है कि "जीव चित्त का परिस्पन्द है और पुरुष का चित्त जैसा है पुरुष वैसा ही

है । मन को छोड़कर और कुछ नहीं है । हम मन के अभिव्यक्ति रूप हैं । शरीर के बल नश्वर विश्वास मात्र हैं जैसे विचार होते हैं, मनुष्य वैसा ही होता है ।"[4]

हमारे सामान्य अनुभव में ऐसी घटनाएं घटित होती है जिनका यह अर्थ होता है कि कोई आध्यात्मिक संसार भी है । हम प्रार्थना अथवा चिन्तन मनन करते हैं, अपनी सामान्य आत्मा से परे एक शक्ति का संधान करते हैं तथा उसके प्रति आत्मनिवेदन का भावावेग हमारे अन्दर रहता है । कभी अचानक ही सौन्दर्य की एक झलक मात्र से हमारे अन्तस में ईश्वरीय दर्शन होने का अनुभव मिलता है । इन सब के सूचक हैं कि हम अनिवार्यतः आध्यात्मिक प्राणी है । सर्वपल्ली राधाकृष्ण जी कहते हैं कि "स्वयं को जानने का अर्थ है सबको जान लेना या जिसको जानना आवश्यक है उसको तो जान ही लेना । जीवन को देखने का जो हठ धर्मी दृष्टिकोण है, उससे भिन्न है आध्यात्मिक दृष्टिकोण ।"[5]

आधुनिक और प्राचीन युग में धार्मिकता है, लेकिन जो प्राचीन में था उतना आधुनिक में नहीं है । निरंतर आलोचना एवं विज्ञान की बौद्धिकता से हिन्दू धर्म का रूढ़िवादी स्वरूप अदृश्य हो जा रहा है । उसका ऐसा स्वरूप प्रत्यक्ष हुआ जो सामान्य मानव धर्म बन सकता है । प्रवृत्तिमूलक जीवन दर्शन के कारण अवतारवाद, पूजा, भक्ति आदि को सामाजिक धरातल पर रखा गया है । आधुनिक राम-काव्य की धर्म - भावना भी सामाजिक पृष्ठभूमि पर देखा जा रही है । आधुनिक राम काव्य में धार्मिक आडम्बर एवं धर्म की ओट में दुष्कृत्य करने वालों की निन्दा हुई है ।

1·1 धर्म की दुहाई :

पं० रामचरित उपाध्याय की मंथरा कैकेयी को समझाते हुए धर्म की दुहाई देकर लोगों को ठगने वाले व्यक्तियों के सम्बन्ध में विवेचन करती है····

धर्म – दोहाई देने वाले बड़े भयंकर नर हैं,
प्रायः प्रिय – वक्ता नर नारी ! घोर छद्म के घर हैं।
बड़ा कठिन है उन्हें जानना, हाथ न वे आते हैं,
उनसे बड़े बड़े पण्डित भी सहज ठगे जाते हैं।[6]

उपाध्यायजी ने अन्य प्रसंग पर "धर्म से पतित मनुष्य का जीवन व्यर्थ माना गया है।"[7] धर्म वही होता है जो हर व्यक्ति के लिए : अनिवार्य एवं सार्वजनीन है।

1·2 अद्वैतवादी दर्शन :

धर्म के स्वरूप को प्रत्यक्ष करने के लिए प्रायः सभी कवियों ने भारतीय अद्वैतवादी दर्शन को आत्मसात किया है। मैथिलीशरण की विशिष्टाद्वैतवादी में ब्रह्म को सगुण माना गया है। गुप्त के "साकेत" में राम को पूर्ण ब्रह्म कहा गया है····

हमको ही लेकर अखिल विश्व की क्रीड़ा,
आनन्दमयी नित नई प्रसव की पीड़ा।[8]

यहाँ सीता मायाहै, जो ब्रह्म की आह्लादिनी शक्ति है, सृजन प्रेरणा होता है । राम सृष्टि के कर्ता और उसके नियंता भी हैं । राम के द्वारा ही समस्त सृष्टि क्रियाशील बनती है । वे ब्रह्म और जीव में नित्य सम्बन्ध मानते हैं । डा० कमलाकान्त त्रिपाठी ने गुप्त जी के सम्बन्ध में कहा कि "उन्होंने धार्मिक काव्य की रचना नहीं की, मानवतावादी काव्य लिखा ।"[9] गुप्त जी मानते हैं कि राम जगत में अपनी महत्ता की स्थापना के लिए नहीं, मनुष्य को ही ईश्वरता प्राप्त कराने के उद्देश्य से अवतरित हुए हैं । बालकृष्ण शर्मा "नवीन" में भी अद्वैतवादी दर्शन द्रष्टव्य है...

अब सगुण, अगुण होने को - यों अकुलाता है छिन-छिन,
क्षर, अक्षर में मिलने को दिन बिता रहा है गिन-गिन ॥[10]

यहाँ पर नवीन जी सगुण (जीव) अगुण (ब्रह्म) से एक रूप होने को व्याकुल होते हैं । माया जितनी ही सबल होती है, जीव ब्रह्म से उतने ही दूर हो जाता है । यथा "जब तक मनुष्य में अहं का तिरोभाव नहीं होता तब तक उसका ब्रह्म में लय नहीं होता है ।"[11] अद्वैतवाद में केवल एक ब्रह्म को ही सत्य माना गया है । गुप्त जी और नवीन जी के धर्म में अन्तर है । गुप्त जी के धर्म में साम्प्रदायिकता होते हुए भी बहिर्मुखी साधना का प्राधान्य है जब कि नवीन जी के धर्म में असाम्प्रदायिकता होते हुए भी अन्तर्मुखी साधना प्रस्फुटित होती है ।

निरालाजी ने शाक्त मत से प्रभावित होकर शक्ति की उपासना स्वीकार की है । "राम की शक्ति पूजा" में...

ज्योतिर्म्मय रूप, हस्तदश विविध- अस्त्र - सज्जित,
मन्दस्मित मुख, लख हुई विश्व की थी लज्जित,
है दक्षिण में लक्ष्मी, सरस्वती, वाम भाग,
दक्षिण गणेश, कार्तिक बायें रण-रंग-राग,
मस्तक पर शंकर ।[12]

निरालाजी ने दर्शन के क्षेत्र में अद्वैतवाद की ही स्थापना की है । डा० बलदेवप्रसाद जी पर अद्वैतवाद का प्रभाव है । मिश्र जी समस्त विश्व में एक मात्र आत्मसत्ता को ही सत्य मानते हैं । वही सत्ता विश्व में भिन्न-भिन्न रूपों में व्याप्त है....

वही दाता है, साईं वही, वही है अलख एक ओंकार,
उसी के देव बन गए दास, उसी के हेतु सृष्टि व्यापार ।
वही शासित है बनकर व्यक्ति, वही शासक है बन कर राष्ट्र
उसी में है अन्तर - राष्ट्रीय, बन्धनों छन छन कर राष्ट्र ।[13]

समस्त सृष्टि का व्यापार उसी के निमित्त है । वही सत्य, वही शिव और वही सुन्दर है । मिश्र जी ने इस दर्शन के द्वारा मानव धर्म को अभिव्यक्त किया है । आधुनिक राम- काव्य में थोड़े अन्तर से इसी दर्शन को अपनाया है । आज की मानवतावादी धारणा को यही पुष्ट आधार प्रमाणित करता है । डा० बलदेव प्रसाद मिश्र जी ने रामराज्य में कहा कि....

मनुष्यों का यही धर्म, अविरोधी प्रकार से
सच्चिदानंद - सिद्ध्यर्थ सर्वोदय हुआ करे ॥

x x x

बन्धकारी सदा कर्म क्षुद्र व्यक्तित्वबद्ध जो
मोक्षकारी सदा कर्म, जो कि विश्व - हितार्थ है ।[14]

किसी से ग्रहण करना, त्यागना युग का धर्म रहा है ये कब से शुरू हुआ है किसने कहा है स्पष्ट नहीं है । यही राजाराम शुक्ल जी ने जानकी जीवन में व्यक्त किया है ....

योगी त्यागी साधु-सन्त, वीराग्रणी
आदर्शों की जन्मभूमि पुण्या हुई ।[15]

इस प्रकार भारत प्राचीन काल से धार्मिक देश रहा ।

आधुनिक राम-काव्य के काव्यकार किसी भी धार्मिक या आध्यात्मिक भावना से काव्य सृजन में प्रवृत्त नहीं हुए हैं । उन्होंने आधुनिक युग के अनुरूप ही धर्म के सार्वजननीन रूप की अभिव्यक्ति की है । उनके द्वारा ही मानवतावाद को समर्थन मिला है ।

1.3 कर्म सिद्धान्त :

रघुवीरशरण मिश्र ने "भूमिजा" में कर्म सिद्धान्त के प्रभाव से कहा कि....

धरती पर अधिकार सभी का
सभी अतिथि अचला के ।
दो दिन के मालिकों । लड़ो मत
छुओ न प्राण अबला के ।[16]

कवि ने यहाँ सवाल किया कि अधिकार दो दिन का है उसके लिए युद्ध करके क्या हासिल करोगे । यही विचार बालकृष्ण शर्मा "नवीन" की "उर्मिला" में व्यक्त किया गया है•• •

वर्त्तमान है कर्म - साधना,
भावी ही जीवन - फल है,
वही मुक्ति - निर्वाण, वही है,
त्राण, वही स्थिति अविचल है ।[17]

कर्म के अनुसार ही मानव मुक्ति को पाता है । यह कर्म सिद्धान्त आधुनिक राम काव्य में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से अभिव्यक्त हुआ है । आधुनिक कवियों ने प्राचीन घटनाओं या प्रमाणों से पूर्ण रूप से हटकर व्यक्त नहीं किया है । उस घटना को आधुनिक परिप्रेक्ष्य से देखा गया है । यह कर्म सिद्धान्त जानकी जीवन[18], वैदेही वनवास[19], अग्निलोक[20], शबरी[21] कैकेयी[22] , सीता - समाधि[23] साकेत-सन्त[24], साकेत में चित्रण किया गया है । मणिरायपुरी ने कर्म के सम्बन्ध में कहा .•••••

पूर्व जन्म के कर्म यही थे
नहीं नृपति का पाप रहा
पुत्र विरह में प्राण जायेंगे
मुनि का था अभिशाप रहा ।

यहाँ पूर्व जन्म के कार्यों के अनुसार ही कर्म का निर्णय होता है । "प्रवादपर्व" में काल के नियम के आगे मनुष्य की विवशता के बारे में बताया गया है । समय के निर्णय के अनुसार कर्म करते जाना ही मनुष्य का कर्तव्य है••••

कर्म के इस तटस्थ
भागवत - अनुष्ठान से
कोई मुक्ति नहीं
कोई निष्कृति नहीं ।[26]

मानव सृष्टिके नियम के विपरीत कर्मच्युत कभी भी नहीं हो सकता है । कवि ने कर्म की अनिवार्यता के बारे में प्रश्न किया है ।[27] इस प्रकार का उदाहरण "शम्बूक", साकेतसन्त में और मिल जाता है ।

भारत से एक धर्म - प्रधान राष्ट्र कहते हैं । आधुनिक युग में धर्म की यथार्थ चेतना का विकास हुआ है । धार्मिक एवं आध्यात्मिक जागरण में स्वामी दयानन्द, राजाराम मोहनराय, शंकराचार्य आदि का प्रयत्न ही है । विवेकानंद जैसे लोग ने भारतीयों को कर्ममय जीवन की प्रेरणा दी । आधुनिक युग में धार्मिक और आध्यात्मिक चेतना के विकास की यात्रा के बहुत ही महत्वपूर्ण रही है । धर्म कुछ बाह्याचारों की आवश्यकता जानता है, वह एक ऐसी पद्धति है जिसमें नियन्त्रणों और आश्वासनों को स्थान प्राप्त है, लेकिन आध्यात्मिकता उच्चतम आत्मा को जानने, उसी में निरत रहने एवं जीवन को उसके अंगों, उपांगों सहित उच्च बनाने की आवश्यकता पर बल देती है । आध्यात्मिकता धर्म का मर्म और आन्तरिक निचोड़ है । रहस्यवाद धर्म के इसी पक्ष पर जोर देता है ।

2• आर्थिक दृष्टि :

भारत शुरु से एक कृषी-प्रधान देश रहा है । इसका कारण है कि भारत की अधिकांश जनता ग्रामों में रहती है । अतः आधुनिक राम काव्य में ग्रामों की आत्मनिर्भरता एवं भौतिक विकास पर विशेष महत्व दिया जा

रहा है । मैथिलीशरण गुप्त ने गांव की आर्थिक उन्नति की स्थिति को बताया है......

> अन्न वृद्धि से तृप्त तथा बहु कला - सिद्धि से सहज प्रसन्न,
> अपना ग्राम-ग्राम है मानो एक स्वतन्त्र देश सम्पन्न ।[28]

डा० बलदेव प्रसाद मिश्र जी के काव्य "रामराज्य" में भी देखा जा सकता है कि ग्रामोन्नति के लिए भरद्वाज आश्रम में आदर्श ग्राम की रूप रेखा प्रस्तुत करते हैं......

> मिट्टी के घर, किन्तु स्वच्छ, सुन्दर, सुविधामय
> सब ऋतुओं के लिये, सुखद अति उत्तम आश्रय
> आंगन, परछी, हवादार कमरे मन भाये
> पशुओं के ये गोष्ठ, अलग अति स्वच्छ सुहाये ।।[29]

इस में मिश्रजी ने आवास के लिए स्वच्छ, सुन्दर, हवादार एवं सुविधामय घर, फलवाले वृक्ष, शौच-कूप , जलकूप, चौड़े मार्ग, भोजन, वस्त्र आदि की आत्म-निर्भरता एवं भौतिक सुविधाओं के सम्बन्ध में बताया है । इसके साथ-साथ ग्रामीण कृषि विकास के लिए "कुटीर उद्योगों- कताई-बुनाई जैसे कामों का भी प्रेरणा मिला है ।"[30] यहाँ पर गुप्त जी की सीता गांव की कोल-किरात बालाओं को शिक्षा देती है ।

2·1 शोषण :

साधारणतः भौतिक समृद्धि के लिए दूसरों के शोषण को निन्दनीय मानते हैं । देशों का शोषण, लूटपाट आदि को अनैतिक माना गया है । देश

में ही परिश्रम द्वारा प्राकृतिक साधनों के उपयोग से उत्पादन बढ़ा सकते हैं। डा० बलदेव प्रसाद मिश्रजी शोषण को एक अभिशाप मानते हैं, वह शोषण किसी प्रकार का क्यों न हो ? इस प्रकार के शोषण को उन्होंने नारकीय कृत्य की संज्ञा प्रदान की है....

नर का शोषण ? और करे निर्बाध उसे नर ।
तो वह निश्चय निंद्य, नारकी से भी बढ़कर ।
नर - भक्षण हर जाप, मंत्र कैसा वह साधूं ।
पथ - दर्शक हो कौन ? किसे जाकर आराधूं ।।[31]

व्यक्ति धन पाने के मोह या स्वार्थ में डूब कर दूसरों का शोषण करता है । उसके शोषण के द्वारा अपनी इच्छा को पूरा करता है । "साकेत सन्त" में इसी विचार को बलदेव प्रसाद मिश्र जी ने अभिव्यक्त किया है ...

निर्धन की कुटियाँ ढाकर,
जो अपना महल बनाते ।
आहों की फूंकों से ही
वे एक दिवस जाते ।।[32]

यहाँ पर मानव अपने स्वार्थ के कारण ही इस प्रकार क्रूर काम करता है । आधुनिक राम काव्यों में इस प्रकार के विचार यत्र-तत्र मिल ही जाते हैं ।

2·2 आर्थिक विषमता :

आधुनिक युग में आर्थिक विषमता को दुःख का कारण मानते हैं । समाज या देश में न्यायपूर्ण व्यवस्था की अनिवार्यता है, जब तक यह संभव नहीं होता है तब तक भौतिक समृद्ध पाने में कोई अर्थ नहीं है । मैथिलीशरण गुप्त जी ने कहा कि "धन किसी वर्ग विशेष में केन्द्रित हो जाता है उससे

समाज का नाश हो जाता है ।"[33] डा० बलदेव प्रसाद मिश्र के अनुसार समाज में हर एक व्यक्ति के लिए न्यूनतम रहन-सहन का स्तर निर्धारित करना अनिवार्य है । हर एक व्यक्ति में इनको पाने की शक्ति होनी चाहिए । कवि ने "साकेत - सन्त" में कहा कि.....

मनुज - आवश्यकताएँ पाँच, न इनमें कभी कहीं हो त्रास,
कि वह हो स्वस्थ और सज्ञान, मिले शुचि अन्न, वस्त्र आवास ।[34]

इसमें कवि मिश्र जी ने अनिवार्य आवश्यकताएँ पाँच मानी है । ये अन्न, वस्त्र, आवास, स्वास्थ्य एवं ज्ञान है । समाज में हर एक व्यक्ति को ये सुविधाएँ मिलता है तब ही देशका विकास होता है । "रामराज्य" में भी यह द्रष्टव्य है ।[35]

2·3 आर्थिक समानता :

कवि ने समाज में आर्थिक समानता लाने का विचार व्यक्त किया है । ये विचार आधुनिक राम काव्यों में पर्याप्त रूप में है, मैथिलीशरण गुप्त जी ने कहा कि जो न त्याग करते हैं और लोक सम्पत्ति को लूटकर जमा करते हैं वे दस्यु हैं....

जो संग्रह करके त्याग नहीं करता है,
वह दस्यु लोक-धन लूट-लूट धरता है ।[36]

कवि ने यहाँ पर लोक संपत्ति को लूटने की आलोचना करते हुए आर्थिक समानता रहने की कामना व्यक्त किया है ।

डा० बलदेव प्रसाद मिश्र ने कहा है कि भौतिक समृद्धि के होते हुए भी व्यक्ति को उसका दास नहीं बनना चाहिए....

रहे भौतिक सुख सबके पास,
किन्तु जन बनें न उसके दास ।[37]

इस पद में डा० मिश्र ने समाज के प्रत्येक व्यक्ति के लिए आत्मिक विकास को मुख्य लक्ष्य माना है । इस में महात्मा गांधी जी के "पूंजीपति धन के ट्रस्टी" सिद्धान्त का प्रभाव दिखाई देता है । आधुनिक युग में जिस में व्यक्तियों को भार न मालूम पड़े ऐसी राजस्व - व्यवस्था को श्रेष्ठ माना है । व्यक्ति को किसी प्रकार के बोझ का आभास नहीं होना चाहिए ।

2·4 अर्थ प्रगति :

समाज का यथार्थ विकास उसके आत्मिक विकास में निहित है । अर्थ केवल उसका साधन है लेकिन उसे साध्य करने का नहीं है । व्यक्ति अर्थ को ही प्रधान मानकर न्याय और अन्याय करता है । कभी-कभी आर्थिक या भौतिक प्रगति वास्तविक प्रगति का विपर्यय भी हो जाती है । आधुनिक राम-काव्य में कवियों ने भौतिक प्रगति को समाज की प्रगति का पर्याय नहीं माना है । बालकृष्ण शर्मा "नवीन" का विचार .....

अर्थ प्रगति का चिन्ह नहीं है, वह है प्रगति - नदी का फेन
वह तो यों ही उतराता है, होने में विलीन, बेचैन ॥[38]

आधुनिक रामकाव्यों में ज्यादातर मैथिलीशरण गुप्त, डा० बलदेव प्रसाद मिश्र ने ही आर्थिक स्थिति पर ध्यान दिया है । उनका लक्ष्य ये है कि हर व्यक्ति को आर्थिक सुविधाएं उपलब्ध हों, शोषण और विषमता का अन्त हो और भोग या संग्रह के साथ त्याग का आदर्श हो । इस सम्बन्ध में इतना ही कहा जाता है कि कवि सामान्य जनता की तरह नहीं रहता है उसे इन सबसे ऊपर समझा जाता है । ऐसी स्थिति में कवि सामान्य जनता को जीवन और जीवन-मूल्यों की वास्तविकता से अवगत करता रहता है । अतः राम काव्य परम्परा के काव्यों में परम्परागत और सामाजिक मूल्यों को देखा जाता है । फलतः देश की तत्कालीन आर्थिक स्थिति का चित्रण कर जनता में देश-प्रेम और राष्ट्र प्रेम के भाव को समाविष्ट किया जा सकता है ।

3. ऐतिहासिक दृष्टि :

ऐतिहासिक दृष्टि इतिहास से सम्बन्धित है । वास्तव में इतिहास का अर्थ ऐतिहासिक स्रोतों, अभिलेखों, संस्मरणों में वर्णित घटनाओं का न तो ब्योरा है और न तो अतीत और वर्तमान के बीच अनवरत प्रक्रिया है । "इति" - ह - आस" इन तीन शब्दों का संश्लिष्ट स्वरूप इतिहास है । इसका अर्थ है कि "निश्चित रूप से ऐसा हुआ ।"[39] रेनियर ने भी कहा कि "इतिहास सभ्य समाज में रहने वाले मनुष्यों के अनुभवों की कहानी है ।"[40]

ऐतिहासिक तथ्य के अन्तर्गत सम्पूर्ण समष्टि का तथ्य लिया जाता है । अर्थात् घटना से संबंधित एक मनुष्य का कार्य, एक स्थान, लाखों मनुष्यों के जीवन को प्रभावित करने वाले विषय आदि सभी इतिहास के तथ्य हैं । इतिहास का क्षेत्र बहुत ही परिवर्तनशील है । आदिकाल से लेकर आधुनिक युग तक इतिहास क्षेत्र का स्वरूप निरन्तर परिवर्तनशील रहा है । इतिहास क्षेत्र

का वर्गीकरण इस प्रकार है -- राजनीतिक इतिहास, संवैधानिक इतिहास, आर्थिक इतिहास, सामाजिक इतिहास, सांस्कृतिक इतिहास, धार्मिक इतिहास औपनिवेशिक इतिहास, संसदीय इतिहास, सैनिक इतिहास, कॉमनवेल्थ का इतिहास, विचारों का इतिहास, इतिहास दर्शन, मानव स्वतन्त्रता तथा मानव प्रगति का इतिहास, विश्व इतिहास आदि । इन वर्गीकरणों का कोई अंतिम स्वरूप नहीं है । परिणाम स्वरूप इतिहास की विशिष्ट दक्षता के साथ-साथ सामान्य इतिहास का अध्ययन और लेखन करना चाहिए । समाज इतिहासकारों से यही अपेक्षा रखता है । इतिहास की अवधारणा विभिन्न युगों में काल और परिस्थितियों का परिणाम रही है ।

3·1 पुराख्यान :

"पुरा" का अर्थ है प्राचीन पहला अथवा व्यतीत । "आख्यान" शब्द के अर्थ का इतिहास भी उतना ही प्राचीन है जितना "पुरा" का प्राचीन काल में पुराण और इतिहास के पर्याय में यह शब्द प्रयुक्त होता था ।

3·2 इतिहास एवं पुराख्यान :

पुराख्यान की सृजन प्रक्रिया के मूल में यथार्थ की भूमि होते हुए भी उसका अवतरित अथवा साकार रूप मानव की रंगीन कल्पनाओं से ही मण्डित है । पुराख्यान को इतिहास से भव्यतर कहा गया है । यथा ऐतिहासिक तथ्य शाश्वत सत्य नहीं होते, प्रत्येक क्षण उनका अवसान बन जाता है । "यह पुराख्यानात्मक परिणति ही इतिहास की अंतिम परिणति है । दूसरे शब्दों में कहने पर मानव जीवन की पूर्णता है । इस पूर्णत्व की प्राप्ति के अनंतर इतिहासगत अस्तित्व समाप्त हो जाता है ।"[4] इस तरह ऐतिहासिक स्थितियों में

परिवर्तन, गति एवं क्रम रहता है । पुराख्यानात्मक स्थितियों में प्राय: अवतरण, पतन और रूपांतरण रहता है । अवतरण, पतन एवं रूपांतरण पुराख्यानात्मक भूमियों के कारण कविता का उपजीव्य बन जाता है । दैविक एवं भौतिक मानव जीवन के विभिन्न सोपानों की कथा है इतिहासात्मक पुराख्यान है । अत: हम कह सकते हैं कि इतिहास जब पुराख्यान में अवतरित होता है तो कविता को एक आदरणीय धरातल मिल जाता है ।

3.3 राम काव्यों में प्रमुख पात्रों का ऐतिहासिक विकास :

भारतीय वाङ्मय में राम कथा को सर्वाधिक महत्व और प्रसाद प्राप्त हुआ है । राम-काव्य की समृद्ध परम्परा में अनेक मौलिक तत्व उभर कर आए हैं । हर कवि ने अपने काव्य - कौशल से मौलिकता और नूतन प्रसंगोद्भावनाओं को जगह दिया है । वस्तुत: युग के साथ कृति भी परिवर्तित होती रहती है । राम - साहित्य का अनेक मुखी रूप देखने को प्राप्त है । नये चिन्तन और धरातल को लेकर , कविगण, इसके विकास में योगदान देते रहे हैं । राम काव्यों में पात्रों के चरित्र में अभूतपूर्व परिवर्तन आधुनिक युग की परिस्थितियों के अनुकूल किया गया है ।

3.4 राम :

मर्यादा पुरूषोत्तम राम भारतीय आदर्श एवं गरिमा के प्रतीक हैं । विभिन्न युगों में कवियों ने अपने काव्यों में राम के पावन चरित्र को विषय बनाया है । राम का चरित्रयुगानुरूप कवियों दवारा व्याख्यायित हुआ है । जैसी युग की आवश्यकता हुई, वैसा ही राम रूप धारण कर अवतरित हुए । भारतीय संस्कृति के पुरा ग्रंथ ऋग्वेद से लेकर नरेश मेहता की "संशय की एक रात"

तक राम का चित्रण हुआ है । इसके अलावा रामायण की कथाप्रारंभ से ही व्यवस्थित रूप में मिल जाती है ।

आदि कवि ने राम के चरित्र चित्रण में लौकिक और लोकोत्तर गुणों का समावेश कर एक महामानव की सृष्टि की है । फादर कामिल बुल्के ने कहा कि "प्राय: समस्त विद्वान बाल-काण्ड तथा उत्तरकाण्ड को जिनमें अवतार भावना आद्योपान्त व्याप्त है, प्रक्षिप्त मानते हैं ।"[42] अयोध्याकाण्ड के शुरुवात में ही वाल्मीकि ने प्रकट किया कि "विधाता ने विश्व में समस्त पुरुषों के सारतत्व को समझने वाले साधु-पुरुष के रूप में राम को प्रकट किया है ।"[43] राम ने वनवास काटा नहीं अपितु आनन्दपूर्वक बिताया है । "रावण-वध" एवं "सीता-प्राप्ति" कार्य रामायण के नायक के चरित्र को उतना उजागर नहीं करते जितना धर्मनिष्ठ रहकर पिता की आज्ञा का पालन और विश्वामित्र को दिए गये वचनों की पूर्ति के लिए किए राम के संघर्ष मात्र है । "रावण-वध" तो वस्तुत: गुरु के प्रति की गई प्रतिज्ञा का ही एक महत्व-पूर्ण अंश था । राम एक मनुष्य के विकास की चरम - परिणति है । "रामायण" में कवि तो अनेक बार भिन्न सन्दर्भों में राम को "मानव" कहना पड़ा है...... "हतान्येकेन रामेण मनुष्येण पदातिना ।"[44] राम के अलौकिक राम से चमत्कृत होकर उनके शत्रु, मित्र और परिजन उन्हें इन्द्र और विष्णु के सदृश प्रतापी और साक्षात् विष्णु के रूप में ग्रहण करते हैं । लेकिन राम ने ऐसे स्थलों पर स्वयं को मानव मात्र ही कहा है ....

"आत्मानं मानुषं मन्ये रामं दशरथात्मजम् ।"[45]

सत्य ही राम का संबल है इसीलिए सत्य के प्रति राम की पूर्ण निष्ठा है । राम के मुख से निकला हर वाक्य पत्थर की लकीर माना जाता है

डा० ब्रह्मानंद पुरुषोत्तम व्यास ने कहा कि "राम माता एवं पिता में देवभाव, भाइयों के लिए सहज स्नेह और समानता का आग्रह, पत्नी के प्रति अकलुष कर्तव्यनिष्ठा, प्रजा के लिए व्यक्ति निष्ठा भावनाओं का परित्याग, गुरुओं में श्रद्धा, ब्राह्मण एवं ऋषियों के सत्कृत्यों को बाधारहित करने का दृढ़ संकल्प, जनजाति, वनजाति, वनवासी एवं ग्रामीणों के प्रति अगाध प्रेम भी मर्यादित और निश्चित विधान से प्रतिबद्ध दिखाई देते हैं..... उनकी इसी विधानपरकता ने उन्हें व्यक्तिवाद के सीमित दायरे से उठाकर समष्टिगत चेतना के विस्तृत चबूतरे पर प्रतिष्ठित किया है, जिसके सामने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के चिंतन को ही मूलाधार मानकर चलने वाला "समाजवाद" ऊपर की ओर हाथ उठाए बौने के समान दिखाई देता है ।"[46]

"रामोपाख्यान" तो वस्तुतः प्रमुख कथा में कारण विशेष के लिए उद्धृत एक अवान्तर कथा है और राम एक अवान्तर कथा के नायक हैं । तुलसी के पूर्व हिन्दी राम काव्य में राम के बाल-रूप की प्रतिष्ठा सर्व प्रथम सूर ने की है । सूर के राम अत्यन्त भक्तवत्सल हैं, गुरु की सेवा, गो-ब्राह्मण प्रतिपालन, मातृदेवों भव, वाक्यों में निष्ठा, प्रजापालन में तत्परता के प्रति राम की सहज अनुरक्ति है । तुलसीदास के राम समस्त पूर्व स्थापित सत्यों से उन्नत हैं । "राम बाह्य रूप ऋग्वेदीय "विराट पुरुष" की कल्पना से भी महान है ।"[47] तुलसी के बाद जन-चेतना को अपनी कविता से आन्दोलित करने वाला कोई प्रतिभा सम्पन्न जनकवि न हुआ अतः दरबारी कविता की धीरे-धीरे लोक कविता का रूप ग्रहण करती आई । केशवदास की रामचन्द्रिका राम लोकमंगल तत्वों की दृष्टि से दूर हैं । उनके राम राजदरबार की विशिष्ट मर्यादा में बंधे दर्पयुक्त राजपुत्र और बाद में राजा हैं । केशव के राम पर तुलसी का नहीं । वाल्मीकि रामायण और संस्कृत के राम नाटकों का ज्यादा प्रभाव है । रसिक भक्त कवियों की रचनाओं में सीताराम युगल सरकार की

विलासमयी झाकियाँ भक्तों की सेवा- अर्चा काल और विधि से भी संपृक्त माना गया है ।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में जो राम काव्य लिखे गए उनमें रामचरित उपाध्याय का "रामचरित चिन्तामणी, मैथिलीशरण गुप्त की साकेत, अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध" का वैदेही वनवास, बालकृष्ण शर्मा नवीन का "उर्मिला" डा० बलदेव प्रसाद गुप्त का साकेत संत, रामराज्य और नरेश मेहता का प्रवाद-पर्व, संशय की एक रात, शबरी आदि है । ऐतिहासिक और पौराणिक पात्रों के अविश्वसनीय रूपों, अलौकिक और चमत्कारी कार्यों के स्थान पर यथासंभव मानव चरित्र को नये परिप्रेक्ष्यों और नये सन्दर्भों से सम्पृक्त करके प्रस्तुत करना आधुनिक युग की महत्वपूर्ण विशेषता है । आधुनिक हिन्दी राम-काव्यों में मैथिलीशरण गुप्त के "साकेत" काव्य में प्राचीन एवं अर्वाचीन पद्धतियों के माध्यम से राम को प्रस्तुत किया गया है । उनके राम कतिपय अंशों में अति मानवीय अंशों के संवाहक रहे हैं । उनमें ईश्वरत्व का आभास प्राप्त होता है । "साकेत" और बालकृष्ण शर्मा "नवीन" "उर्मिला" लगभग एक साथ ही लिखे गये हैं । "नवीन" के राम भौतिकवाद और साम्राज्यवाद के परम विरोधी एवं विनाशक हैं । निराला ने "राम की शक्ति पूजा" में "राम" के मनोवैज्ञानिक और अन्तः संघर्ष पूर्ण व्यक्तित्व का काव्य चित्रण किया है । इस काव्य में निराला के व्यक्तित्व से काफी घुले मिले प्रतीत होते हैं ।

अयोध्या सिंह उपाध्याय ने "हरिऔध" के "वैदेही वनवास" में भगवान राम को लोकाराधक रूप में प्रतिपादित किया है । डा० बलदेवप्रसाद मिश्र ने "साकेत-सन्त" और "रामराज्य" में राम के विविध रूपों की अभिव्यक्ति की है । "साकेत सन्त" के राम आदर्श मानव हैं, देवता नहीं । आर्य - संस्कृति का अभ्युदय, अखंड भारत की सुरक्षा, दलित जातियों का उद्धार आदि युगीन

भावनाओं से राम का चरित्र ओत-प्रोत है । "राम - राज्य" में श्रीराम रामराज्य के संस्थापक एवं निदेशक मात्र हैं । नरेश मेहता ने "संशय की एक रात" में राम के बहुमुखी रूपों को स्थान दिया है । इस में राम को बुद्धिवादी दृष्टि से उनका मूल्यांकन प्रस्तुत किया गया है । आधुनिक हिन्दी कवियों ने राम को मनुष्य रूप में चित्रित करने में ही अपने काव्य - कौशल की सार्थकता मानी है । अतः युग-धर्म के अनुसार राम के व्यक्तित्व में आधुनिकता, वैज्ञानिकता और युगीन चेतना को मिश्रित करके चित्रित किया है ।

3·5 सीता :

आदिकवि के काव्य की नायिका सीता का व्यक्तित्व एक अत्यन्त प्रियदर्शन और प्रभावशाली व्यक्तित्व रहा है । सीता पराक्रम - प्रिय और महत्वाकांक्षी नारी है । पति के प्रति सीता की कामना है कि वह स्वयं अर्जित करके चक्रवर्ती का सार्वभौम पद प्राप्त करें तथा ब्राह्मणगण राजसूयाभिषेक न करें । सीता राम को चक्रवर्ती सम्राट के रूप में देखने के लिए अत्यन्त उत्कण्ठित होती है --

राज्यं द्विजातिभिर्जुष्टं राजसूयाभिषेचनम् ।
कर्तुमर्हति ते राजा वासवस्येव लोककृत् ।
दीक्षितं व्रतसम्पन्नं वराजिनधरं शुचिम् ।
कुरंगशृंगपाणिं च पश्यन्ती त्वां भजाम्यहम् ।।48

राम के प्रति उनका अगाध और उत्कट प्रेम जो राम के लिए पिता द्वारा वनवासाज्ञा सुनते ही सब कुछ क्षणमात्र में छोड़ पति के साथ जाने का निश्चय प्रकट करती है । पति से वियुक्त होने पर अयोध्या के गगनचुम्बी राजप्रसाद एवं उनके सजे हुए राजभवन, अयोध्या के समस्त ऐश्वर्य उन्हें तृण से प्रतीत होते हैं । सीता को वैभव से और पद से मोह है लेकिन वह केवल

पति के लिए और पति के साथ होने पर ही । पति को वनवासाज्ञा होते ही एक निःसंग योगी को भांति सीता के द्वारा कहे गए शब्द सदैव भारतीय संस्कृति में नारी आदर्श के प्राण बने रहेंगे --

यदि त्वं प्रस्थितो दुर्गं वनमद्येव राघव ।
अग्रतस्ते गमिष्यामि मृदनन्ती कुशकण्टकान् ।[49]

वाल्मीकि रामायण में सीता और राम के पारस्परिक सम्बन्ध स्वस्थ, सुखद और मधुर है क्योंकि सीता राम को अधिक प्रेम करती है । सीता के हृदय में राम के प्रति अगाध निष्ठा और सम्मान की भावना है । सीता सौन्दर्य - प्रिय है । उनका स्वभाव मृदु है और भीरु भी । क्षमा, उदारता, ममता और वात्सल्य जैसे उदात्त भाव भी उनके हृदय में है । एक भारतीय नारी होने के नाते, पूजा-अर्चना और सेवा - भावना के संस्कार उनमें बहुत गहन है । सीता-अतिथि - परायणा है । यही कारण है कि पति और देवर की अनुपस्थिति में भी वह रावण को पादार्घ्य आदि देकर उसका - यथोचित सत्कार करती है ।

तुलसीदास के "रामचरितमानस" की सीता एक अत्यन्त सुकुमारी, अद्वितीय सुन्दरी, स्वभाव भीरु राजपुत्री एवं जनक और सुनयना की प्राणोपम प्रिय कन्या के रूप में चित्रित है । सौन्दर्यांकन में तुलसीदास ने पर्याप्त नवीनता और मौलिकता को जन्म दिया है । तुलसीदास की सीता के चरित्र की एक विशेषता है । उसमें कुछ भी मर्यादा, शील, संकोच, विनय एवं शालीनता की अत्यधिक विकसित - वर्धित भावना है । सीता अपनी कोई भी इच्छा, कोई भी भावना अपने स्वाभाविक रूप में अभिव्यक्त नहीं कर पाती । पति-पत्नी का सम्बन्ध होते हुए भी, सीता अपने पति राम से भी पूर्णतया खुली हुई नहीं

है । पति के साथ भी सीता के सम्बन्ध औपचारिकता लिए हुए है । सीता अपने मन की जो प्रत्येक बात है उसे निःसंकोच होकर नहीं कह सकती । कुलवधू की लज्जा एवं मर्यादा ने उसके हाथ - पैरों में श्रृंखलाएँ पहना दी है । "रामचरित मानस" में भी "अध्यात्म रामायण" की भांति "माया-सीता" के हरण की कल्पना हुई है । सीता - हरण से कुछ दिन पहले राम के आदेश पर सीता राम की चरण वन्दना कर अग्नि में प्रवेश करती है और अपनी छायामूर्ति को पर्णकुटीर में छोड़ देती है ।

सीता और रावण का प्रत्यक्ष वार्तालाप भी "रामचरितमानस" में बताया गया है । तुलसी की सीता की पति में अनन्य और असीम निष्ठा है । वह स्वयं साकार पति - भक्ति है । सीता मानती है कि प्रिय वियोग के समान दूसरा दुःख संसार में नहीं है । पति के बिना स्त्री के प्रति स्वर्ग भी नरक-सा दुखपूर्ण है और इसके अलावा अन्य सभी स्नेह सम्बन्ध और नाते, पति के विरह में सूर्य के समान जलाने वाले होते हैं । तुलसी ने सीता को तत्कालीन अभिशप्त, शोषित और दमित नारीत्व का प्रतीक माना है । उन्होंने सीता में उनके युग की मर्यादा की श्रृंखलाओं में जकड़ी हुई पराधीन निःसत्व नारी का एक अत्यन्त वास्तविक चित्र प्राप्त हुआ है । जिसे तुलसी ने अपने आदर्शों का पुट देकर यथासम्भव एक महान रूप देने का सफल प्रयत्न किया है ।

सीता युगों से चले आए भारतीय नारीत्व की प्रतीक है । जिस - जिस रूप में भारतीय नारी का आदर्श बदलता आया है उसी रूप में सीता का चरित्र भी बदला आ गया है । विभिन्न युगों में चित्रित किया गया सीता का चरित्र परिवर्तित होते हुए स्त्रीत्व सम्बन्धी आदर्शों का एक चित्र हमारे समक्ष प्रस्तुत करता है । विभिन्न कवियों द्वारा किया गया सीता का चरित्र-

चित्रण, उस कवि के युग-विशेष में भारतीय स्त्रीत्व के क्या आदर्श का परिचायक है। इस काम में आधुनिक युग में नारी के रूप को सीता में दिखाया गया है। प्राचीनता से बढ़कर सीता पात्र का विकास बहुत तेज पकड़ी है। आधुनिक युग में एक एक काव्य में एक-एक तरह सीता के पात्र का चित्रण किया है। कुछ आधुनिक राम काव्यों में सीता को प्राचीनता की तरह आदर्श के रूप में दिखाये थे और कुछ काव्यों में क्रांतिकारिणी, सक्तिशाली, सबला के रूप में प्रस्तुत किये हैं।

आधुनिक राम काव्यों में रामचरित उपाध्याय की रामचरित चिन्तामणी, हरिऔध की वैदेही वनवास, राजाराम शुक्ल की "जानकी जीवन", मैथिलीशरण गुप्त की "साकेत" आदि में सीता को प्राचीन काव्यों के अनुसार ही चित्रित किया गया है। थोड़ा - सा परिवर्तन है लेकिन प्राचीन सीता की सीमाओं को पार करके नहीं है। श्रीमती राजेश्वरी अग्रवाल की सीता - समाधि, श्री रघुवीर शरण मिश्र की, "भूमिजा", श्री भारत भूषण अग्रवाल की "अग्निलोक" आदि में सीता को आधुनिक नारी के विचारों से स्थापित किया गया है।

"सीता - समाधि" में श्रीमती राजेश्वरी अग्रवाल जी वर्तमान समय में राज्य से परित्यक्ता सीता अर्थात् संस्कृति के संदर्भ में लिया है। सीता वनवास में वर्तमान परिस्थिति के पात्र में प्राचीन कथामृत को ढाला है। इस में सीता को संस्कृति और धर्म का प्रतीक माना गया है। इस काव्य में कवयित्री ने आहत हुई पत्नी के मान को सीता के माध्यम से श्रेष्ठता प्रदान करने का प्रयास किया है। रघुवीर शरण मिश्र ने "भूमिजा" में सीता की कथा को करुणा की कथा से स्थापित किया है। यह काव्य सीता के आंसू की उज्ज्वल कहानी है। यह काव्य सीता के वनवास जीवन की रचनात्मक कहानी है और इसके साथ नारी का सर्वोज्ज्वल चरित्र सीता में दिखाया गया है। श्री भारत भूषण अग्रवाल का काव्य "अग्निलोक" है। इस में सीता सोलह वर्ष के वनवास को

भोगने के पश्चात् अब अश्वमेध के समय पर अपनी निष्कलंकता की सफाई अयोध्या में देने के पक्ष में नहीं है । सीता की वाणी में नारी-जाति की मर्मान्तक पीड़ा सुनाई पड़ती है । सीता के उद्‌गारों में राम की निर्ममता, महत्वाकांक्षी प्रवृत्ति प्रजा पराङ्‌मुखता, साम्राज्यवादी विजय लिप्सा, आडम्बर पूर्ण समारोह संलग्नता आदि दूषित प्रवृत्तियों के प्रति आक्रोश दिखाई देता है ।

इस प्रकार अनेक कवियों ने राम - सीता के कथानक पर लेखनी उठाई है और अपनी कल्पना एवं भावना के अनुसार, अपने इच्छित रंगों से उसके चित्र को रंगा है । प्रत्येक कवि अपने काव्य की नायिका को सुन्दरतम एवं एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत करने की चेष्टा करता है । इसके अलावा यह भी एक ध्रुव सत्य है कि साहित्यकार अपने चारों ओर के वातावरण और जो कुछ वह स्वयं है, उससे अधिक कुछ नहीं लिख सकता । इन दृष्टियों को मद्‌दे नजर रखते हुए सीता पात्र को आधुनिक कवियों ने भिन्न रूपों में अभिव्यक्त किया है ।

3.6 लक्ष्मण :

प्राचीन राम काव्यों में जहाँ पर राम - सीता की चर्चा होती है वहाँ पर लक्ष्मण की चर्चा भी हुई है । लेकिन प्रधान पात्र के रूप में न तो प्राचीन काव्यों में और न तो आधुनिक काव्यों में चर्चा हुई है । वाल्मीकि रामायण में प्रधान रूप से लक्ष्मण और उर्मिला का विवाह, लक्ष्मण का रोष, उनका श्रीराम को बलपूर्वक राज्य पर अधिकार कर लेने के लिए प्रेरित करना, श्रीराम लक्ष्मण को समझाते हुए अपने वनवास में दैव को ही कारण बताना, लक्ष्मण की ओज भरी बातें, उनके द्‌वारा दैवका खण्डन और पुरुषार्थ का प्रतिपादन और उनका श्रीराम के अभिषेक के निमित्त विरोधियों से लोहा लेने के

लिए उद्यत होना , श्रीराम की आज्ञा से लक्ष्मण का सुहृदों से पूछकर और दिव्य आयुध लाकर वनगमन के लिए तैयार होना, पंचवटी में लक्ष्मण द्वारा सुन्दर पर्णशाला का निर्माण, कपटमृग को देखकर लक्ष्मण का संदेह, श्रीराम लक्ष्मण को समझा - बुझाकर सीता की रक्षा का भार सौंप कर उस मृग को मारने के लिए जाना , श्रीराम और लक्ष्मण के द्वारा सीता की खोज,

. श्रीराम और लक्ष्मण को मूर्छित देख वानरों का शोर, श्रीराम का सचेत होकर लक्ष्मण के लिए विलाप करना, लक्ष्मण और इन्द्रजीत की परस्पर रोष भरी बातचीत और घोर युद्ध और इन्द्रजीत का वध होना, लक्ष्मण सीता को रथ पर बिठाकर उन्हें वन में छोड़ने के लिए ले जाना, बड़े दुख से उन्हें उनके त्यागे जाने की बात बताना आदि प्रसंग वाल्मीकि रामायण में चर्चा की गई है ।

तुलसीदास के "रामचरितमानस" में भी इसी प्रकार के अंश मिलते हैं । श्रीराम लक्ष्मण सहित विश्वामित्र की यज्ञशाला में प्रवेश, लक्ष्मण मेघनाद युद्ध मेघनाद की तेजपूर्ण शक्ति लक्ष्मण की छाती में लगना अतः मूर्छा आना । हनुमान जी का सुषेण वैद्य को लाना और सञ्जीवनी के द्वारा लक्ष्मण का सजीव होना और लक्ष्मण रावण का युद्ध आदि प्रसंग तुलसी "मानस" में विद्यमान है ।

अध्यात्म रामायण में संभवतः लक्ष्मण के उपवास तथा जागरण का प्राचीनतम उल्लेख किया गया है । लक्ष्मण विश्वामित्र की मन्त्रदीक्षा का उल्लेख करते हैं कि जिसके बल पर वह चौदह वर्ष तक अन्न का त्याग कर सके । कृत्तिवास ने बालकाण्ड में भी लिखा था कि इस मन्त्रदीक्षा के फलस्वरूप लक्ष्मण उपवास कर सकेंगे और इन्द्रजीत का वध करेंगे ।[50] वाल्मीकि के आदिकाव्य में सीता- लक्ष्मण के संबंध का कोई विशेष ध्यान नहीं रखा गया था । जैनी रामायणों को छोड़कर

रामकथा साहित्य में लक्ष्मण को शताब्दियों से संयमी के रूप में देखा गया है ।

आधुनिक रामकाव्यों में भी रामचरित उपाध्याय की रामचरित चिन्तामणी, हरिऔध की "वैदेही वनवास", राजाराम शुक्ल जी की जानकी जीवन, श्रीमती राजेश्वरी तिवारी की "सीता - समाधि", रघुवीर शरण मिश्र की "भूमिजा" आदि काव्यों में लक्ष्मण के पात्र में नवीनता नहीं है । आधुनिक राम काव्यों में लक्ष्मण पात्र को लेकर काव्य रचने का अंश अब तक नहीं है । साकेत में गुप्त जी "उर्मिला" के प्रसंग पर लक्ष्मण की चर्चा करने का अंश मात्र प्रस्तुत है ।

3·7 उर्मिला :

वाल्मीकि ने अपने "रामायण" में उर्मिला का उल्लेख केवल विवाह प्रसंग में किया है । तुलसीदास के "रामचरित मानस" में इतना मात्र भी नहीं है । लेकिन प्राचीन राम काव्यों की तुलना से आधुनिक राम काव्योंमें उर्मिला की चर्चा पर्याप्त रूप से हुई है । पं॰ रामचरित उपाध्याय और हरिऔध जी ने उर्मिला की स्थिति के प्रति कारुण्य और आदर्श के प्रति केवल श्रद्धा व्यक्त की है । लेकिन मैथिलीशरण गुप्त जी ने "उर्मिला" पात्र को लेकर "साकेत" महाकाव्य की रचना की है । साकेत पूर्ण रूप से चरित्र प्रधान काव्य है । इस काव्य में उर्मिला का चरित्र चित्रण सभी प्रमुख पात्रों के बीच विकसित हुआ है । इसमें सभी पात्र उर्मिला के चरित्र विकास से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में सम्बन्धित हैं । अगर लक्ष्मण उर्मिला के चरित्र विकास में प्रत्यक्ष सहयोग देते हैं तो राम, सीता, भरत, कैकेयी, और सुमित्रा परोक्ष रूप से है । इस में भिन्न-भिन्न पात्रों का स्पर्श करता हुआ उर्मिला के चरित्र का विकास होता है ।

विशेष बात यह है कि साकेत में आकर सीता और राम की कहानी "ऊर्मिला" की बन गई है । इस काव्य की मुख्य कथा ऊर्मिला लक्ष्मण के संयोग वियोग की है । साकेत में "ऊर्मिला विषय की उपेक्षा को समाप्त कर उसके चरित्र की महिमा को अंकित किया गया है । इसके साथ ऊर्मिला को एक सुन्दर राजकुमारी, विनोदप्रिय है, वाक्पटु है, एक आदर्श पत्नी और वीर क्षत्राणी के रूप में अभिव्यक्त की गयी है । साकेत से प्रेरणा लेकर बालकृष्ण शर्मा "नवीन" ने "ऊर्मिला" के चरित्र को लेकर एक प्रबन्ध काव्य लिखा है । नवीन के ऊर्मिला की कथावस्तु भावों और विचारों में बहुत कुछ "साकेत" की पृष्ठभूमि जैसी है । नवीन जी की "ऊर्मिला" में साकेत की तुलना से विपुल विस्तार मिल जायेगा । अगर गुप्त जी ने ऊर्मिला को एक आदर्श पत्नी और वीर क्षत्राणी के रूप में प्रस्तुत किया तो नवीन जी ने उसे एक प्रेम की साधिका के रूप में अभिव्यक्त किया है । इस प्रकार इन दोनों कवियों और काव्यों में आपसी मेल-मिलाप दिखाई देती है ।

3·8 भरत :

भरत की वाल्मीकि रामायण एवं तुलसी के रामचरित मानस में पर्याप्त चर्चा हुई थी । वाल्मीकि रामायण में भरत का विवाह कुशध्वज की कन्या के साथ वरण, भरत का मित्रों के साथ अपने देखे हुए भयंकर दुःस्वप्न का वर्णन, पिता के परलोकवास का समाचार पाकर दुखी होना, श्रीराम के विषय में कैकेयी द्वारा उनका वनगमन के वृत्तान्त से अवगत होना एवं भरत का कैकेयी को धिक्कारना और उसके प्रति महान् रोष प्रकट करने का अंश भी प्रस्तुत है -

कुलस्य त्वमभावाय कालरात्रिरिवागता ।
अंगारमपगूह्य स्म पिता मे नावबुध्यवान् ॥ [51]

भरत का पिताके श्राद्ध में दान देना, राज्य लेने के लिए अनुचित बताकर अस्वीकार करना, भरत की वन यात्रा, श्रीराम के आश्रम पर जाना, भरत का उनसे राज्य ग्रहण करने के लिए कहना और श्रीराम का उसे इन्कार करना और अंत में भरत श्रीराम की चरण पादुकाओं को राज्य पर अभिषिक्त करके उन्हें निवेदनपूर्वक राज्य का सब कार्य करना और रावण के मृत्यु के पश्चात भरत का श्रीराम को राज्य लौटाना आदि महत्वपूर्ण प्रसंग प्रस्तुत हैं ।

तुलसीदास के "रामचरित मानस" में भी वाल्मीकि रामायण प्रसंग ही प्राप्त है । तुलसी - मानस में भरत के बाण से हनुमान का मूर्छित होना, का अंश द्रष्टव्य है --

देखा भरत बिसाल अति निसिचर मन अनुमानि ।
बिनु फर सायक मारेउ चाप श्रवन लगि तानि ॥ [52]

किन्तु आधुनिक राम काव्यों में भरत के चरित्र में तथा विकास हुआ है । ज्यादातर रामकाव्यों में आवश्यकता के अनुसार उनका चित्रण है । सिर्फ भरत चित्रण को लेकर श्री बलदेव प्रसाद मिश्र जी ने "साकेत सन्त" की रचना की है । इस काव्य की शुरुवात भरत और माण्डवी के विवाह के बाद प्रेमालाप से है । भरत का राज्य का भार संभालना, इसके पूर्व माता कैकेयी को फटकारना, भरत का राम की चरण पादुकाओं को लौटकर ग्राम-सुधार को अपना प्रधान लक्ष्य बनाना, हनुमान को राक्षस समझकर बाण से गिराने के अंश को भी जगह दी है । अतः मैं राम के अयोध्या लौटने पर राज्य भार वापस देने तक की कथा को इस में लिया गया है । इस में भरत का चरित्र चित्रण करने में मिश्र जी पर्याप्त सफल हुए हैं ।

3·9 माण्डवी :

राम काव्यों में उर्मिला के चरित्र के समान माण्डवी का चरित्र भी सर्वथा आधुनिक रहा है । वाल्मीकि रामायण में तो माण्डवी का वर्णन बहुत ही संक्षिप्त में हुआ है । तुलसीदास ने रामचरित मानस में माण्डवी का संकेत मात्र प्रस्तुत किया है ।

आधुनिक राम काव्यों में सर्वप्रथम माण्डवी को व्यक्तित्व प्रदान करने वाले कवि मैथिलीशरण गुप्त ही हैं । "साकेत" काव्य में राम के चौदह साल के लिए वन जाने पर भरत सन्यास लेते हैं तब माण्डवी की स्थिति सारी बहनों से दुर्भर रही है । अगर उर्मिला विरहणी है तो माण्डवी संयोगिनी होकर भी वियोगिनी का जीवन काटती है । गुप्त जी के पश्चात् डा0 बलदेव प्रसाद मिश्र ने "साकेत संत" में माण्डवी पात्र को अत्यन्तमहत्वपूर्ण स्थान दिया है । इस काव्य की शुरुवात भरत एवं माण्डवी के मिलन और आमोद के वर्णन से है । "साकेत सन्त" में मिश्र जी ने माण्डवी का वर्णन इस प्रकार किया है --

> सम्मुख है राकेश चकोरी पर न उधर निज नयन उठाये ।
> विकसी प्रभा प्रभाकर की है, पर न कमलिनी मोद मनाये ।
> था वसंत आँखों के आगे, पर कोकिल ही पिक का स्वर था ।
> अहह । माण्डवी को तो आहों का भरना भी वर्जित था ।[53]

कर्तव्य परायणता, सहिष्णुता, आत्म - संयम, सेवा माण्डवी के चरित्र के विशेष लक्षण हैं । अतः भरत माण्डवी में त्याग के कारण उसमें हिमालय जैसे व्यक्तित्व के दर्शन करते हैं । इस काव्य के अलावा पोद्दार रामावतार अरुण

कृत "विदेह" में भी माण्डवी की चर्चा हुई है । इस काव्य में माण्डवी तपस्या की मूर्ति है । इस प्रकार काल क्रम के अनुसार माण्डवी का चरित्र विकास हुआ है ।

3·10 शबरी :

वाल्मीकि ने अपने रामायण में शबरी का चित्रण तपोनिष्ठा के रूप में किया था । इस में श्रीराम और लक्ष्मण का पम्पासरोवर के तट पर मतंगवन में शबरी के आश्रम पर जाना, उसका सत्कार ग्रहण करना एवं उसके साथ मतंगवन को देखना, शबरी का अपने शरीर की आहुति दे दिव्य धाम को प्रस्थान करने का अंश मात्र है । अगर शबरी का भक्तिमय रूप और विशिष्ठता को देखना हो तो तुलसी के "रामचरित मानस" का अवगाहन करना आवश्यक है । इसमें राम - शबरी मिलन का प्रसंग आरण्य काण्ड में आया है । राम शबरी के आश्रम में पहुँचते हैं तो शबरी उनका स्वागत करती है । उसे "नवधा भक्ति" का उपदेश देते हैं । वह राम से अपनी नीच जाति की बात कहती है --

जाति हीन अघ जन्म महि मुक्ति कीन्हि असि नारि ।
महामंद मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहि बिसारि ॥ [54]

तुलसी के "मानस" में शबरी राम को बेर नहीं खिलाती है, कन्दमूल एवं फल खिलाती है । राम शबरी से सीता के सम्बन्ध में पूछते हैं । तब शबरी राम को पम्पा सरोवर जाने और सुग्रीव से दोस्ती करने को कहती है ।

आज प्रगतिशील युग में शबरी का आख्यान जितना प्रासंगिक है उतना राम - काव्य के अन्य गौण पात्रों में किसी का नहीं है । शबरी चरित्र मे

हिन्दु समाज की सहिष्णुता, उदारता का साक्षात्कार कराया है । यह पात्र समूची राम कथा के सामाजिक धरातल के यथार्थ से जुड़ी हुई है । श्री रत्न चन्द्र शर्मा कृत "शबरी" सन् 1961 में प्रकाशित हुई है । इस में श्रमणि शबरी के रूप सौन्दर्य, वैराग्य एवं भक्ति, त्याग और करुणा का वर्णन किया है । उसके पश्चात मायादेवी का "शबरी" खण्ड काव्य संवत् 2020 में प्रकाशित हुआ है । इस में शबरी द्वारा राम दर्शन भी मूल कथा कुछ मौलिक प्रसंगों के साथ प्रस्तुत की गयी है । इसमें अछूतोद्धार, नारी-शिक्षा, समाज में विशिष्ट स्थान के प्रति अभिव्यंजना है ।

सन् 1977 में नरेश मेहता की "शबरी" प्रकाशित हुई है । इस में वर्ण- संघर्ष का परिचय है । शबरी शूद्रा है, अस्पृश्य है साथ ही वह एक नारी भी है । मेहता जी ने इस काव्य के द्वारा व्यक्ति अपने कर्म द्वारा जाति, धर्म, वर्ण आदि से उपर उठकर पूज्य बन सकने की बात प्रतिपादित किया है । इस काव्य में भक्ति के साथ युग चेतना भी प्राप्त है ।

3.11 शम्बूक :

सर्व प्रथम वाल्मीकि रामायण के उत्तर काण्ड में शम्बूक - प्रसंग चर्चित है । वाल्मीकि ने अपने रामायण में श्रीराम के द्वारा शम्बूक वध को प्रकट किया है । शम्बूक अपना परिचय राम से इस प्रकार देता है कि --

> न मिथ्याहं वदे राम देवलोकजिगीषया ।
> शूद्रं मां विद्धि काकुत्स्थ शम्बूकं नाम नामतः ।[55]

अगर उत्तरकाण्ड को प्रक्षिप्त मान लिया जाए तो भी अन्य कई ग्रन्थों में इसका वर्णन आया है । इस कथा का वर्णन पद्मपुराण, महाभारत, रघुवंश,

उत्तर राम चरित और आनन्द रामायण आदि में प्रस्तुत है । जैन राम-काव्यों में "पउम चरियं" और कन्नड और उड़िया भाषा की कई रामायणों में इस कथा का वर्णन है । किन्तु इन में शम्बुक को जम्बु कुमार, जम्बु माली और जयासुर आदि के नाम से पुकारा गया है । शम्बुक को चन्द्रनखा या शूर्पणखा का पुत्र माना गया है । उसका वध राम से न दिखाकर लक्ष्मण के द्वारा दिखाया गया है । तुलसीदास ने "मानस" में इस प्रसंग की चर्चा तक नहीं की ।

आधुनिक युग में जगदीश गुप्त ने "शम्बूक" की पुरानी कथा को नये संदर्भों में रखकर देखा है । गुप्त जी का उद्देश्य है कि हिन्दी राम काव्यों में पहली बार शम्बूक का पक्ष लेकर लिखा गया है जो अपने युग के संदर्भ में उपयुक्त है ।

3•12 रावण :

वाल्मीकि रामायण के अनुसार रावण वैदिक संस्कृति में दीक्षित कर्मनिष्ठ ब्राह्मण था। रावण परम तपस्वी पुलस्त्य का नाती था । उसके माता-पिता का नाम कैकेसी -विश्रवा मुनी था । रावण का चरित्र वाल्मीकि रामायण एवं रामचरितमानस में पर्याप्त रूप से वर्णित है । जहाँ पर राम-सीता के चरित्र का वर्णन है वहाँ पर रावण की चर्चा अनिवार्य रूप से आ जाती है ।

विभिन्न कवियों ने अपने काव्यों में भिन्न प्रकार से रावण की चर्चा की है । महाकवि भास के "प्रतिभा" नाटक में रावण सांगोपांग वेद, मानवीय धर्मशास्त्र, माहेश्वर योगशास्त्र, बार्हस्पत्य अर्थशास्त्र और प्राचेतस श्राद्धकल्प का विद्वान बताया गया है । मुरारि कवि के "अनर्घ राघव" नाटक में है । संस्कृत

वाङ्मय रावण की शक्तिमत्ता और पराक्रम भी शौर्य गाथा से परिपूर्ण कहा गया है। क्षेमेन्द्र के महाकाव्य "दशावतार चरित" में उसमें विश्वेश्वर होने की अभिलाषा व्यक्त की गई है। तुलसीदास के रामचरितमानस में रावण के क्रोध को पर्याप्त उभार प्राप्त है। जैन रामायण एवं आदिवासियों की रामकथा में लक्ष्मण रावण का वध करते हैं। अध्यात्म रामायण में रावण की नाभि में अमृतकुण्ड रहने की बात स्पष्ट की गयी है। विभीषण से यह रहस्य जानकर राम ने आग्नेय बाण से उसे सुखाया था। आचार्य केशवदास की "राम चन्द्रिका" में रावण के विभिन्न सम्वाद लोकप्रिय हुए थे। माइकेल मधुसूदन दत्त ने "बंगला काव्य" में रावण - पक्ष के प्रति सहानुभूति व्यक्त की है।

आधुनिक रामकाव्यों में भी रावण का आवश्यकता के अनुसार वर्णन किया गया है। लेकिन सिर्फ रावण को प्रधान पात्र बनाकर काव्य बहुत ही कम है। श्री हरदयाल सिंह ने हिन्दी में "रावण महाकाव्य" लिखा है।

3.13 कैकेयी :

कैकेयी के सम्बन्ध में वाल्मीकि रामायण और रामचरितमानस में आवश्यक चर्चा की गयी है। इन दोनों के अलावा प्राचीन काव्यों में अधिकांश काव्यों में कैकेयी का वर्णन देखा जाता है। विशेष रूप से कैकेयी के वरों की संख्या और उनको प्राप्त करने के ढंग के विषय में भी पर्याप्त विभिन्नता पाई जाती है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार देवासुर युद्ध में दशरथ, इन्द्र के लिए शम्बासुर के विरुद्ध युद्ध करते हैं, तब दशरथ आहत होकर कैकेयी के सहयोग द्वारा रणभूमि से हटाये जाते हैं। अतः कैकेयी दशरथ से दो वर पाती है। इन दोनों वरों के बल पर ही भरत के लिए राज्य एवं राम के लिए वनवास मांगती है। इस तरह बहुत से ऐसे वृत्तान्त भी मिलते हैं जिनके अनुसार कैकेयी ने देवासुर युद्ध में दशरथ के रथ का अक्ष टूटा हुआ देखकर उसमें अपना हाथ रखा।

ये ब्रह्मपुराण, पद्मपुराण, अध्यात्म पुराण, आनन्द रामायण में दृष्टव्य है । आनन्द रामायण के अनुसार एक मुनि ने बालिका कैकेयी की सेवा से संतुष्ट होकर उसे यह वरदान दिया था कि समय पड़ने पर तुम्हारा हाथ वज्रकठिन बनेगा ।[56]

आदिकवि वाल्मीकि ने कैकेयी की दुष्टता और कुटिलता का स्पष्ट शब्दों में वर्णन किया है । चित्रकूट की यात्रा करते समय राम आशंका व्यक्त करते हैं कि कैकेयी नहीं भरत को राज्य दिलाने के लिए दशरथ के प्राण न ले और कौशल्या, सुमित्रा से विष न खिला दे --

सा हि देवी महाराज कैकेयी राज्यकारणात् ।
अपि न च्यावयेत् प्राणान् दृष्ट्वा भरतमागतम् ।।[57]

x x x

क्षुद्र कर्मा हि कैकेयी द्वेषादन्यायमाचरेत् ।
परिदद्यादि धर्मज्ञ गरं ते मम मातरम् ।।[58]

वाल्मीकि रामायण में कैकेयी के दोष - निवारण का प्रयत्न किया गया है ।[59] आनन्दरामायण, रामचरितमानस आदि काव्यों में भी कैकेयी का दोष सरस्वती पर लगाये जाने का प्रसंग प्रस्तुत है ।

आधुनिक रामकाव्यों में भी कैकयी को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है । कैकेयी को प्रधान पात्र बनाकर काव्य रचे गये हैं । उनमें केदारनाथ मिश्र, "प्रभात" कृत कैकेयी, राधेश्याम द्विवेदीजी कृत कल्याणी कैकेयी श्रीमणिरामपुर शर्मा कृत कैकेयी आदि हैं ।

विशेषकर प्रभात की "कैकेयी" काव्य से प्रतीत होता है किकवि ने युग की विशिष्ट प्रवृत्ति के आधार पर ही काव्य-सृजन किया है । प्रभात की "कैकेयी" में कैकेयी राम के वनवास का वरदान स्वार्थवश नहीं राष्ट्रहित की कामना से मांगती है । कवि ने कैकेयी को एक वीर क्षत्राणी, आदर्श पत्नी, अनुकरणीय माता के रूप में दिखाया है ।

श्री राधेश्याम द्विवेदी का एक मात्र काव्य "कल्याणी कैकेयी" सन्. 1950 में प्रकाशित होने के कारण प्रगतिवादी युग की रचना सिद्ध होती है । इस में कवि ने परम्परित राम-कथा को तो कुछ ही पदों में लिखा है । लेकिन इस में कैक {कैकेयी - पिता} द्वारा से विवाह से पूर्व ही कैकेयी - पुत्र को उत्तराधिकारी बनाने का पण लेना कवि की नवीनता का परिचायक है । शेषमणिरायपुरि शर्मा की कैकेयी खण्ड - काव्य की कथा का आरंभ कैकेयी के रोष से होता है । अयोध्या से चित्रकूट तक की यह कथा है । मणी जी की कैकेयी उग्र है, साहसी है, रणचण्डी भी है । इस प्रकार अनेक दिशाओं से उन्होंने कैकेयी चरित्र का विकास किया है ।

4. भौगोलिक दृष्टि:

विश्व में प्रकृति मानव-मन को युग - युगान्तर से आकर्षित करती चली आई है । इसको साहित्यकारों ने अपने काव्यों में प्रदर्शित किया है । प्रकृत एवं मानव का सम्बन्ध अभिन्न है । ये पुरातन होते हुए भी चिर नवीन हैं । मानव का जीवन एवं उसका कार्य-कलाप भौगोलिक अंशों से अनेक रूप में प्रभावित है । मानव अपने भावों का प्रतिबिम्ब प्रकृति के विभिन्न दृश्यों में देखा करता है । प्रकृति के विभिन्न अंग और रूप हैं - प्रभात, संध्या, दिवस, रात्रि, अन्धकार,

चाँदनी, सागर, पर्वत, निर्झर, सरिता एवं षट्ऋतुओं के परिवर्तनशील दृश्य है। प्रस्तुत आधुनिक राम काव्यों में भौगोलिक अंशों का चित्रण किया गया है किन्तु प्राचीन रामकाव्यों की तुलना से आधुनिक काव्यों में भौगोलिक दृश्यों का चित्रण कम दिखाई देता है।

4•। उपदेश ग्रहण :

प्रकृति मनुष्य के विचार - विनिमय का माध्यम का काम करती है। द्विवेदी युग में नैतिक शिक्षा का प्राधान्य होने के कारण प्रकृति द्वारा भी उपदेश दिये जा रहे हैं। इस के अन्तर्गत पं• रामचरित उपाध्याय की रामचरित चिन्तामणी, मैथिलीशरण गुप्त की "साकेत", हरिऔधजी की "वैदेही वनवास" बालकृष्ण शर्मा "नवीन" की "उर्मिला" आदि काव्यों में मिल जाता है। रामचरित उपाध्यायजी कहते हैं•••••

कामासक्त प्रमाद नींद में जो सोता है,
पराधीन वा देश बलिकृत वह होता है।
अन्यायी जन जहाँ जिसे दुर्बल पाते हैं,
उसका ही सर्वस्व पहुँचकर अपनाते हैं।
वासन्ती के साथ में जिस वसन्त ने सुख किया,
अनुज । उसी को ग्रीष्म ने आकर चौपट कर दिया ।[60]

पं• रामचरित उपाध्याय की "रामचरित चिन्तामणी" में इस प्रकार की प्रवृत्ति सर्वाधिक पाई जाती है। जनकवाटिका, चित्रकूट, पंचवटी, पम्पासर, प्रश्रवण गिरि आदि स्थानों एवं हेमन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद आदि ऋतुओं के वर्णन में प्रकृति का उपदेशात्मक लक्षण दृष्टव्य है।

4·2 वैज्ञानिकता :

भौगोलिक अंश मनुष्य को ज्ञान जिज्ञासा का मूल बिन्दु है । इसलिए आधुनिक राम काव्य में भी कहीं - कहीं वैज्ञानिक सिद्धान्तों का स्पष्टीकरण है । हरिऔधजी में यह लक्षण पर्याप्त है....

मां बोली - वे क्यों जल में मुंह देखते,
जो है ज्ञान - रहित जो जड़ता - धाम है ।
है छाया - ग्राहिणी - शक्ति विमलाम्बु में,
तरु प्रतिबिम्बित करण उसी का काम है ।[6]

इस पद में वैज्ञानिक सिद्धान्त का उल्लेख है । जल में छाया ग्राहिणी शक्ति होती है, इसी कारण वृक्ष उसमें प्रतिबिम्बित होता है । आधुनिक युग में मानवपूर्ण रूप से भौगोलिक तत्वों पर निर्भर है । यह लक्षण सभी काव्यों में दृष्टिगोचर नहीं होता है । साकेत, रामचरित चिन्तामणी जैसे काव्यों में प्राप्त होता है ।

4·3 मानवीय भावना :

मनुष्य जिस प्रकार मन में सोचता है उसी प्रकार के लक्षण प्रकृति में दिखाई देता है । जैसे प्रकृति का मानव दुःख में दुःखी एवं सुख में सुखी-सा द्रष्टव्य है । संयोग में आह्लाद, वियोग में दुःखी अनुभव होते हैं । "साकेत" में ऊर्मिला के वियोग में प्रकृति भी ऐसी ही है...

वह कोइल, जो कूक रही थी, आज हूक भरती है,
पूर्व और पश्चिम की लाली रोष - वृष्टि करती है ।

- लेता है निश्वास समीरण, सुरभि धूल धरती है,
उबल सूखती है जलधारा, यह धरती मरती है ।[62]

डा० बलदेव प्रसाद मिश्र के "साकेत - सन्त" में भी देखा जा सकता है ...

हजारों दृग - तारे निज खोल, रो रहा था आकाश अडोल ।
हृदय में ले अवनी को दाह व्यथित थी स्वतः अनिल की आह ॥[63]

इस में भरत की मनोव्यथा के समय प्रकृति भी व्यथित दिखाई देती है । अयोध्यासिंह उपाध्यायजी के "वैदेहीवनवास" के राम को सीता के वियोग में गोदावरी अश्रु - सिक्त वियोग विधुरा के समान दर्शाती है....

कल निनादिता - केलिरता - गोदावरी ।
बनती रहती थी जो मुग्धकरी बड़ी ।
दिखलाती थी उस वियोग - विधुरा - समा ।
बहा वहा आंसू जो भूपर हो पड़ी ।[64]

बालकृष्ण शर्मा "नवीन" जी ने ऊर्मिला - लक्ष्मण के मिलन के समय प्रकृति को रास - प्रक्रिया में परिचालित दिखाई है...

निशाएं नाची दे - दे ताल,
दिवस नाचे ले कर करवाल,
उषाएं नाची हो बेहाल,
नचीं सन्धायें होकर लाल
रास - मण्डल परिचालित हुआ ।[65]

वस्तुत: मानव की स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि वह अन्य वस्तुओं को भी उसी में देखना चाहता है, जिस में वह स्वयं होता है ।

आधुनिक राम काव्यों में भौगोलिक वर्णन की प्राय: सभी उपलब्ध प्रणालियाँ मिल जाती है । इस के सम्बन्धित कवियों में रामचरित उपाध्याय, हरिऔध, नवीन, गुप्त, निराला, बलदेव प्रसाद मिश्र जैसे कवि है । भौगोलिक दृश्यों में नगर - वर्णन, प्रासाद वर्णन, ग्राम वर्णन, आश्रम वर्णन, उत्सव वर्णन का पर्याप्त स्थान आधुनिक राम काव्यों में दिया गया है । किन्तु प्राचीन रामकाव्यों से कम है । आज के काव्यों में भौगोलिकता कम आधुनिकता अधिक है ।

5. राष्ट्रीयता एवं अंतराष्ट्रीयता की दृष्टियाँ :

रामकाव्य में राष्ट्रीयता का अंश एक अत्यन्त व्यापक विषय रहा है । भारत देश में हर भाषा में और हर प्रदेश की राम काव्य कृतियाँ उपलब्ध है । सिर्फ भारत में ही नहीं विदेशों में भी राम कथा प्रचलित रही है । राम कथा पर अब तक सैकड़ों की संख्या में जो काव्य कृतियाँ लिखी गई है और इसका क्रम जारी भी है । इन काव्यों में "वाल्मीकि रामायण" एवं "रामचरितमानस" सर्वाधिक लोकप्रिय बन गयी है । रामकथा विश्व की लोक संस्कृतियों के वैविध्य से सजा संवरा है । इस प्रसंग पर श्री मैथिलीशरण गुप्त जी का कथन प्रस्तुत करना समीचीन होगा ....

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है,
कोई कवि बन जाय, सहज सम्भाव्य है ।[66]

राम की कथा बहुत ही अनन्त है इसलिए हम जितने रूपों में चाहे इसका स्मरण या रूप दे सकते हैं। इसका कारण ये है कि राम का सद्रूप लोकमानस का अंश माना जाता है। अतः वाल्मीकि ने अपने रामायण में मनुष्यतत्त्व का, अध्यात्म रामायण में दार्शनिक तत्त्व एवं रामचरितमानस में भक्ति रूप को दिया गया है।

राम कथा के अनेक पात्र भी राम के साथ महनीय बन गये हैं। इस कथा के एक-एक पात्र महाकाव्य या खण्ड काव्य की विषय वस्तु बना रहे हैं। इस में लक्ष्मण, भरत, हनुमान, बालि, मेघनाद, रावण, कैकेयी, सीता, अहिल्या, त्रिजटा पर रचे गये प्रबन्ध या खण्ड काव्य हमें उपलब्ध होते हैं।

आज राष्ट्रीयता या राष्ट्रीय एकता हमारी राजनीति का महत्त्वपूर्ण अंश बन गई है। यथा हमारा सम्पूर्ण जीवन ही राजनीतिमय बनते जा रहा है। हमारे धर्म, सम्प्रदाय, भाषा, प्रादेशिक संगठन, जाति आदि तत्त्व हमारी राष्ट्रीय एकता को छिन्न-भिन्न कर राष्ट्र की शक्ति को कमजोर बना रहे हैं। राष्ट्रीय चेतना राम के जीवन एवं उनके द्वारा किये गये कार्यों में निहित है। राम के राजधर्म में ही राष्ट्रीय एकता गुथी रही है। राम का हर कार्य मर्यादा से निहित है। तुलसीदास को राष्ट्रवादी चिंतक के रूप में लिया जाता है। तुलसी का समय था कि जब भारत में विदेशी शासन के कारण राजनीतिक अस्थिरता एवं धर्म और समाज में विसंगतियाँ थी। यह राष्ट्र को विखण्डित एवं लोकमानस को मर्माहत करके दिग्भ्रमित की थी। उस स्थिति में तुलसीदास ने संस्कृति, समाज धर्म एवं भाषा को एक आधुनिक अर्थ स्थापित किया है। जनता में राष्ट्रवादी चेतना को जगाने के लिये धर्म में समन्वयवादी नीति का विधान स्थापित किया है। उस समय भारत देश धर्म

कडिों में विभाजित है । भाषा, जातपात, प्रदेशों, राजाओं के साथ-साथ विदेशी आततायियों के क्रूर जड़नों में ग्रसित रहा था । तब तुलसीदास ने राम के महिमामय आदर्श व्यक्तित्व के द्वारा राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाने का सफल प्रयत्न किया ।

मानस में अयोध्या कांडसमाप्त होने तक जनता राष्ट्रीय चेतना की एकता में अपने नैन खोलती है । सामन्तशाही जनवादी भावना से वन वन भटकती हुई नर - वानर, ऊँच-नीच , छोटा-बड़ा गरीब-अमीर, राजा-रंक का भेद मिटाकर लंका तक पहुँच जाते हैं । यह राष्ट्र प्रेम ही था कि वर्ग भेद को भूल कर जटायु सीता को बचाने के लिये महाबलि रावण से जूझ जाता है...

सीते पुत्रि करसि जनि त्रासा,
करहुं जातुधान कर नासा ॥ [61]

इस प्रकार राष्ट्रीय एकता राम के विभिन्न कार्यों से अभिव्यक्त हुई है । जैसे राजा दशरथ के आदर्श परिवार, राम - भरत के भ्रातृत्व की उच्चता, हनुमान, लक्ष्मण, निषाद की समर्पण शीलता एवं सीता का आदर्श पत्नीत्व और राजा एवं प्रजा के आदर्श संबंधों को व्यास्थापित कर संस्कृति को युग-युगीन स्थायित्व एवं विकास के लिए मार्ग सुगम किया है ।

आधुनिक रामकाव्य में राष्ट्रीयता का अंश पर्याप्त रूप में प्राप्त है । इन काव्य में भारत के समृद्ध और गौरवपूर्ण अतीत एवं वर्तमान स्थिति का चित्रण किया गया है । हमारी संस्कृति , वेश-भूषा, धर्म, नाम, कर्तव्य आदि के प्रति निष्ठा और बाह्य-अत्याचारों के प्रति विरोध की चेतना करने को

इच्छा प्रकट हुई है । इन काव्यों में देश-प्रेम और देश सेवा की शिक्षा दी गई है ।

5•1 देश प्रेम :

पं• रामचरित उपाध्याय ने देश - प्रेमी को पुरुषोत्तम और सकल गुणों को खान कहा है•••••

जन्म भूमि में प्रीति बनी रहती है जिसकी
कर सकता है कौन बड़ाई कविवर उसकी ।
पुरुषोत्तम है वही, वही है सकल गुणाकार,
देशाराधन किया जिन्होंने चित्त लगाकर ॥[68]

श्री मैथिलीशरण गुप्त ने शुद्ध राष्ट्रीयता का स्वरूप प्रत्यक्ष करते हुए अपने देश पर अत्याचार करने वालों को चेतावनी देते हुए कहा ••••

भरत खण्ड का द्वार विश्व के लिए खुला है,
भुक्ति-मुक्ति का योग जहाँ पर मिला जुला है ।
पर जो इस पर अनाचार करने आवेंगे,
नरकों में भी ठौर न पाकर पछतावेंगे ॥[69]

अयोध्यासिंह हरिऔधजी ने देश-हित मनुष्य के वैयक्तिक जीवन में अत्यधिक महत्ता भी प्रतिपादित की है । देशहित के सम्मुख व्यक्ति बड़े से बड़ा त्याग कर सकता है । यहाँ तक कि देश - रक्षार्थ अपने प्राणों की भी बलि चढ़ाने में पीछे नहीं हटना चाहिए••••

जहाँ लाभ प्रद अंश अधिक पाया जाता है ।
थोड़ा क्षति का ध्यान वहाँ कब हो पाता है ।
जहाँ देश हित प्रश्न सामने आ जाता है ।
लाखों सिर अर्पित हो मरना दिखलाता है ॥[70]

बालकृष्ण शर्मा "नवीन" जी ने भी इसी प्रकार अत्याचारी विदेशियों पर अपना आक्रोश व्यक्त कर राष्ट्र प्रेम का समर्थन किया है....

स्वर्गादपि गरीयसी प्यारी, जन्मभूमि का पल्ला,
खींचा है दुष्टों ने, बोला है स्वदेश पर हल्ला,
कौन हृदय है जो कि न उबले निज समाज की क्षति में ?
कौन आँख है देख सके जो माँ की इस दुर्गति में ?[71]

इसी प्रकार डा० बलदेव प्रसाद मिश्र ने प्रादेशिकता, साम्प्रदायिकता आदि की संकुचित भावनाओं को दूर कर राष्ट्रीय एकता पर जोर दिया है । भारत वर्ण, वेष, वाणी, रहन-सहन आदि विभिन्नताओं के अनेक रंगों से भरा हुआ है । इसके आन्तरिक मूल में एक सांस्कृतिक चेतना विद्यमान रही है । अतः कवि चाहते हैं कि जनता अपने क्षुद्र मनोभाव को त्याग कर राष्ट्र-हित से प्रेरित होकर काम करें । इसलिए व्यक्ति के स्वार्थ में राष्ट्र का स्वार्थ श्रेष्ठ माना गया है । बड़े हित के लिए छोटे हित का त्याग देना उचित माना जायेगा....

यदि हो विरोध राष्ट्र स्वार्थ में व्यक्ति - स्वार्थ में
तो राष्ट्र हित में व्यक्ति-हित का स्वार्थ त्याज्य है ।। [72]

नरेश मेहता ने भी "संशय की एक रात" में सार्वजनिक रूप देने के लिए कहा है । राम के इस खण्डित व्यक्तित्व को इस द्वन्द्व को कवि ने समूह के विवेक से सम्भालने की सलाह दी है । वे निजी संशय को सामूहिक निर्णय के विकल्प में बदल देते हैं । वे कहते हैं....

अब मैं निर्णय हूं
सब का
अपना नहीं
x x x
क्यों कि मैं अब निर्णय हूं
व्यक्ति नहीं । [73]

इस प्रकार राष्ट्रीयता में देश प्रेम से संबंधित उदाहरण प्राचीन राम काव्य की तुलना से आधुनिक राम काव्य में ढेर सारे मिल जाते हैं । देश प्रेम के उदाहरण रामचरित चिन्तामणि , भूमिजा, उर्मिला, सीता समाधि, जानकी जीवन, प्रवादपर्व आदि काव्यों में भरे पड़े हैं । राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में पांचवे अध्याय में रामराज्य के अन्तर्गत विस्तार रूप से चर्चा हुई है ।

विश्व कल्याण के लिए संकुचित राष्ट्रीयता के स्वार्थों का त्याग और अपने राष्ट्र की प्रगति का स्वस्थ चिन्तन ही राष्ट्रीयता की भावना को सम्माननीय करता है । आधुनिक राम-काव्य में राष्ट्रीयता का समर्थन किया गया है । राष्ट्र के प्रति अपनत्व की भावना को राष्ट्रीयता कहते हैं ।

राष्ट्रीयता को विभिन्न प्रकार के मत से व्यक्त किया गया है । उस में महादेवी वर्मा ने राष्ट्रीयता को संज्ञा देते हुए लिखा -- "अपने विशेष प्राकृतिक परिवेश से किसी मानव समूह के काल सिद्ध आत्मीय तथा रागात्मक सम्बन्ध को शासन परक स्वीकृति ही उसको राष्ट्रीयता की संज्ञा पा लेती है"।[74] राष्ट्रीयता को भावना राजनैतिक स्वतन्त्रता के बिना भी सदा राष्ट्रवासियों के मन में रहती है । डा० नगेन्द्र के विचार में "वस्तुतः व्यक्ति का "स्व" से "पर" की ओर उन्मुख होना ही राष्ट्रीयता का परम सिद्धान्त है । एक के हित में सबके हित का होना ही राष्ट्रीयता है । अतः जब मनुष्य के राग का विस्तार होता है तो वह अपने व्यक्तित्व से परिवार, परिवार से ग्राम, ग्राम से नगर, फिर प्रदेश, देश के इसके आगे विश्व तक व्यापक हो जाता है । यह वास्तव में "स्व" का विस्तार है, निषेध नहीं ।"[75]

5·2 अंतर्राष्ट्रीयता :

स्वस्थ एवं शुद्ध राष्ट्रीयता का अन्तर्राष्ट्रीयता से कोई विरोध नहीं होता है बल्कि वह अन्तर्राष्ट्रीयता का सोपान बन जाती है । अतः हर व्यक्ति को अन्तर्राष्ट्रीय धरातल पर अपने "स्व" का विस्तार करना चाहिए.....

हे जग के नागरिक सभी हम सब जग भर यह अपना है ।
सीमित देश विदेश-कल्पना, मिथ्या, भ्रम का सपना ॥[76]

विश्व में हर व्यक्ति एवं राष्ट्र को अपनी रक्षा और विकास करने का अधिकार रहता है । राष्ट्र के लिए व्यक्ति और विश्व के लिए राष्ट्र के स्वार्थों का त्याग सदा आवश्यक है । आधुनिक राम्काव्यों में राष्ट्रीयता एवं अन्तर्राष्ट्रीयता के इसी समन्वय का जय बन गया है । इस प्रकार के

विचारों की समस्त "मानवता की कल्याण की कामना की गई है ....

फूली रहती सदा मनुजता की फुलवारी ।
होती उसकी सरस सुरभि त्रिभुवन की प्यारी ॥[77]

आधुनिक राम-काव्य में भारत के प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों के प्रति आस्था के साथ-साथ नवयुग की चेतना का विन्यास प्राप्त होता है ।

राम कथा ने एशिया के जन - जीवन में गहरी छाप डाली है । नेपाली भाषा में रामायण का अनुवाद "भानुरामायण" के रूप में मिलता है । नेपाली भाषा में गोकुलचन्द्र गौतम ने "मानस" का अनुवाद प्रदान किया है । हमारे पड़ोसी देश श्रीलंका में भी रामकथा की महत्ता होना तो स्वाभाविक ही है । सी॰ डॉन बैस्टियन ने रामायण का सिंहली अनुवाद प्रस्तुत किया है । सन् 462 में कैंवय ने "दशरथ निदान" के आधार पर चीनी भाषा में दूसरा अनुवाद किया है । मलेशिया में 14वीं , 15वीं शताब्दी के मध्य "हिकायत श्रीराम" की रचना हुई थी । थाइलैण्ड में रामायण का रूपांतर "रामकवेन" के नामसे प्राप्त होता है । इस प्रकार एशिया में अनेक स्थानों पर रामकथा मिल जाती है ।

राम कथा ने अनेक देशों को रमाया है । रामकथा शैव-बौद्ध-जैन राम-कथाओं से भी प्रभावित हुई है । उस कथाओं पर कम्बन् रामायण के साथ ही साथ हर देश की राजनैतिक परिस्थितियों का भी गहरा प्रभाव रहा है । राम के माध्यम से विभिन्न देशों और जातियों के समानांतर सांस्कृतिक अनुभवों की एक झांकी पाकर हमें उल्लासमय का अनुभूत सत्य प्राप्त होता है । हमारे राम किसी एक के नहीं है सबके हैं । रामकी कथा तो राम से भी बड़ी मानी जाती है । अतः रामकथा विश्व समन्वय की भूमिका प्रशस्त करने में सफल हुई है ।

संदर्भ सूची

1• साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, पृ• 62

2• प्राच्य धर्म और पाश्चात्य विचार - डा0 सर्वेपल्लि राधाकृष्णन, पृ•52

3• मनुस्मृति , 1-14

4• There is nothing but minds, we are expressions of the one mind, body is only a mortal belief, as a man thinking so is he"-

W James - "Varieties of Religions experience", page - 104

5• "प्राच्य धर्म और पाश्चात्य विचार" - डा0 राधाकृष्णन, पृ• 77

6• रामचरित चिन्तामणि , रामचरित उपाध्याय, पाँचवाँ, पृ• 35

7• वही, सातवाँ , पृ• 53

8• साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, अष्टम सर्ग, पृ• {232}

9• मैथिलीशरण गुप्त, व्यक्ति और काव्य, डा0 कमलाकान्त त्रिपाठी, पृ•407

10• उर्मिला, बालकृष्णशर्मा नवीन, पृ• 349

11• वही, पृ• 365

12• राम की शक्ति पूजा, निराला , पृ• 104 {राग विराग}

13• साकेत - सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ• 141 {द्वादश सर्ग}

14• रामराज्य, बलदेवप्रसाद मिश्र, पृ• 120 {एकादश सर्ग}

15• जानकी जीवन, राजाराम शुक्ल, पृ• 403

16• भूमिजा, रघुवीरशरण मिश्र, पृ• 83

17• उर्मिला, बालकृष्ण शर्मा - नवीन, पृ• 289

18• जानकी जीवन, राजाराम गुप्त, पृ• 256

19• वैदेही वनवास, हरिऔध, पृ• 10

20• अग्निलीक, भारत भूषण अग्रवाल , पृ• 11,36

21• शबरी, नरेश मेहता, पृ• 18,35

22• कैकेयी, मणिरायपुरी शर्मा, पृ• 141

23• सीता समाधि, राजेश्वरी अग्रवाल : पृ• 96

24• साकेत-सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ• 60,61,62

25• कैकेयी, मणिरायपुरी शर्मा, पृ• 121

26• प्रवादपर्व, नरेश मेहता, पृ• 23

27• वही, पृ• 19

28• साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, एकादश सर्ग, पृ• 265

29• रामराज्य, बलदेव प्रसाद मिश्र, द्वितीय सर्ग, पृ• 34

30• साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, अष्टम सर्ग, पृ• 141

31• रामराज्य, बलदेव प्रसाद मिश्र, पंचम सर्ग, पृ• 57

32• साकेत सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, द्वितीय सर्ग, पृ• 38

33• साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, अष्टम सर्ग, पृ• {232}

34• साकेत सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, द्वादश सर्ग, पृ• 151

35• रामराज्य , बलदेव प्रसाद मिश्र, चतुर्थ सर्ग, पृ• 48

36• साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, अष्ट सर्ग, पृ• 232

37• साकेत संत, बलदेव प्रसाद मिश्र, द्वादश सर्ग, पृ• 123

38• ऊर्मिला, बालकृष्ण शर्मा नवीन, षष्ठ सर्ग, पृ• 553

39• इतिहास : स्वरूप एवं सिद्धान्त, गोविंद चन्द्र पांडे, पृ• 46

40• 'History is the story of experience of men living in civilized societies' – G. J. Renier: History, its purpose and method, 1950, 1961

41• "द हिंदू व्यू ऑफ लाइफ", डा0 राधाकृष्णन, पृ• 46

42• फादर कामिल बुल्के, राम कथा, पृ• 145

43• वाल्मीकि रामायण, 2/5/18

44• वही, पृ • 3/26/35

45• वही, 6/113/11

46• हिन्दी काव्य में राम का स्वरूप और तत्व दर्शन – डा0 ब्रह्मशंकर पुरुषोत्तम व्यास, पृ• 35,36

47• रामचरितमानस, 6/14/1-8
48• वाल्मीकि रामायण, अयोध्या काण्ड, 16/22-23
49• वही, 27/7
50• कृत्तिवास रामायण, बालकाण्ड, 1,57
51• वाल्मीकि रामायण, अयोध्या काण्ड, पृ• 385
52• तुलसीदास - रामचरित मानस, लंकाकाण्ड, पृ• 812
53• साकेत सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, चतुर्दश सर्ग, पृ• 191
54• रामचरित मानस, तुलसीदास, अरण्यकाण्ड, पृ• 653
55• वाल्मीकि रामायण, उत्तरकाण्ड, पृ• 1625
56• आनन्द रामायण - 1/1/83
57• वाल्मीकि रामायण, अयोध्या काण्ड, सर्ग• 53,7 : पृ• 33
58• वही, 18 (पृ• 334)
59• वही, 82/31
60• रामचरितचिन्तामणि, रामचरित उपाध्याय, तेरहवाँ सर्ग, पृ• 119,120
61• वैदेही वनवास , हरिऔध, पंचदश सर्ग, पृ• 209
62• साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, नवम सर्ग, पृ• 175
63• साकेत सन्त, बलदेव प्रसाद मिश्र, पृ• 54, चतुर्थ सर्ग
64• वैदेही वनवास, हरिऔध, सप्तदश सर्ग, पृ• 232
65• उर्मिला, बालकृष्ण शर्मा नवीन, द्वितीय सर्ग, पृ• 159
66• साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, पृ• 62
67• रामचरितमानस, तुलसीदास, अरण्यकाण्ड, पृ• 643
68• रामचरित चिन्तामणि, रामचरित उपाध्याय, बारहवाँ सर्ग, पृ• 110,111
69• साकेत, मैथिलीशरण गुप्त, द्वादश सर्ग, पृ• 312, 313
70• वैदेही वनवास, हरिऔध, प्रथम सर्ग, पृ• 13
71• उर्मिला, बालकृष्ण शर्मा "नवीन" पृ• 41

72· रामराज्य, बलदेवप्रसाद मिश्र, एकादशसर्ग, पृ· 127
73· संशय की एक रात, नरेश मेहता, पृ· 85
74· हिमालय - डा० महादेवी वर्मा, पृ· 27
75· "आधुनिक हिन्दी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ" से उद्धृत
डा० नगेन्द्र, पृ· 25
76· उर्मिला, बालकृष्ण शर्मा "नवीन", पृ· 458
77· वैदेही वनवास, हरिऔध, प्रथम सर्ग, पृ· 11

--

उपसंहार

रामकथा का अस्तित्व बहुत ही प्राचीन है । वैदिक साहित्य में जो उपलब्ध है उसमें राम के जीवन से संबंधित किसी घटना का संकेत प्राप्त नहीं है । वैदिक साहित्य में यत्र-तत्र राम कथा के कुछ पात्रों का उल्लेख मिलता है लेकिन राम कथा का रूप कहीं नहीं दृष्टिगोचर होता है । ऋग्वेद में इक्ष्वाकु, दशरथ और राम इन तीनों नामों का उल्लेख हुआ है किन्तु उनका संबंध सीधे राम कथा से नहीं जुड़ता । वाल्मीकि कृत रामायण के पूर्व राम - कथा मौखिक रूप में प्रचलित थी । ऐसा फादर कामिल बुल्के का कथन है । आपने यह स्पष्ट प्रतिपादित किया है कि रामायण की कथा के पूर्व राम कथा कुशीलव वंशज द्वारा मौखिक रूप में यत्र-तत्र गाई जाती थी । प्राप्त प्रमाणों के आधार पर यही कह सकते हैं कि वाल्मीकि रामायण द्वारा ही राम कथा का सूत्रपात हुआ, क्योंकि यही राम कथा सम्बन्धी उपलब्ध प्रथम कृति है । वाल्मीकि ने राम को एक महापुरुष के रूप में चित्रित किया है, क्योंकि उस समय अवतारवाद की धारणा का विकास नहीं हुआ था । लेकिन राम को अनेक स्थलों पर विष्णु अथवा इन्द्र के उपमानों से अवश्य विभूषित किया है । विष्णु पुराण, भागवत पुराण, नारद पुराण आदि पुराणों में राम, लक्ष्मण आदि को अवतार माना गया है । आध्यात्म रामायण में राम को ईश्वर का अवतार एवं सगुण ब्रह्म माना गया है । जैन राम कथा में राम को आदर्श चरित्र के रूप में जैनियों ने देखा है । अपभ्रंश में स्वयम्भू, गुणभद्र की रचना में राम कथा का वर्णन जैन और बौद्ध धर्मों के अनुरूप ही हुआ है । बौद्धों ने राम कथा को अपनी जातक कथाओं में बौद्ध दर्शन के अनुकूल रूप प्रदान किया । हिन्दी राम काव्य की परम्परा की चर्चा तुलसीदास के बिना समाप्त नहीं की जा सकती है, क्योंकि तुलसी ने इसे गौरव के उन्नत शिखर पर बिठाया है । तुलसी ने राम को एक

के रूप में देखा

...कर राज्याभि

...के राम पर कृष्ण का प्रभाव है । सूर के राम काव्य के पदों में माधुर्य और सौन्दर्य की संश्लिष्ट योजना मिलती है । वह मूलतः भावात्मक राम कथा है । केशवदास की "रामचन्द्रिका" के राम दरबारी राम हैं । केशव के राम सीता के साथ वाटिका में सैर करते हुए दिखलाई देते हैं । अर्थात् केशव के राम ने परम्परागत रूपरेखा की रक्षा की है फिर भी राज्याभिषेक के बाद राम को श्रृंगारी मनोवृत्ति के एक राजा के रूप में चित्रित किया है । भारतेन्दु युग से हिन्दी साहित्य को नवीन दृष्टिकोण प्राप्त हुआ है । राम काव्य के रूप में भारतेन्दु की रचना "दशरथ विलाप" उपलब्ध होती है । यह खड़ीबोली का प्रथम काव्य माना जाता है । भारतेन्दु ने रामचरित से सम्बन्धित "रघुवंश" का हिन्दी गद्यानुवाद किया है । राम काव्य के उपर्युक्त सिंहावलोकन से यह स्पष्ट होता है कि थोड़े बहुत अन्तर से सभी भाषाओं के राम-काव्य की मूल प्रेरणा धार्मिक है । समाज में बदलते हुए परिवेश के अनुसार राम-काव्य के विकास की प्रवृत्ति मानवतावाद की ओर रही है । आधुनिक हिन्दी साहित्य में राम कथा के अन्तर्गत रामचरित चिन्तामणि, साकेत, राम की शक्ति पूजा, वैदेही वनवास, साकेत सन्त, अशोक वन, रावण महाकाव्य, कैकेयी, ऊर्मिला, रामराज्य, भूमिजा, शबरी, जानकी जीवन, संशय की एक रात, प्रवादपर्व, अग्निलोक, शम्बूक और सीता-समाधि में राम कथा में आधुनिक ज्वलंत समस्याओं को लेकर अभूतपूर्व संदर्भ जुड़े हैं ।

आधुनिक राम-काव्यों में प्राचीन परम्परा को एकदम दुहराया नहीं गया है । राम काव्यों का समसामयिक युग में अधिक महत्व रहा जिसके द्वारा

पर खुले रूप से

. आदि । इन

म्बूक, शबरी, सीय को एक ....

.. ..री आदि है । आधुनिक कवियों ने अधिकांश रूप से राम कथा को नवीन दिशाएं एवं दृष्टि प्रदान की है ।

उपेक्षित पात्रों के चरित्रोद्घाटन में नारी पात्रों का विशेष महत्व रहा है । श्री रवीन्द्रनाथ टैगोर के -- "काव्येर उपेक्षिता उर्मिला" नामक लेख से प्रभावित होकर गुप्तजी के पथ प्रदर्शक महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने सरस्वती नामक पत्रिका 1908 के अंक में "कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता" के शीर्षक से एक निबन्ध लिखा । उस लेख में कहा कि "खेद की बात है कि उर्मिला का उज्वल चरित्र कवियों के द्वारा आज तक उसी तरह अछूता रह गया । " इसकी प्रेरणा के फलस्वरूप गुप्तजी ने "साकेत" के द्वारा उस कमी को पूरा किया है । गुप्त जी ने अपने उद्देश्य के अनुसार उर्मिला को उपेक्षिता से नवीन भाव भूमि पर लाते हुए लक्ष्मण को भी पति रूप में नवीन रूप में उभारने में सफलता प्राप्त की । आधुनिक कवियों ने राम कथा के उपेक्षित पात्रों के प्रति प्रेरित होकर विभिन्न उपेक्षित पात्रों को केन्द्र में रखकर अनेक काव्यों का सृजन किया । जैसे "साकेत", उर्मिला, साकेत-सन्त, भूमिजा, अग्निलोक, जानकी - जीवन, शबरी, कैकेयी, प्रवादपर्व, रावण महाकाव्य आदि । इन काव्यों में राम काव्य के प्रमुख पात्रों को परंपरागत चरित्र से अलग नवीन सन्दर्भों से जोड़ा गया । उर्मिला को सीता से भी अधिक महान बना दिया गया । सीता राम के साथ वन में राम के संसर्ग में रहीं तो उर्मिला का त्याग सीता से कहीं अधिक चौदह वर्षों तक अयोध्या में एकाकी

ए देखा गया

ष्ट्र की रक्षा

पूर्व विचारों की परिकल्पना की गई । श्री भारत भूषण अग्रवाल ने "अग्निलीक" में सीता द्वारा राम के सीता त्याग पर प्रश्न चिन्ह लगाया। सीता के रूप में आधुनिक नारी का मुक्ति आंदोलन दिखाई पड़ता है । "प्रवादपर्व" की सीता अपहृत स्वतन्त्रता की प्रतीक बन गई । इतना ही नहीं "रावण महाकाव्य" में रावण के चरित्र को उज्ज्वल रूप में रेखांकित किया गया । विभिन्न राम कथा के पात्रों में श्लाघनीय परिवर्तन करके युगीन परिप्रेक्ष्य में नवीन दिशा एवं दृष्टियाँ प्रदान की गई ।

राम कथा सामाजिक धरातल के यथार्थ से जुड़ी हुई है । तुलसीदास में भी प्रगतिशील सामाजिक चेतना की धुन सुनायीपड़ती है । वास्तव में आधुनिक राम-काव्य पर समाजवाद का परोक्ष रूप से प्रभाव पड़ा है । यह प्रभाव सामाजिक और आर्थिक समानता की धारणाओं शोषण निंदा, दलित वर्ग के प्रति सहानुभूति व वीभत्सता के चित्रण रूप में है । आज के प्रणेताओं ने अपने आदर्शों के अनुकूलही समाजवादी तत्वों को पाया है । सामाजिक दृष्टियों के अंतर्गत वर्ण व्यवस्था, मानवतावाद, पारिवारिक सम्बन्ध, नारी भावना, शोषण व्यवस्था का चित्रण प्रस्तुत है । आधुनिक कुछ कवियों ने समाज की प्राचीन वर्ण-व्यवस्था का समर्थन किया है और कुछ ने विरोध किया है । भारतीय सामाजिक संरचना के अन्तर्गत जातियों के विकास में व्यवसायों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है । लेकिन प्राचीन काल से अब तक किसी ने दलित समस्या को नहीं उठाया है । यह भावना प्राचीनकाल से है लेकिन इसे एक समस्या के रूप में उभारना आधुनिक दृष्टि बन गई है ।

यह विचार आधुनिक युग की ज्वलंत समस्या है । श्री मैथिलीशरण गुप्त ने वर्ण व्यवस्था का समर्थन किया है तो श्री जगदीशगुप्त ने अपने काव्य "शंबूक"

कहा है । श्ा

सि हू आर शूद्र हूँ । मेरी . . . .

. . . तप करने के लायक नहीं हूँ । क्या ब्राह्मण के पुत्र ही लायक है । ऐसा है तो ये बताओ कि तुम्हारा रंग भी श्यामल वर्ण है, तुम तप के योग्य हो अथवा नहीं ?" इस प्रकार यह संदर्भ निम्न जाति के व्यक्ति का राम से सवाल करना एक क्रांतिकारी सूझ है एवं आज की वर्ण व्यवस्था में दलित विचारधारा की प्रेरणा का सूत्रपात है । "शबरी" काव्य में नरेश मेहता ने निम्न जाति की शबरी को युगीन संदर्भ में देखा है । शबरी उच्चवर्ण वालों के अत्याचार के प्रति विद्रोह प्रकट करती है । अस्पृश्यता हिन्दू समाज का कलंक है जिसके मूल में वर्ण व्यवस्था है । नरेश मेहता ने समाज के इस कलंक का निवारण करने का प्रयत्न "शबरी" के प्रसंग से किया है ।

पारिवारिक सम्बन्ध के दो अंग है । पहला है दाम्पत्य जीवन का आदर्श और दूसरा परिवार के अन्य सदस्यों से सम्बन्ध । प्राचीन परंपरा है कि पत्नी सदा पति सेवा करती रहे और अपना जीवन पति को समर्पित कर दे । पत्नी के लिए पति ही सर्वस्व है । अतः भारतीय समाज में नारी का स्थान पवित्र है । नारी को शक्ति स्वरूपिणी के रूप में पूजा हुई है । भारतीयों का विश्वास है कि "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।" कुछ आधुनिक राम काव्यों में जहाँ तक दाम्पत्य जीवन के आदर्श की बात है, जैसे साकेत, कैकेयी, साकेत सन्त, सीता समाधि, जानकी जीवन, ऊर्मिला आदि में पत्नी को भारतीय आदर्श के अनुसार पति की सेवा में ही उसके जीवन को सार्थक और कुछ काव्यों में इसे समानता दी गई है । वैदेही वनवास में हरिऔध जी ने पति-पत्नी के सम्बन्ध-विच्छेद को एक निंदनीय

ो आधुनिक ः

. . . . . ो में नारी

प्रधान होने के कारण उसकी अपनी कुछ सीमाएं हैं । आधुनिक स्त्री-पुरुषों से बराबरी का : उ माँग रही है । ये विचार "अग्निलीक" की सीता में स्पष्ट है । भारत भूषण अग्रवाल कीसीता आधुनिक युग की नारी की मानसिकता की प्रतीक है । आधुनिक राम काव्यों में नारी की मानसिकता परम्परागत एवं आधुनिक दोनों रही है । रघुवीर शरण मिश्र ने "भूमिजा" में नारी को प्रलय मचाने वाली आदि शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है । निराला ने राम के द्वारा शक्ति की पूजा करायी है । आधुनिक प्रगतिवादी विचारधारा की नारी को उसके प्रकृति क्षेत्र से हटाकर उसे समाज में पुरुष की समकक्षता में खड़ा करना चाहते हैं, जिसके अन्तर्गत आधुनिक कवियों ने नारी की समानता की भावना, स्वतन्त्र नारी, स्वच्छंद नारी, समसामयिक नारी, नारी की उदासीनता आदि के रूप में चित्रण किया है ।

परिवार के अन्य सदस्यों से संबंधों को परम्परागत रूप में ही दुहराया गया है । आज के युग में जहाँ परिवार टूट गये है, विशेषकर संयुक्त परिवार का कोई रूप नहीं रहा है, आधुनिक राम काव्य में कवियों ने इस ओर ध्यान नहीं दिया है ।

आधुनिक युग में प्रजातंत्र में व्यष्टि से समष्टि में प्रधानतादेते हैं । यह विचार शम्बूक, साकेत सन्त, प्रवादपर्व में अभिव्यक्त है । आधुनिक रामकाव्य पर समाजवाद का परोक्ष प्रभाव पड़ा है । आधुनिक राम काव्य के काव्यकारों ने अपने आदर्शों के अनुकूल ही समाजवादी तत्वों को स्वीकार किया है, जो साकेत, वैदेही वनवास, कैकेयी, रामराज्य, प्रवादपर्व, उर्मिला,

ाव्यों में वि

ाधुनिक राम

ान दिया गया है । परंपरागत रामराज्य राजतंत्र होते हुए भी प्रजातंत्र का एक आदर्श रूप है । जिसे आधुनिक कवियों ने राम कथा के माध्यम से स्थापित करने का प्रयत्न किया है । इस प्रकार के संदर्भ शंबूक, उर्मिला जानकीजीवन, भूमिजा, संशय की एक रात में दृष्टिगोचर होते हैं ।

युद्ध होना एक प्राकृतिक प्रक्रिया है । युग की विचारधारा के अनुरूप आधुनिक राम काव्यों मेंयुद्ध की अनिवार्यता और युद्ध की विभीषिका दोनों को रेखांकित किया गया है । युद्ध में हिंसात्मक दृश्यों का वर्णन प्राचीन राम काव्यों की तुलना में आधुनिक राम काव्यों में कम प्राप्त होता है । श्री नरेश मेहता ने "संशय की एक रात" में युद्ध और शांति की समस्याओं पर विवेचन किया है । नरेश मेहता के इसी काव्य में युद्ध से सम्बन्धित अनेक प्रसंग मिल जाते हैं । भूमिजा, रावण महाकाव्य, जानकी जीवन, अशोक वन में युद्ध का वर्णन है । वैदेही वनवास में युद्ध के द्वारा होने वाले परिणामों को, कैकेयी में हिंसा भावना को, सीता समाधि में अणु ऊर्जा के सम्बन्ध में, अग्निलीक में युद्ध लिप्सा, प्रवादपर्व में शोषण के विरुद्ध किए गए युद्ध को स्पष्ट किया गया है ।

आधुनिक काव्यों में राम का राज्य सब के लिए कल्याणकारी एवं नीति-परायण योद्धा का राज्य है । राम राज्य के अन्तर्गत राजा और प्रजा का सम्बन्ध, अहिंसा, शांति, राष्ट्रीयता एवं विश्व बंधुत्व की भावना, विश्वशांति, पंचायती राज्य, सर्वोदय आदि का होना अनिवार्य है ।

मान्यता के ः

आत्मा अपनी वास्तविकता [illegible]
मानवता का पर्याय बन गई है जहाँ वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना प्रधान है। आधुनिक रामकाव्यों में मानवतावाद एवं समाजवाद की प्रेरणा ध्वनित होती है। राम एक महान मानव के प्रतीक है न कि विष्णु के अवतार।

रामकथा के अनेक पात्र भी राम के साथ महनीय बन गये हैं। आज राष्ट्रीयता या राष्ट्रीय एकता हमारी राजनीति का महत्वपूर्ण अंग बन गई है। आधुनिक राम काव्य में राष्ट्रीयता का पर्याप्त चित्रण किया गया है। इन काव्यों में भारत के समृद्ध और गौरवपूर्ण अतीत एवं वर्तमान स्थिति का चित्रण किया गया है। राष्ट्रीयता में देश प्रेम से सम्बन्धित उदाहरण प्राचीन राम काव्य की तुलना में आधुनिक राम काव्यों में ढेर सारे मिल जाते हैं। उस में राम चरित चिन्तामणि, भूमिजा, उर्मिला, सीता-समाधि, जानकी जीवन, प्रवादपर्व आदि उल्लेखनीय है।

हिन्दी साहित्य राम कथा का जितना ऋणी रहा है उतना किसी भी पौराणिक कथाओं का नहीं। इसका एक विशेष कारण है कि राम कथा बहुत विस्तृत है और उसमें अनेक संभावनाएं हैं। राम कथा ने हिन्दी साहित्य के प्रत्येक युग को युगानुरूप वैचारिक दृष्टि प्रदान की है। आधुनिक हिन्दी साहित्य में तो युग की सभी विचारधारा राम कथा के माध्यम से सफलीभूत हुई है। इसी विचार से ओत-प्रोत होकर मैथिलीशरण गुप्त ने तो यहाँ तक कह डाला :-

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है,
कोई कवि बन जाय, सहज सम्भाव्य है।

रामायण में रा

... राम के रूप में अवता

...त्मक रूप मिल गया । संस्कृत साहित्य में राम के मानवीय स्वरूप को ही प्रमुखता है । भक्ति आन्दोलन के प्रभाव से राम के ईश्वरत्व से ही अधिक महत्त्व मिला । तुलसीदास ने भगवान राम का भावात्मक गुण-गान किया । रीतिकाल में भक्ति की यह परम्परा चलती रही, लेकिन उसमें संस्कृत शृंगारात्मक पक्ष का प्रभाव है । आधुनिक युग में भक्ति की परम्परा का लगभग अन्त हो जाता है और राम-कथा युगानुरूप नया भाव-बोध उपस्थित करने का माध्यम बन गयी है ।

—

सहायक

(क) आधार ग्रन्थ :

1. पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध" , वैदेही वनवास
हिन्दी-साहित्य कुटीर, वाराणसी. । पंचम संस्करण - 2015 वि.

2. श्री गोकुलचन्द्र शर्मा, अशोक वन, हिन्दी प्रकाशन मन्दिर,
इलाहाबाद । संस्करण : 1951

3. श्री जगदीशगुप्त - शम्बूक, लोकभारती प्रकाशन, 15-ए,
महात्मा मार्ग, इलाहाबाद -1, प्रथम संस्करण- 1977

4. श्री नरेश मेहता - संशय की एक रात, लोकभारती प्रकाशन,
15-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1, संस्करण : 1994

5. श्री नरेश मेहता - प्रवादपर्व, लोकभारती प्रकाशन, 15-ए,
महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1, संस्करण - 1977

6. श्री नरेश मेहता, शबरी, लोक भारती प्रकाशन, 15-ए,
महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1, संस्करण - 1994

7. श्री बालकृष्ण शर्मा "नवीन," उर्मिला (प्रबन्ध काव्य)
अत्तरचन्द कपूर एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली ।
प्रथम संस्करण - 1957

। प्रसाद मिश्र,

... । प्रथम संस्क

9• पं• बलदेव प्रसाद मिश्र, रामराज्य, हिन्दी साहित्य भंडार, गंगाप्रसाद रोड, लखनऊ । प्रथम संस्करण – रामनवमी सं• 2017

10• श्री भारत भूषण अग्रवाल, अग्निलोक, राजकमल, प्रकाशन – नई दिल्ली, पटना । संस्करण – 1976

11• श्री मैथिलीशरण गुप्त, साकेत, साकेत प्रकाशन, राष्ट्र कवि निवास, चिरगाँव, झाँसी । संस्करण : 1992

12• पं• रामचरित उपाध्याय, रामचरित – ग्रंथावली, जनपद हिन्दी साहित्य सम्मेलन, ईशावास्यम्, आजमगढ़, उत्तर प्रदेश ।
प्रथम संस्करण : सन् 1974 ई•

13• श्री रघुवीर शरण मित्र, भूमिजा, भारतीय साहित्य प्रकाशन, मेरठ ।
संस्करण : 1961

14• श्रीमती राजेश्वरी अग्रवाल, सीता-समाधि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली । प्रथम संस्करण – 1978

15• राजाराम "शुक्ल" "राष्ट्रीय आत्मा", जानकी जीवन, ग्रन्थम प्रकाशन, सरस्वती सदन आनन्दबाग, कानपुर । प्रथम संस्करण : जुलाई 1971

।शर्मा "मधिर

17• श्री सूर्यकांत त्रिपाठी "निराला", राम की शक्ति पूजा,
{राग विराग} लोक भारती प्रकाशन, 15-ए, महात्मागांधी मार्ग,
इलाहाबाद -1, संस्करण : 1980

18• श्री हरदयालु सिंह, रावण महाकाव्य, रामलाल पुरी, आत्माराम
एण्ड संस, काश्मीरी गेट, दिल्ली-6, संस्करण -1952

{ख} हिन्दी ग्रन्थ :

1• डा0 अमरपाल सिंह, तुलसी पूर्व राम साहित्य, इलाहाबाद,
संस्करण - 1968

2• डा0 आशा भारती, राम कथा के उपेक्षित नारी पात्र, इतिहास -
शोध - संस्थान, महरौली, नई दिल्ली-110030, प्र•सं• 1986

3• डा0 आशागुप्त, मैथिलीशरण गुप्त का काव्य, : सांस्कृतिक अध्ययन,
अन्नपूर्णा प्रकाशन, 106/154, गांधीनगर, कानपुर-12, प्रथम संस्करण : 1979

4• श्रीमती आशा भारती, राम काव्य परम्परा विकास और प्रभाव,
शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण

5• डा0 उमेशचन्द्र मधुकर, उत्तर हिन्दी राम-काव्य धारा, जानकी प्रकाशन,
पटना, नई दिल्ली । प्र•सं• 1986

ठक्‌) त्रिपाठी
एण्ड पब्लिशर्स

) कामिल बुल्के, राम कथा (उत्पत्ति और विकास)
हिन्दी परिषद प्रकाशन, प्रयाग विश्वविद्यालय । प्र०सं० 1950 ई०

8० डा० कैलाश चन्द्र जैन, प्राचीन भारत का सामाजिक सांस्कृतिक और मौलिक अध्ययन, श्री पब्लिशिंग हाउस, 10149, कटरा छज्जू पण्डित, मोहन बस्ती, नई दिल्ली - 110005, संस्करण : 1986

9० कृत्तिवास रामायण (बंगला), भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ-3, संस्करण : जुलाई 1975 ई०

10० केशवदास - रामचन्द्रिका

11० श्री गोस्वामी तुलसीदास, श्री रामचरितमानस, गीता प्रेस गोरखपुर संस्करण : संवत् : 2040

12० गोस्वामी तुलसीदास, विनय पत्रिका , विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा । पंचम संस्करण - 1973

13० श्री गोविंद चन्द्र पाण्डे, इतिहास : स्वरूप एवं सिद्धान्त, प्रथम संस्करण : 1773

14० डा० गोविन्द राम शर्मा, हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य

15० चन्दबरदाई, पृथ्वीराज रासो, साहित्य सदन, चिरगांव (झांसी) संस्करण : सं० 2020 वि०

नारायण मूर्ति
लनात्मक अध्य
टियाँ रोड, चौक लखनऊ-3, प्रथम संस्करण - फरवरी 1975

17• जानड्यूई, अनुवाद : कृष्णचन्द्र, नैतिक जीवन का सिद्धान्त, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली । प्र•सं• 1959

18• श्री झारखण्डे चौबे, इतिहास दर्शन, विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक वाराणसी, प्र•सं• : 1984

19• डा० देवीप्रसाद गुप्त, हिन्दी में आधुनिक पौराणिक महाकाव्य, उपमा प्रकाशन, उदयपुर । प्रथम सं• 1972 ई•

20• डा० नगेन्द्र, आधुनिक हिन्दी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, संस्करण : 1968 प्र•सं•

21• श्री नन्ददुलारे वाजपेयी, आधुनिक साहित्य, भारती भंडार, इलाहाबाद, संस्करण - 1965

22• आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, राष्ट्रीयता, गयाप्रसाद एण्ड सन्ज, आगरा संस्करण : 1961

23• श्री नवल किशोर, मानववाद और साहित्य, राधाकृष्ण प्रकाशन, 2• अन्सारी रोड, दरियागंज, दिल्ली-6, प्र•सं• 1972

24• श्री नामवर सिंह, अपभ्रंश का राम - साहित्य (राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ) मैथिलीशरण गुप्त अभिनंदन समिति ।
संस्करण : 1959 ई•

ूरजहाँ बेगम,

ाव, जवाहर पु

26• प्रो• नूरजहाँ बेगम, हिन्दी साहित्य में रूपक कथा-काव्य, उद्भव और विकास, भारतीय विद्या प्रकाशन, वाराणसी-221001, प्र•सं• : 1990

27• डा0 परमलाल गुप्ता, हिन्दी के आधुनिक राम काव्य अनुशीलन, रचना प्रकाशन, खुल्दाबाद, इलाहाबाद, संस्करण : 1973

28• डा0 बनवारी लाल शर्मा, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी प्रबंध काव्य

29• डा0 प्रभाकर पुरुषोत्तम व्यास, "हिन्दी काव्य में राम काव्य स्वरूप और तत्व दर्शन", पराग प्रकाशन दिल्ली । संस्करण : 1984

30• श्री भवानी प्रसाद मिश्र, कुछ नीति कुछ राजनीति, प्रभात प्रकाशन, चावड़ी बाजार, दिल्ली-110 000, प्र•सं•: 1983

31• डा0 भगवानदास वर्मा, जननायक राम, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23, दरियागंज, नयी दिल्ली , प्र•सं• : 1988

32• डा0 भट्ट टी•आर, शंबूक और शुद्ध तपस्वी एक मूल्यांकन, ज्ञानोदय प्रकाशन, "प्रज्ञाश्री" कल्याण नगर, धारवाड - 580 007, प्र•सं• 1989

33• डा0 मदन गुलाटी, हिन्दी राम काव्य विविध आयाम, जनप्रिय प्रकाशन, विश्वास नगर, दिल्ली - 110032, प्र•सं• 1987

[illegible]0 यशपाल, मार्क्सवाद, विप्लव कार्यालय, 21 शिवाजी मार्ग, लखनऊ -1, प्र॰सं॰ 1940

36• डा0 रामकुमार वर्मा, हिन्दी साहित्य आलोचनात्मक इतिहास, रामनारायणलाल बेनीमाधव, प्रकाशक तथा पुस्तक विक्रेता । 2• कटरा, इलाहाबाद- -2, छठवाँ संस्करण - 1971

37• आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी । संस्करण : सं॰ 2045

38• श्री राधा कुमुद मुकर्जी, हिन्दू संस्कृति में राष्ट्रवाद, एस॰ चन्द कम्पनी, नई दिल्ली-1, संस्करण : 1975

39• डा0 रामप्रकाश अग्रवाल, "वाल्मीकि और तुलसी : साहित्य मूल्यांकन", प्रकाशन प्रतिष्ठान, सुभाष बाजार, मेरठ, संस्करण : 1966

40• श्री रामधारी सिंह "दिनकर", संस्कृति के चार अध्याय, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली - । प्र॰सं॰ : 1956

41• श्री रामस्वरूप दुबे, साकेत - सुधा, वाणी मुद्रण कार्यालय, रामबाग, कानपुर । पंचम संस्करण

42• सं॰ राहुल सांकृत्यायन, हिन्दी काव्य धारा , किताब महल, प्रयाग ।

43• डा0 राजेश्वर भ॰इ॰, रामकथा के पात्र, ग्रन्थम प्रकाशन कानपुर-12,1972

·एच· रामुलु, य

एकता (हिन्दी – तेलुगु काव्य चिन्तन में) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के बृहद परियोजन सहायता प्राप्त शोध प्रबंध, अप्रकाशित ।

45· वेदव्रत सुधीर, भारतीय संविधान और राजनीति, प्रिन्टवैल पब्लिशर्स, तिलक नगर, जयपुर – 302004, प्र·सं· 1987

46· डा० विनय, समकालीन हिन्दी कविता – संवाद सन्मार्ग प्रकाशन, 16, यू·बी· बैंग्लो रोड, दिल्ली–110007, संस्करण : 1983 (प्रथम)

47· डा० विश्वम्भर दयाल अवस्थी, "छायावादोत्तर हिन्दी प्रबन्ध काव्यों का सांस्कृतिक अनुशीलन", सरस्वती प्रकाशन मंदिर, 66, नया बैरहना– इलाहाबाद । प्र·सं· : 1976

48· श्री शम्भूरत्न त्रिपाठी, गांधी जी की सामाजिक संरचना का सिद्धान्त, साहित्य भारती, डी–41, बनीपार्क – जयपुर–6

49· डा०श्यामबहादुर वर्मा, श्री अरविन्द विचार दर्शन, अरविन्द प्रकाशन दिल्ली–5, संस्करण –

50· डा० सर्वेपल्लि राधाकृष्णन, प्राच्य धर्म और पाश्चात्य विचार, राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली । द्वितीय संस्करण : 1970

51· डा० संतोष कुमार तिवारी, गांधी जी का दिल्ली डायरी – तथा दिल्ली का स्वतन्त्रता संग्राम, भाग–1 , भारतीय ग्रन्थ निकेतन 133, लाजपतराय मार्केट, दिल्ली–110006, प्र·सं· : 1974

ॅवेदी, राम -
1 - सृजन परि
रण : 1978 ई०

53. डा० सुधा गुप्ता, विभिन्न युगों में सीता का चरित्र-चित्रण, प्रज्ञा प्रकाशन, नयी दिल्ली - 110003, प्र०सं० 1978

54. सूरदास, सूर सागर, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, चतुर्थ संस्करण - 2028 वि०

55. सम्पादक डा० सुरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव, "भारत में सामाजिक आन्दोलन और परिवर्तन, विश्वविद्यालय प्रकाशन, विशालाक्षी भवन, चौक वाराणसी, प्रथम संस्करण - 1947

56. डा० लक्ष्मीनारायण दुबे, रामकाव्य के प्रगतिशील आयाम, सत्येन्द्र प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण प्रथम : 1982

57. डा० कुसुम चन्द राजपाल, आधुनिक काव्य में नवीन जीवन - मूल्य (राम और कृष्ण काव्य परम्परा का विशिष्ट अध्ययन) दीपक पब्लिशर्ज़, जालन्धर शहर । प्र०सं० 1992

<u>संस्कृत ग्रन्थ</u>

1. ऋग्वेद

2. पद्मपुराण : संस्कृति संस्थान, वेदनगर, बरेली - उ०प्र० संस्करण : 1977

3. मनुस्मृति : मोतीलाल बनारसीदास, 1966, प्र०सं०

गीता प्रेस, ग

... रामायण - मिट

... वाल्मीकि रामायण, गीता प्रेस, गोरखपुर,
ग्यारहवाँ संस्करण, संवत् 1942

7. विष्णु पुराण - संस्कृति संस्थान, वेदनगर, बरेली ।
(उ.प्र.) संस्करण : 1975

8. स्कन्द पुराण : संस्कृति संस्थान, वेदनगर, बरेली (उ.प्र.) संस्करण-1976

पत्र-पत्रिकाएं :

1. तुलसी-मानस भारती	-	सितम्बर-1995, जनवरी 1976, जनवरी-1994, नवम्बर-1996, तुलसी मानस भारती प्रतिष्ठान मध्य प्रदेश ।
2. सरस्वती पत्रिका	-	जुलाई - 1908, इंडियन प्रेस, प्रयाग ।
3. नवनीत	-	मार्च 1960 भारतीय विद्या भवन, क.मा. मुंशी मार्ग, बम्बई-7
4. त्रि. दशाब्दी समारोह स्मारिका	-	फरवरी - 1997 आन्ध्र विश्वविद्यालय, विशाखापट्टणम ।

ग्रन्थ

1. JAMES W - Varieties of Religious Experience

2. Max Muller - 'A History of Ancient sanskrit Literature' Varanasi - 1968

3. Dr. Radhakrishnan S.- The Hindu view of Life

4. Renier G.J. - History - Its purpose and Method 1990-1961.

5. Singh G.N. - Fundamentals of political Science and organisation.

6. Weber A - On the Rumangyana, Bombay, 1873

7. Zimmern - Nationality and Government